अंतरदेश

जुलाई 2022
विक्रम संवत 2079

सरहदों के पार
हिंदी का संसार

प्रवेशांक

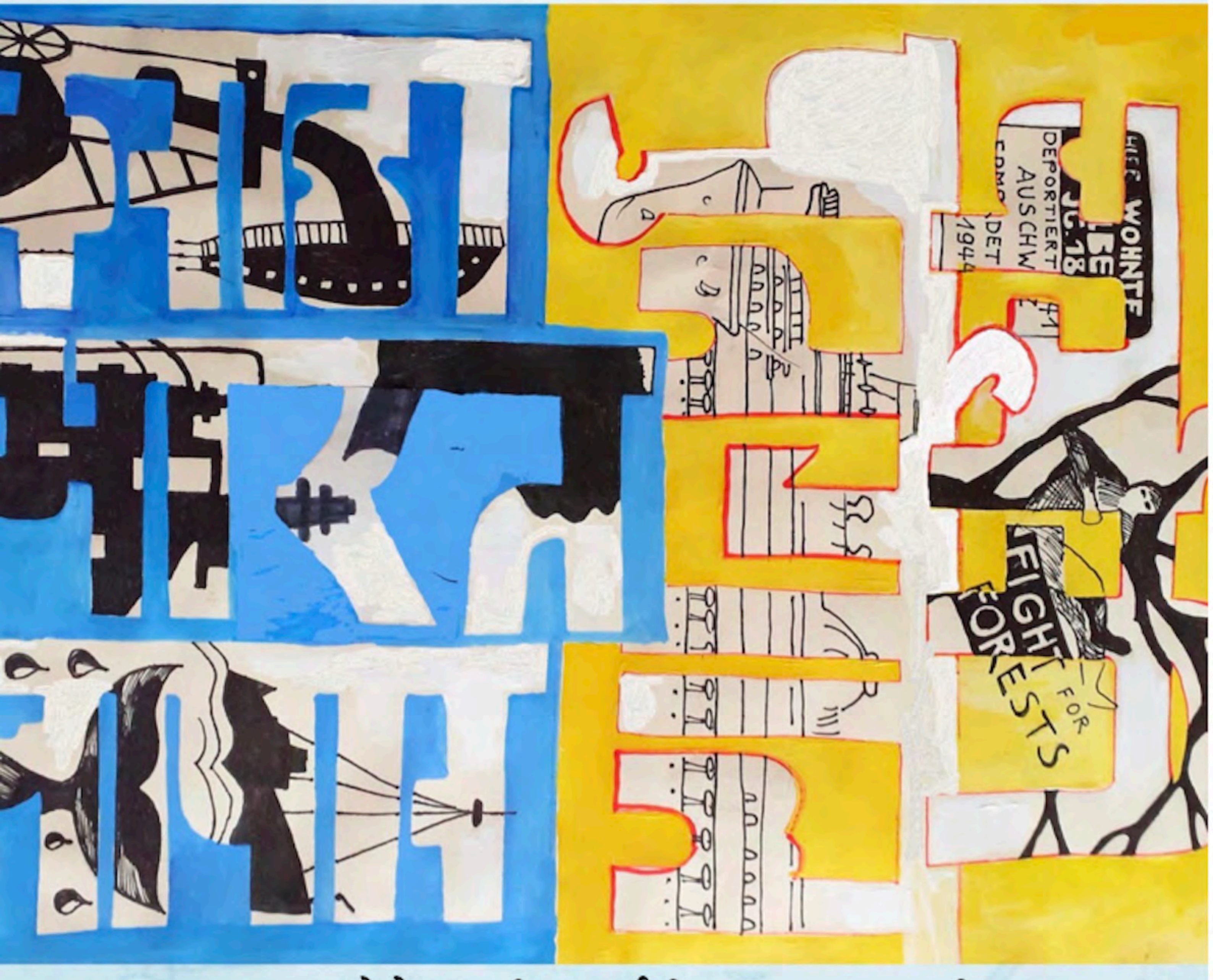

इस बार कैनेडा, चीन, जर्मनी, जापान, बल्गारिया,
पुर्तगाल और स्विट्ज़रलैंड से

अंतरदेश

सरहदों के पार हिंदी का संसार

संपादक मंडल (अवैतनिक):

अडेलै हेनिश-टेम्बे, लाइप्त्सिग विश्वविद्यालय, जर्मनी, adele_hennig@gmx.de
आनंद वर्धन शर्मा, सोफ़िया विश्वविद्यालय, बल्गारिया, anandsharma_64@yahoo.co.in
एरिका करांति, तूरीन विश्वविद्यालय, इटली, erika.caranti@gmail.com
राम प्रसाद भट्ट, हैम्बर्ग विश्वविद्यालय, जर्मनी, ram.prasad.bhatt@uni-hamburg.de
वेद प्रकाश सिंह, ओसाका विश्वविद्यालय, जापान, singh.ved.prakash.hmt@osaka-u.ac.jp
शिव कुमार सिंह, लिस्बन विश्वविद्यालय, पुर्तगाल, shivsingh@campus.ul.pt
हंसा दीप, यूनिवर्सिटी ऑफ़ टोरंटो, कैनेडा, hansa.deep@utoronto.ca
ली यालान, बेइजींग फ़ॉरन स्टडीज़ युनिवर्सिटी, चीन , liyalan@bfsu.edu.cn

प्रवेशांक संपादक:

दिव्यराज अमिय

समन्वयक: *प्रोजेक्ट साथ साथ* और *कर्मेन्दु शिशिर शोधागार*

Karmendu Shishir Shodhagar | University of Tübingen (uni-tuebingen.de)
त्युबिंगन विश्वविद्यालय, जर्मनी और ज़्यूरिख विश्वविद्यालय, स्विट्ज़रलैंड, divyaraj.amiya@uni-tuebingen.de

भाषा संपादन:

चंद्रिका, chandrika.media@gmail.com
Birchindia, भारतीय भाषाओं में अनुवाद और शोध सहयोग एजेंसी

गंगाशरण सिंह, gangasharansingh1974@gmail.com
स्वतंत्र लेखन, महाराष्ट्र

स्थायी संपर्क पता:

नॉटनल, स्वत्वाधिकार © 2022
16/1454, इंदिरा नगर, लखनऊ- 226016, उत्तर प्रदेश, भारत
antardesh.patrika@gmail.com

अंतरदेश से जुड़े क़ानूनी विवाद लखनऊ उच्च न्यायालय के अधिकार क्षेत्र में आएँगे। मौखिक और लिखित रचनाओं और कृतियों में व्यक्त विचार रचनाकारों के निजी विचार हैं, संपादक मंडल के नहीं।

विषय सूची

संपादकीय

विशेष

हिंदी का वैश्विक परिप्रेक्ष्य : जर्मनी में हिंदी का इतिहास 15

राम प्रसाद भट्ट

हैम्बर्ग विश्वविद्यालय, जर्मनी

रेणु की जन्मशती पर दो लेख

रेणु : एक पुनर्मूल्यांकन 40

हाइन्त्स वर्नर वेस्लर

उप्साला विश्वविद्यालय, स्वीडन

मैला आँचल के बहाने हिंदी-जापानी अनुवाद की कुछ समस्याएँ 47

मिकि यूइचिरो

हिरोशिमा, जापान

हिंदी पढ़ने-पढ़ाने का अनुभव: अहिंदी भाषी अध्यापक

हम हिंदी के माहिर बनने के बजाय भाषा की भूलभुलैया में खोए और हिंदी सीखने में उम्र क़ैदी क्यों बने रहेंगे? 56

अडेलै हेनिश-टेम्बे

लाइप्सिग विश्वविद्यालय, जर्मनी

एक जापानी विद्यार्थी और मेरे नाट्य-जीवन के कुछ अनुभव 61

तोमिओ मिज़ोकामी

ओसाका विश्वविद्यालय, जापान

मेरा हिंदी पढ़ने और पढ़ाने का अनुभव 67

लक्ष्मी रेखा शर्मा

हैम्बर्ग विश्वविद्यालय, जर्मनी

बहुसंस्कृति के परिवेश में हिंदी अध्यापन के अनुभव 70

हंसा दीप

यूनिवर्सिटी ऑफ़ टोरंटो, कैनेडा

ललित निबंध

एक आगे, एक पीछे : न अभिमान, न अपमान 74

दीप्ति वागले

यूनिवर्सिटी ऑफ टोरंटो

हँसिए, सेहतमंद रहिए 77

इसरा कुरैशी,

यूनिवर्सिटी ऑफ टोरंटो

कोरोना का कहर 79

श्रेया टंगुटूरी

यूनिवर्सिटी ऑफ टोरंटो

वटवृक्ष 82

सारा वायहिंग

त्युबिंगन विश्वविद्यालय, जर्मनी

एक रवायत की पहचान 86

आंद्रे ब्रोएनिग

त्युबिंगन विश्वविद्यालय, जर्मनी

कविताएँ

सफ़ेद बर्फ़ 90

वालेंतिना मारिनोवा

सोफ़िया विश्वविद्यालय, बल्गारिया

प्रतीक्षा 92

लिलिया देनेवा

सोफ़िया विश्वविद्यालय, बल्गारिया

तीन कविताएँ 94

सिद्धार्थ वत्स

यूनिवर्सिटी ऑफ़ टोरंटो

कहानियाँ

अमीर औरत की डायरी 99

अन्नालेना शुल्त्से

लाइप्त्सिग विश्वविद्यालय, जर्मनी

मानसून का जादू 102

माग्दालेना वार्नर

म्यूनिख़ विश्वविद्यालय, जर्मनी

एक कप चाय 105

इकिगाई और छोटा मगर 108

मार्लेने त्साईस

त्युबिंगन विश्वविद्यालय, जर्मनी

फ़िल्मी दुनिया और फ़िल्म समीक्षा

हिच हायकर्स गाईड टू द गैलेक्सी 112

सारा आकरमन

ज़्यूरिख़ विश्वविद्यालय, स्विट्ज़रलैंड

डॉली, किट्टी और वे चमकते सितारे : दो औरतों की मुक्ति की खोज 117

सौफ़ी डीकमन

लाइप्त्सिग विश्वविद्यालय, जर्मनी
बॉलीवुड 119
बियात्रिस हैस इतोतुजी
लिस्बन विश्वविद्यालय, पुर्तगाल
लैला और मजनूँ : सिर्फ़ एक प्रेम कहानी? 125
मंजीत सिंह
ज़्यूरिख विश्वविद्यालय, स्विट्ज़रलैंड

वाद्य यंत्र और व्यंजन

पनीर भुर्जी या खाना बनाने में क्या-क्या सीख सकते हैं ? 129
बर्नाडेट स्ताउडर
लाइप्त्सिग विश्वविद्यालय, जर्मनी
भारतीय संगीत वाद्य – क्या आपको मालूम है कि मैं कौन हूँ? 133
वेरोनिका निकलास
लाइप्त्सिग विश्वविद्यालय, जर्मनी

हास्य व्यंग्य

जर्मन व्यापार संस्कृति 137
आर्नो दोहमन
बॉन विश्वविद्यालय, जर्मनी

समाज, संस्कृति और इतिहास

सिन्तियों का इतिहास 140
फ्रांत्स- एलियास श्नेक
त्युबिंगन विश्वविद्यालय, जर्मनी
भारत-जापान संबंध पर विशेष सामग्री 144
राजनीति के बारे में 145
तोमोहारु ओगुरा
ओसाका विश्वविद्यालय, जापान
भारत-जापान आर्थिक सम्बन्ध 147
हयाता तानिकावा
ओसाका विश्वविद्यालय, जापान
जापानी और भारतीय खाने के बारे में 149
युजुरु इशी
ओसाका विश्वविद्यालय, जापान
जापान और भारत के धर्म के बारे में 151
कोदाई इनोउए
ओसाका विश्वविद्यालय, जापान
जापानी और भारतीय कंपनियों के बारे में 153

अयाका ओगावा

ओसाका विश्वविद्यालय, जापान

मेट्रो के बारे में 155

शुई ओदा

ओसाका विश्वविद्यालय, जापान

इतिहास के बारे में 156

ताकुमी कावागुची

ओसाका विश्वविद्यालय, जापान

संस्कृति के बारे में 157

शिनो नकाए

ओसाका विश्वविद्यालय, जापान

जापान में भारत पर एक दृष्टि 158

दियाना बास्कोविचि

तोक्यो यूनिवर्सिटी ऑफ़ फॉरेन स्टडीज़, जापान

जापान में पढ़ने की संस्कृति 164

कुबोता हारुका

ओसाका विश्वविद्यालय, जापान

मैं और भारत 166

ओसावा कोकोरो

ओसाका विश्वविद्यालय, जापान

यात्रा वृत्तांत

लद्दाख की पहचान 172

अलेक्सांदर बोग्दनोव

सोफ़िया विश्वविद्यालय, बल्गारिया

फ़रवरी 2020 में मेरी भारत यात्रा 175

वेरेना वेस्टफाल

हैम्बर्ग विश्वविद्यालय, जर्मनी

मुंबई की झुग्गी का मेरा अनुभव 178

अदिंदा शकुंतला पेतिलों

लिस्बन, पुर्तगाल

भारत की स्कूली शिक्षा एक जर्मन शिक्षिका की नज़र में 180

क्रिस्टीने मेत्स

हैम्बर्ग विश्वविद्यालय, जर्मनी

ईरान का यात्रा वृत्तांत 183

योहाना क्रुस्ल

त्युबिंगन विश्वविद्यालय, जर्मनी

सामयिक विवेचना

षड्यंत्रवाले सिद्धातों के विरुद्ध: तलवार के दांतवाले बाघ को भगानेवाली होम्योपैथिक गोलियाँ 188

योनस फ़ेस्टोर्फ़

लाइप्त्सिग, जर्मनी

अंतरदेश के प्रवेशांक के लिए अन्निम की पच्चीस कहानियाँ

अन्निम रोबोट पर पच्चीस कहानियों पर एक नज़र 207

एजाज़ुर रहमान

सोच की खिड़कियाँ और अन्निम की (25) कहानियाँ 212

प्रेम रंजन अनिमेष

संपादकीय

प्रिय पाठकगण !

अन्तरदेश का प्रवेशांक आपके समक्ष है। हमारी पत्रिका का उद्देश्य मुख्यतः अहिंदी भाषियों को एक ऑनलाइन अंतरराष्ट्रीय मंच प्रदान करना है जहां वे हिंदी में अपनी साहित्यिक और ग़ैर-साहित्यिक रचनात्मकता को अभिव्यक्ति दे सकें।

प्रवेशांक में कैनेडा, चीन, जर्मनी, जापान, बल्गारिया, पुर्तगाल, स्विट्ज़रलैंड और स्वीडन से मूलतः हिंदी में लिखी लगभग हर विधा की रचनाएँ यथा कविता, ललित निबंध, हास्य-व्यंग्य, यात्रा-वृत्तांत, राजनीतिक विश्लेषण, कहानियाँ और लघु कथाएँ आपको मिलेंगी। इस अंक में यदि कुछ अधिक रचनाएँ जर्मन भाषी क्षेत्र और जापान से हैं तो अगले अंक में दूसरे देशों से भी होंगी।

हमारी दीर्घकालीन योजना है कि विश्व के विभिन्न सांस्कृतिक और भाषा-भाषी क्षेत्रों में हिंदी में रचनाकारों और पाठकों के सक्रिय समूह तैयार करने में मदद देना।

जैसा कि विषय सूची के आपको पता चलेगा कि कुल सामग्री मात्र लिखित ही नहीं बल्कि दृश्य-श्रव्य भी है। छात्र-छात्राओं और शिक्षकों ने उत्साहपूर्वक इस अंक के लिए विशेष फ़िल्में और रिपोर्ताज़ तैयार किए हैं जो पाठकों और दर्शकों के लिए रोचक होंगे।

पत्रिका के लिखित हिस्से में रेणु जी के रचनाकर्म और मैला आँचल पर दो आलोचनात्मक निबंध हैं जो स्वीडन में अध्यापनरत हाइन्त्स वर्नर वेस्लर और जापान से मिकि यूइचिरो के हैं।

विदेशों में हिंदी का पठन-पाठन भारत से आए शिक्षकों तथा स्थानीय अहिंदी भाषियों के लिए कई बार एक भूल-भुलैया की यात्रा से कम रोमांचकारी नहीं है। इस अनुभव से गुज़रने को लाइप्त्सिग विश्वविद्यालय, जर्मनी की अडेलै हैन्निश-टेंबे ने बखूबी कलमबद्ध किया है।

बल्गारिया से आई रचनाएँ साहित्यिक हों या यात्रा वृत्तांत, लिखित हों या वीडियो रूप में अपनी प्रौढ़ और गंभीर भाषा से प्रभावित किए बिना नहीं रहतीं। अलेक्सांदर बोग्दनोव, सोफिया विश्वविद्यालय, बल्गारिया की लद्दाख यात्रा पर लेख और वीडियो दोनों उल्लेखनीय हैं। कैनेडा से दक्षिणी एशिया के मूलतः अहिंदी भाषा-भाषी छात्रों के विचार बिन्दु भाषा से आगे बढ़ कर जीवन को समझने और समझाने की दिशा देते हैं। पुर्तगाल की रचनाओं में धारावी पर लेख मुख्यधारा के चिंतन को उन झुग्गी-झोपड़ियों को समझने की नई दृष्टि देगा। हैम्बर्ग (हाम्बुर्ग) के निबंध, अकादमिक तौर पर जर्मनी में हिंदी के इतिहास का परिचय देते हुए, हिंदी पढ़ाने के अनुभव और भारत यात्राओं के वृत्तांत हैं। लाइप्त्सिग, जर्मनी से आई कहानियों के अलावा कोरोना पर एक राजनीतिक विश्लेषण की रचनाओं की अतिरिक्त तीक्ष्णता को हम अनदेखा नहीं कर पाएँगे चाहे वह भारत की पाक कला में धैर्य के महत्त्व को रेखांकित करनेवाली रचना हो या भारतीय वाद्य यंत्रों के लेकर बनाई गई पहेलियाँ।

जापानी छात्रों द्वारा जापान पर तैयार किया गया विशेष हिस्सा भारत और जापान दोनों को एक नई तरह देखने को तैयार करता है। एक जापानी छात्र और रोमानियाई छात्रा आगरे में प्यार करते हैं तो उनके प्यार को जोड़ने की भाषा हिंदी है।

अंतरदेश की अन्निम रोबोट की पहली लघु कथा प्रतियोगिता (2021 से 2022)

संसार की/का अंतिम रोबोट अन्निम अपने कमरे में अकेली /अकेला बैठी/बैठा थी /था तभी दरवाज़े की घंटी बजी। यह जानना रोचक होगा कि घंटी बजने के बाद अंतिम रोबोट अन्निम ने क्या किया ? क्या वह उठी या नहीं उठी ? क्या उसने दरवाज़ा खोला या नहीं नहीं खोला ? खोला तो क्या देखा ? फिर उसकी प्रतिक्रिया क्या थी ? यह था लघु कथा प्रतियोगिता का पहला वाक्य जिसे जापान, चीन, जर्मनी और स्विट्ज़रलैंड से छात्र, छात्राओं ने पूरा करने का प्रयास किया। इस कोशिश में संभवतः कुछ नए शब्द भी गढ़े गए हैं: जैसे रोबोटत्व और रोबोटोसिन। रोबोटोसिन एंथ्रोपोसिन की तर्ज़ पर बना शब्द है। एंथ्रोपोसिन का अर्थ है धरती के भूपटल पर इतने कम समय में सभ्य मानव जाति द्वारा इतने बड़े और अधिक बदलावों को परिभाषित करनेवाला पद। फ्रेडरिक ब्राउन की मशहूर लघु कथा के मुख्य किरदार में मनुष्य की जगह यहाँ प्रतियोगिता के लिए अन्निम रोबोट कर दिया गया है। अन्निम शब्द का आशय दोनों है। या तो अंतिम रोबोट या अनंतिम रोबोट: अर्थात जहां अंत और आरंभ दोनों एक दूसरे से मिलते हैं।

मुखपृष्ठ

मुखपृष्ठ पर हैम्बर्ग, जर्मनी की क्रिस्टीने मेत्स ने हर देश में चल रहे प्रकृति के अंधाधुंध संहार की ओर इशारा किया है चाहे वह पुर्तगाल के तट पर खड़े विलासिता-वैभव वाले पर्यटक जहाज हों, जापान द्वारा व्हेलों का संहार हो, कैनेडा द्वारा की जा रही फ्रैकिंग हो भारत में हिमालय में अंधाधुंध निर्माण कार्य हों या जर्मनी में वनों की कटाई। यदि आप मुखपृष्ठ को ध्यान से देखेंगे तो पाएँगे कि जिस छोर पर जर्मनी लिखा है वहाँ सड़कों और गलियों में ऐसी छोटी-छोटी तांबे की ईंटों का चित्र है जिन पर उन मृत व्यक्तियों की जीवनी लिखी है जिनको आऊश्वित्स जैसे श्रम-शिविरों में मौत के घाट उतारा गया। ये छोटी-छोटी तांबे की ईंटें जर्मनी की सड़कों पर लगाई गयी हैं ताकि संख्याओं के घटाटोप में वे नाम भुला न दिए जाएँ। वैसे जर्मनी के ही *दानेनरयोडरवाल्ड* के जंगलों में विकास के नाम पर जिन पेड़ों को मार डाला गया उनकी भी समाधि बना कर उनका भी नाम लिखा गया है। कुछ मारे गए पेड़ों के नाम हैं: ऊरुक, इरिस, सिलविए, रेया और क्नोर्क्स। प्रकृति के साथ हमारे संबंध ही कई बार मानव जाति के आपसी संबंधों को तय कर देते हैं। ज़्यूरिख़ विश्वविद्यालय, स्विट्जरलैंड से सारा आकरमन हिचहायकर्स गाईड टू द गैलेक्सी की फ़िल्म समीक्षा में बहु-अंतरिक्षीय युद्धों में फँसे और गलती से बचे एक धरती के प्राणी आर्थर की चर्चा करती हैं जो धरती के विनाश को लेकर थोड़ा ख़फ़ा है। विशेष रूप से उसे मैकडॉनल्ड्स की कमी खलेगी।

अभूतपूर्व पर्यावरण और मनुष्यता के संकट के इस दौर में जर्मनी, अन्य देशों और भारत एक दूसरे से ऐसी जीवित परंपराओं को निकट लाते हुए परस्पर सीखने-सिखाने के

काम में *अंतरदेश* सबके साथ चलना चाहता है। मनुष्यों अथवा प्रकृति की हत्या और दमन के विरुद्ध जर्मनी में उनके नामों को जीवित रखने के जो विशिष्ट प्रयास हैं उनसे हम सब को दुनिया भर में सीखने की ज़रूरत है।

अगला अंक

हमारे अगले अंक की तैयारी आरंभ हो चुकी है और उसका प्रमुख विषय है: जापान। एक ओर हम जर्मनी, पुर्तगाल, कैनेडा आदि विभिन्न देशों से जापान की विभिन्न छवियाँ और रचनाएँ एकत्रित करेंगे तो दूसरी ओर स्वयं जापानी समाज से सीधा संवाद स्थापित करेंगे। बहुधा ऐसा लगता है कि यदि सब कुछ ठीक-ठाक रहा और कोई बड़ा युद्ध या हादसा न हुआ तो आज का जापान महत्त्वपूर्ण मामलों में मानवता का भविष्य हो सकता है। तरक्की के जिस मुकाम पर जापान पहुँचा है वहाँ से दुनिया के अन्य देश क्या सीख सकते हैं?

हमारे कुछ विषय होंगे जापान में टेक्नोलॉजी और समाज एवं टेक्नोलॉजी और प्रकृति के अंतरसंबंध, जापान में बचपन और बुढ़ापा, विभिन्न तबकों के सामान्य दैनिक जीवन का इतिहास आदि।

हमारी भाषा और अंतर्वस्तु संपादन नीति

भाषा और अंतर्वस्तु का संपादन हमेशा एक चुनौती लिए था। एक ओर भाषा संरचना को अटपटा छोड़ना मूल भाषा के निकट ले जाने का प्रयास है तो दूसरी ओर उसे पाठक

वर्ग के लिए पठनीय बनाये रखना इन दोनों के बीच तनाव को आप कई बार महसूस करेंगे। जैसे जर्मनी की सिंती अस्मिता पर लेख में सिंती भाषा के कुछ शब्द अटपटे होते हुए भी वैसे ही रख छोड़े गए हैं क्योंकि वे आज भी दिवस और मनुष्य शब्द का प्रयोग प्रचलित हिंदी से कहीं अधिक दैनिक जीवन में करते हैं। यह विशेषता छात्रों के वीडियो में और खुल कर सामने आती है। जो अधिकतर अशुद्धि की जगह प्रीतिकर ही लगेंगी।

इस पत्रिका में हम लोगों ने चर्चित नाम के बाद स्थानीय उच्चारण को कोष्ठक में देने का प्रयास किया है; जैसे हैम्बर्ग (हाम्बुर्ग)। हिंदी की वर्तनी और मात्राओं के लिए हमने किशोरी वाजपेयी की पुस्तकों और केन्द्रीय हिंदी निदेशालय, आगरा के देवनागरी लिपि तथा हिंदी वर्तनी का मानकीकरण पुस्तक का सहारा लेने का प्रयास किया है।

कुछ रचनाओं को उनके लेखकों से अनुमति ले कर पुनर्प्रकाशित किया जा रहा है। इस पत्रिका की तैयारी के समय लेखक उक्त संस्थाओं से सम्बद्ध थे।

सभी पाठकों, लेखकों और सुधीजनों की प्रतिक्रिया का इंतजार रहेगा। अगले अंक के लिए अपनी रचनाएँ यहाँ भेजें: antardesh.patrika@gmail.com

दानेनरयोडरवाल्ड, जर्मनी में वृक्षों का समाधिस्थल जिनके नाम हैं: ऊरुक, इरिस, सिलविए, रेया और क्नोर्क्स (2021)

विशेष

हिंदी का वैश्विक परिप्रेक्ष्य : जर्मनी में हिंदी का इतिहास

राम प्रसाद भट्ट

हैम्बर्ग विश्वविद्यालय, जर्मनी

भारत-विद्या मानविकी अनुशासन का एक विषय है, जिसके अंतर्गत भाषाओं, संस्कृतियों और इतिहास का विवरणात्मक एवं व्याख्यात्मक अध्ययन किया जाता है। प्राच्य भारत-विद्या भारत की शास्त्रीय भाषाओं जैसे संस्कृत, पाली, प्राकृत और तमिल इत्यादि का अध्ययन इन भाषाओं के सांस्कृतिक एवं भाषा-शास्त्र के इतिहास के संदर्भ में करता है और उसके शोध के केंद्र में भारतीय बौद्धिक और सांस्कृतिक इतिहास एवं उसके व्यवस्थित उप-क्षेत्रों पर शोध करना है तथा वस्तुनिष्ठ डेटा संग्रह के माध्यम से भारत के एक सार्वभौमिक ऐतिहासिक मूल्यांकन को प्रस्तुत करने का प्रयास करना है।[1] जर्मनी में आधुनिक भारतीय भाषा हिंदी का शिक्षण वैसे तो बीसवीं सदी की शुरुआत से ही हो रहा है किंतु द्वितीय विश्व-युद्ध के बाद छठे दशक में भारत-विद्या के पाठ्यक्रम में विस्तार के तौर पर अन्य आधुनिक भारतीय भाषाओं - बंगाली, तमिल, तेलगू, मलियाली, मराठी, नेपाली इत्यादि - और उनके साहित्य को भी शामिल किया गया।[2] प्राच्य भारत-विद्या के अध्ययन के केंद्र में भाषा-शास्त्र (फिलोलॉजी) है, जो पाठ (टेक्स्ट) पर आधारित एक सांस्कृतिक विज्ञान है, जिसमें पाठ के आधार पर सभ्यता विशेष का अध्ययन उपलब्ध लिखित एवं मौखिक पाठ की जाँच-पड़ताल के साथ किया जाता है और पाठ को समझने के लिए अन्वेषण के विभिन्न आवश्यक संसाधनों का उपयोग किया जाता है।[3] आधुनिक भारत-विद्या के अध्ययन के केंद्र में आधुनिक भारतीय

भाषाएँ, संस्कृति एवं समाज होते हैं। भारत-विद्या के अंतर्गत भारतीय उपमहाद्वीप का राजनीतिक इतिहास, संस्कृति, दर्शन, भाषाएँ, साहित्य, भाषा-विज्ञान, कला, पुरातत्व-विज्ञान, चिकित्सा, धर्म, अनुष्ठान, लोक-साहित्य, अनुवाद, राजनीति शास्त्र, कला, नृत्य और संगीत एवं बॉलीवुड (सिनेमा) और क़ानून जैसे विषय आते हैं और इसके साथ ही भारत-विद्या समाजशास्त्र एवं नृविज्ञान जैसे विषयों से भी मदद लेती है।

जर्मनी में भारत-विद्या का इतिहास काफ़ी पुराना है। आमतौर पर ऐसा माना जाता है कि जर्मन विद्वानों और लेखकों ने भारतीय संस्कृति, साहित्य, धर्म एवं भाषाओं का अध्ययन मुख्य रूप से उन्नीसवीं सदी में शुरू किया यद्यपि छिटपुट कार्य पहले से ही हो रहे थे, जैसे कि साहित्यिक कृतियों का अनुवाद, मिथकों, किंवदंतियों पर विचार और यात्रा-वृत्तांत एवं इन्साइक्लपीडिया इत्यादि।[4] दूसरी तरफ़ कुछ लोग भारतीय भाषाओं के व्याकरण और शब्दकोश तैयार कर रहे थे। जर्मन जेसुइट हाइनरिख़ रोथ (1620–1668) ने संस्कृत व्याकरण लिखा था, जिसका प्रकाशन 1988 में हो पाया।[5] विदित हो कि हाइनरिख़ रोथ इज़मीर, तुर्की और स्पहान, ईरान से होते हुए 1652 में भारत पहुँचे थे। बार्थोलोमैउस त्सीगेनबाल्ग (1682–1719) ने अठारहवीं सदी की शुरुआत में भारत में रहकर तमिल व्याकरण लिपिबद्ध किया और बाइबल का तमिल में अनुवाद किया।

योआन योसुआ केतेलार (1659–1718) ने 1698 में संभवतः पहला हिंदुस्तानी व्याकरण और फ़्रांस्वा मारी दे तूर्स (16..?–1709) ने 1703 में हिंदुस्तानी शब्दकोश एवं 1704 में हिंदुस्तानी व्याकरण लिखा।[6] सत्रहवीं और अठारहवीं सदी में यूरोपियन विद्वानों ने, विशेषकर क्रिश्चियन मिशनरियों ने भारतीय भाषाओं के दस्तावेज़ीकरण में

महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। सन् 1651 में डच क्रिश्चियन मिशनरी अब्राहम रोज़र ने भारत में किसी ब्राह्मण से भर्तृहरि की कुछ कविताओं का अनुवाद पुर्तगाली में करवाकर उसे प्रकाशित करवाया और संस्कृत साहित्य की महत्ता पर विचार किया।[7] भारतीय साहित्य के यूरोपियन भाषाओं में अनुवाद को गति मुख्य रूप से सन् 1784 में सर विलियम जोन्स (1746–1794) द्वारा कोलकाता में दि एशियाटिक सोसाइटी की स्थापना किए जाने के पश्चात् मिली। सन् 1776 में हिन्दू लॉ "विवादार्णवसेतु" के अँग्रेज़ी अनुवाद और 1785 में चार्ल्स विलकिंस (1749–1836) द्वारा भगवद्गीता तथा सर विलियम जोन्स द्वारा अभिज्ञानशाकुन्तलम् के अँग्रेज़ी अनुवाद के बाद अठारहवीं सदी के अंत में यूरोपियन विद्वानों एवं लेखकों की भारतीय भाषाओं एवं साहित्य में रुचि और भी प्रखरता से बढ़ी। विशेषतौर पर जब योहन्न गोत्तफ़्रीद हेर्डर (1744–1803) और योहान्न वोल्फ़गांग फ़ॉन गोएथे (1749–1832) जैसे महान जर्मन विद्वान और कविगण भारतीय साहित्य में रुचि रखते हों, तो निश्चिततौर पर अन्य लोगों की भी भारतीय साहित्य में दिलचस्पी बढ़ी होगी।[8] हेर्डर ने अट्ठारहवीं सदी में "इंडियन" नाम की कविता लिखी, जिसमें उन्होंने भारतीय समाज एवं उसकी साहित्यिक सौष्ठवता और कालिदास के साहित्य को रेखांकित किया है।

“भारत”

“भारतीयों के सूक्ष्म मृदु-भाव ने नाद का मार्गदर्शन किया
साधारण-सी वायु ने नहीं, उसे तो आकाश ने विस्तार दिया।
केवल वही बना सकता है सुर को मधुर ब्रह्म स्वर,
जो संवेदना व्यक्त करता, और जगाता है अनुभूति का तार ...
और साधारण-सी साँस से चुराकर ले जाता है मनुष्यों की आत्माएँ
उस शांत क्षेत्र में, उस अलौकिक स्थान पर,
जहाँ कोई रथ घड़घड़ाता नहीं, पर अब तैरता है बादलों से दूर,
जहाँ पारिवारिक ख़ुशी देवताओं को करती हो आनंदित,
जहाँ शाकुंतला अपने तिरोहित प्रेमी संग रहती हो उल्लासित,
जहाँ दुष्यंत उसे हर बार करता हो देवताओं से प्राप्त।
ओ पवित्र धरती और सुरों के राजा, स्वीकार करो मेरा प्रणाम,
ओ आत्माओं की आवाज़, मुझे बार-बार ले चलो,
आकाशीय मार्ग से उस पुण्य-धाम!”[9]

~ योहन्न गोत्तफ़्रीद हेर्डर (1744-1803)

~ हिंदी अनुवाद : राम प्रसाद भट्ट

इसी तरह महान जर्मन कवि गोएथे भी भारतीय साहित्य और विशेषकर कालिदास के साहित्य से इतने प्रभावित थे कि उन्होंने भारत और कालिदास पर एक कविता ही नहीं लिखी बल्कि विद्वानों का कहना है कि गोएथे ने कालीदास के अभिज्ञानशकुन्तलम् से प्रेरित होकर अपने प्रसिद्ध दुखांत नाटक “फ़ाउस्त” को लिखा था। गोएथे स्वयं भी कल्पना में भारत जाने की इच्छा अपनी कविता में अभिव्यक्त करते हैं।

“पूरब उसे पहले ही पढ़ चुका है:
कालिदास और अन्य फैला चुके शब्द-नाद;
कवि की सौष्ठवता से जिन्होंने
हमें पादरियों और ढोंगियों से कर दिया आज़ाद।
भारत में मैं स्वयं ही जीना चाहता,
काश! कोई मूर्तिकार न होता।
व्यक्ति और क्या आनंददायक जानना चाहेगा!
शाकुंतला, नल, उनको चूमना चाहिए,
और मेघदूत, उस संदेशवाहक बादल को,
कौन अपनी प्रियतमा के पास नहीं भेजना चाहेगा।”[10]

~ योहान्न वोल्फ़गांग फ़ॉन गोएथे (1749-1832)

~ हिंदी अनुवाद : राम प्रसाद भट्ट

क्लासिकल भारत-विद्या की शुरुआत एक तरह से यूरोप में रोमांटिसिज़्म की साहित्यिक धारा से प्रेरित मानी जाती है, जिसका कुछ मायनों में भारत-विद्या पर आज भी प्रभाव देखने को मिलता है।[11] वैसे तो यूरोप और दक्षिण एशिया के बीच सांस्कृतिक एवं आर्थिक संबन्धों के विवरण सिकंदर के समय चौथी सदी ईसा पूर्व से ही मिलते हैं किन्तु भारतीय उपमहाद्वीप में यूरोपवासियों की दिलचस्पी मुख्यतः वराहमिहिर (505–587)[12], भास्कर प्रथम (600–680)[13], ब्रह्मदेव (1060–1130)[14] और भास्कर द्वितीय (1114–1185)[15] जैसे महान भारतीय विद्वानों द्वारा स्थापित किए गए गणितीय सिद्धांतों को लेकर मानी जाती है। भारतीय साहित्य एवं यूरोपियन साहित्य के मध्य आदान-प्रदान संभवतः लगभग छठी शताब्दी में पंचतंत्र की कहानियों का संस्कृत से फ़ारसी, अरबी, ग्रीक, हिब्रू और लैटिन में अनुवाद के साथ शुरू हो चुका था, जिसकी प्रबलता प्रामाणिक तौर पर केवल क्रिश्चियन मिशनरियों द्वारा संस्कृत एवं अन्य भारतीय

भाषाएँ सीखने और उनके दस्तावेज़ीकरण के साथ आगे बढ़ी और उसी के साथ अट्ठारहवीं सदी में भारतीय शास्त्रीय साहित्य का यूरोप में उत्साहवर्धक स्वागत होने लगा तथा भारतीय साहित्य को उसकी मूल भाषाओं में समझने के प्रयास भी शुरू हुए।[16] आमतौर पर यह माना जाता है कि चूँकि जर्मनी का भारतीय उपमहाद्वीप में सीधेतौर पर इंग्लैंड, फ़्रांस और पुर्तगाल के जैसे कोई उपनिवेशवादी इरादा नहीं था यद्यपि जर्मनी में भी ईस्ट इंडिया कंपनी की स्थापना की गयी थी[17], अतः जर्मन विद्वानों ने, विशेष रूप से मिशनरियों ने अपनी ऊर्जा भारतीय भाषाओं, साहित्य, दर्शनशास्त्र और धर्म संबंधी अध्ययन एवं शोधकार्यों पर लगायी।

परिणामस्वरूप जर्मनी भारत-विद्या पर कार्य करने वाले देशों की अग्रगण्य श्रेणी में आ गया। प्रथम संस्कृत-अँग्रेज़ी शब्दकोश का निर्माण करने वाले ऑतो निकोलाउस फ़ॉन बोएथ्लिंग्क (1815–1904) और प्रसिद्ध भाषाविद् एवं धर्मशास्त्र के विद्वान मैक्स मूलर (1823–1900) जैसे संस्कृत के विद्वानों का संबंध भी जर्मनी से था।[18] विदित हो कि इन दोनों विद्वानों ने जीवन में कभी भी भारत की यात्रा नहीं की थी।[19]

जर्मन विश्व-विद्यालयों में भारत-विद्या की प्रथम चेयर बॉन विश्वविद्यालय में 1818 में शुरू की गयी, जिसके पहले प्रोफ़ेसर औगुस्त विल्हेल्म फ़ॉन श्लेगल थे।[20] प्रोफ़ेसर श्लेगल ने भगवद्गीता का जर्मन अनुवाद प्रस्तुत किया। उनकी पुस्तक "भारतीयों की भाषा एवं उनकी विद्वता" सभी भारतविदों के लिए मुख्य विवरण पुस्तिका का कार्य करती है। उन्नीसवीं सदी की प्रथम अर्द्ध-शताब्दी में फ़्रांत्स बॉप (1791–1867) ने संस्कृत, जरमैनिक एवं ईरानी के भाषा वैज्ञानिक संबंध को स्थापित करके भारतीय

भाषाओं एवं साहित्य में यूरोपियन विद्वानों की रुचि को और भी बढ़ा दिया, जिसके फलस्वरूप इस दिशा में तुलनात्मक अध्ययन को दिशा मिल पायी। उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य में जर्मनी में पूर्वी देशों की भाषाओं के लिए एक सेमिनार स्थापित करने के लिए विद्वानों और राजनेताओं में गंभीर बहस छिड़ी और अंततः तीन अप्रैल 1886 को इससे संबंधित प्रस्ताव जर्मन संसद में लाया गया, तो तत्कालीन चांसलर बिस्मार्क द्वारा इसे हरी झंडी दी गयी। छै अक्टूबर 1887 को बर्लिन में ऑरीएंटल संस्थान "एशिया और अफ्रीका का इतिहास" की स्थापना की गयी, जिसका उद्देश्य पूर्वी देशों की आधुनिक भाषाओं, जैसे चीनी, जापनी, अरबी, फ़रासी, तुर्की और हिंदुस्तानी इत्यादि का अध्यापन करना था।[21] यद्यपि हिंदुस्तानी एवं गुजराती बर्लिन ऑरीएंटल संस्थान में 1888 से ही पढ़ायी जा रही थीं किंतु आधुनिक भारतीय साहित्य की ओर यूरोपियन विद्वानों का ध्यान मुख्यतः गुरदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर को सन् 1913 में नोबल पुरस्कार मिलने के पश्चत् ही गया। इसी के माध्यम से शास्त्रीय भारतीय साहित्य के समानांतर आधुनिक भारतीय साहित्य की जीवंतता, स्पष्टता, निरंतरता एवं परंपरागत साहित्य सृजनता के स्वरूप की ओर यूरोपियन विद्वानों का ध्यान गया। यद्यपि विश्वविद्यालय स्तर पर संस्कृत का अध्यापन 1818 से शुरू हो गया था[22] फिर भी हिंदुस्तानी का अध्यापन लगभग बीसवीं सदी के दूसरे दशक से शुरू हो पाया। इसके पीछे

कौन-से मुख्य कारण थे, उसमें जाने के लिए इस आलेख में मेरा इरादा नहीं है क्योंकि इस छोटे आलेख की अपनी सीमा है। संस्कृत के अध्ययन एवं अध्यापन के पीछे के कारण हमें जर्मन कवि एवं साहित्यकार हाइनरिख़ हाइने और प्राच्यविद एडवर्ड सईद के कथनों से स्पष्ट हो जाते हैं।[23]

हाइनरिख़ हाइने लिखते हैं कि "संस्कृत अध्ययन के महत्व को समय अपने आप रेखांकित करेगा। पुर्तगाली, डच और अँग्रेज़ लोग लंबे समय तक साल-दर-साल अपने बड़े-बड़े जहाज़ों से बहुमूल्य भारतीय चीज़ों को अपने-अपने देशों में लाते रहे हैं, लेकिन हम जर्मन लोग इसे हमेशा सिर्फ़ देखते रह गये। लेकिन हमें भारतीय बौद्धिक निधियों की अनदेखी नहीं करनी चाहिए। श्लेगल, बॉप्प, हुम्बोल्त, फ्रांक इत्यादि वर्तमान में हमारे दिशा निर्देशक हैं।"

इसी तरह से एडवर्ड सईद लिखते हैं – "19वीं शताब्दी के पहले दो-तिहाई समय के दौरान जर्मन पांडित्य शास्त्र में कभी भी प्राच्य विद्या[24] और पूर्वी देशों के दीर्घ सतत राष्ट्रीय हित के बीच कोई घनिष्ठ साझेदारी विकसित न हो पायी। जर्मनी में भारत, लेवांत की उपस्थिति उत्तरी अफ़्रीका में एंग्लो-फ्रांसीसी की उपस्थिति के अनुरूप कुछ भी नहीं था। अतः जर्मन ऑरीएंट का संबंध लगभग पूर्णतः ज्ञान मीमांसा से एवं कम से कम शास्त्रीय ऑरीएंट से था।"[25]

यहाँ साहित्य के संदर्भ में कुछ विशेष घटनाओं का ज़िक्र करना अनुचित न होगा, जिनका भारत-विद्या के विकास में दूरगामी प्रभाव रहा। जैसे, सन् 1784 में सर विलियम जोन्स द्वारा कलकत्ता में एशियन सोसाइटी की स्थापना, 1785 में चार्ल्स विलकिंस द्वारा

भगवद्गीता का अँग्रेज़ी अनुवाद किया जाना, अब्राहम हाएसिंथ अंकेतिल-दुपरॉ द्वारा उपनिषद का फ्रेंच में अनुवाद, सन् 1800 में कलकत्ता में लार्ड वेलेस्ले द्वारा फ़ोर्ट विलियम कॉलेज की स्थापना, 1839 में गार्सा द तासी का फ्रेंच में हिंदुस्तानी साहित्य का इतिहास, जिसे हिंदी साहित्य का पहला इतिहास माना जाता है, लिखना इत्यादि। सन् 1888 में जार्ज ग्रियर्सन का "द मॉडर्न वर्नेक्यूलर लिट्रैचर ऑफ़ हिंदोस्तान" लिखना और सन 1917 में एडविन ग्रीव्स का "ए स्कैच ऑफ़ हिंदी लिटरेचर" लिखना। इसके साथ ही अंतरराष्ट्रीय स्तर पर महात्मा गाँधी के प्रादुर्भाव, द्वितीय विश्व-युद्ध, और दुनिया में बॉलीवुड (हिंदी सिनेमा) के प्रसार से भी किसी न किसी रूप में विश्व में हिंदी के प्रसार को बल मिला है।

जर्मनी में हिंदी भाषा का अध्ययन-अध्यापन का इतिहास लगभग 1887 से मिलता है, मार्टिन हौग (1827– 1876) और एर्न्स्त ट्रुम्प (1828–1885) जैसे विद्वान भारत में रह रहे थे और जॉर्ज ग्रियर्सन (1851–1941), ऑगस्तुस रूडोल्फ़ होर्नेले (1841–1918), सैम्यूअल हेनरी कैलॉग (1830–1840), फ्रेडेरिक पिंकोत्त (1836–1892) जैसे यूरोपियन विद्वान हिंदी का सर्वेक्षण और दस्तावेज़ीकरण कर रहे थे। अतः इन लोगों ने अवश्य कुछ न कुछ हिंदी सीखी होगी क्योंकि इसके बिना न तो सही ढंग से भाषा का दस्तावेज़ीकरण आसान होता और न ही मुग़लों से किसी भी तरह का आदान-प्रदान आसान हो पाता। वैसे भी योआन योशुया केतेलार ने 1698 में और दे तूर्स ने 1704 में भारत में रहते हुए अपने-अपने हिंदी व्याकरण तैयार कर लिए थे। इस बात के भी प्रमाण मिलते हैं कि एक तरफ़ जर्मनी में प्रथम विश्व-युद्ध में बंदी बनाए गए हिंदुस्तानी

सैनिकों पर कुछ भाषा वैज्ञानिक प्रयोग किए गए थे, विशेषतः जर्मन प्रोफ़ेसर हाइनरिख ल्युदर्स के नेतृत्व में और दूसरी तरफ़ उन्नीसवीं और बीसवीं सदी में भारत में रह रहे कई विदेशी हिंदी और उर्दू पर काम कर रहे थे।

हैम्बर्ग विश्वविद्यालय, स्थापना 1919

यद्यपि हिंदी भाषा का अध्यापन जर्मनी में उन्नीसवीं शताब्दी के अंतिम दशक से शुरू हो गया था, (बर्लिन 1888 और हैम्बर्ग 1922 इत्यादि), तथापि हिंदी साहित्य का सुनियोजित अध्यापन मुख्य रूप से द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात्, बीसवीं शताब्दी के छठे दशक से ही शुरू हो पाया। साठ से अस्सी के दशकों में जर्मनी में हिंदी शब्दकोशों, हिंदी व्याकरण पर काफ़ी कार्य हुआ और अनेक हिंदी कृतियों का जर्मन अनुवाद किया गया।[26] शास्त्रीय भारत-विद्या के कुछ विद्वानों, जैसे - फ़्रीडरिक रोजन (1856–1935); हेल्मूथ फ़ॉन ग्लाजनाप्प (1891–1963); अल्स्दोर्फ़ (1904–1978); पॉल हाकर (1913–1979) ने भी बीसवीं सदी में हिंदी पर शोध किया। इस दौरान लोथार लुत्से, हेल्मूथ नेस्पिताल, अरयेन्द्र शर्मा, हंस फ़ेर्मेर, हंस पीटर गैफ़्फ़के, मरगोत गत्सलाफ़्फ़-हैलसिग, मोनिका ब्योह्म तेतलबाख़ जैसे विद्वानों ने हिंदी भाषा और साहित्य पर गंभीर शोध किया और हिंदी की कुछ कृतियों का जर्मन अनुवाद किया, जिसका प्रसार दुर्भाग्य से सिर्फ़ विश्व-विद्यालय स्तर तक ही सीमित रहा। जर्मनी में साठ और सत्तर के दशक में बेहतर होती अर्थव्यवस्था के साथ ही भारत-विद्या का भी प्रसार बढ़ता गया और परिणाम स्वरूप जर्मनी में अनेक विश्व-विद्यालयों में हिंदी का शिक्षण

होने लगा।[27] साठ के दशक में जर्मनी के लगभग हर राज्य में कम से कम एक विश्व-विद्यालय में भारत-विद्या विभाग खोल दिया गया था और वहाँ संस्कृत के साथ-साथ हिंदी का शिक्षण भी किया जा रहा था। सन् 1953 में डॉयचे वेले की स्थापना हुई और फिर भारत की स्वतंत्रता की 17वीं वर्षगांठ पर 15 अगस्त 1964 को रेडियो डॉयचे वेले के हिंदी कार्यक्रम का शुभारंभ हुआ। हिंदी का पहला कार्यक्रम रेडियो डॉयचे वेले के तत्कालीन महानिदेशक डॉ. हान्स ओटो वेज़ेमान के संदेश के साथ शुरू हुआ था।[28]

इक्कीसवीं सदी में आते-आते हिंदी का प्रसार काफ़ी सुदृढ़ हो गया था, हिंदी साहित्य के जर्मन अनुवाद के साथ-साथ हिंदी फ़िल्मों का भी जर्मन अनुवाद ख़ूब होने लगा। पश्चिम यूरोप में बॉलीवुड के प्रभाव का अंदाज़ इसी बात से लगाया जा सकता है कि हिंदी फ़िल्मों का प्रसारण जर्मन, डच आदि देशों के टेलीविज़न चैनलों पर होने लगा, जो पहले काफ़ी असंभव-सा लगता था। हिंदी सिनेमा की बढ़ती लोकप्रियता का प्रभाव यह भी हुआ कि कई छात्रों ने बॉलीवुड से प्रेरित होकर भारत-विद्या और हिंदी का अध्ययन शुरू किया और यह सिलसिला बढ़ता जा रहा है यद्यपि छात्रों की विषय संबंधी प्रवृति और वरण व्यवहार में परिवर्तन देखा गया है, जिसके अनेक कारण हो सकते हैं, जैसे कि रोज़गार संबंधी प्रश्न इत्यादि। पिछले उन्नीस वर्षो के अनुभव से कहा जा सकता है कि हर वर्ष हिंदी सीखने के लिए कम से कम पंद्रह प्रतिशत विद्यार्थी ऐसे आते हैं, जो हिंदी सिनेमा से प्रभावित होकर हिंदी सीखते हैं। सूचना प्रौद्योगिकी की क्रांति के बाद भाषा सीखने की अनेक ऑनलाइन संभावनाएँ भी बढ़ गयी हैं। भारत में आयी सूचना प्रौद्योगिकी की क्रांति का परिणाम यह हुआ कि जर्मनी में शिक्षकों एवं छात्र-छात्राओं को

अनेक जानकारियाँ और शिक्षण सामग्री अब घर बैठे ऑनलाइन उपलब्ध होने लगीं जबकि इससे पहले शिक्षकों को शिक्षण सामग्री इकट्ठी करने के लिए भारत जाना पड़ता था। सन् 2006 में आधुनिक दक्षिण एशिया अध्ययन मंडल की स्थापना की गयी, जिसकी पहल प्रो. डॉ. राहुल पीटर दास के नेतृत्व में हुई थी। इस अध्ययन मंडल की स्थापना का उद्देश्य दक्षिण एशिया पर विभिन्न आधुनिक विषयों का अध्ययन करने वाले विद्वानों को एक प्लेटफ़ॉर्म उपलब्ध करवाना था यद्यपि जर्मन एसोसिएशन फ़ॉर एशियन स्टडीज़ जैसी संस्था एशिया के समाज, संस्कृति, इतिहास, भूगोल इत्यादि पर शोध कर रहे विद्वानों को दशकों से एक प्लेटफ़ॉर्म पर लाने का कार्य करता आ रहा है।[29] हिंदी के विद्वान भी इस अध्ययन मंडल से जुड़े हुए हैं लेकिन बहुत कम संख्या में। आज भी जर्मनी में हिंदी अध्यापन से जुड़े अनेक विद्वान इस ग्रुप से नहीं जुड़े हुए हैं। कुछ दशकों से *भारत-विद्या* की जगह कुछ संस्थानों में *दक्षिण एशिया* शब्द का प्रयोग किया जाने लगा है। इस प्रयोग के संदर्भ में कुछ लोग यह दावा करते हैं कि *दक्षिण एशिया* शब्द का प्रयोग इसलिए आवश्यक है क्योंकि एक तो पाकिस्तान जैसे देश *भारत-विद्या* शब्द का विरोध करते हैं और दूसरे कि आज के दृष्टिकोण से*भारत-विद्या* जैसे शब्द को संभवतः सत्ता के लिए आधिपत्य के प्रयासों के साथ जोड़कर देखा जाता है।[30] अमेरिका में *दक्षिण एशिया* शब्द का प्रयोग काफ़ी पहले से किया जा रहा है (Brown, 1964)।

सन् 1947 में भारतीयों को अँग्रेज़ी उपनिवेशवादी साम्राज्य से स्वतंत्रता मिलने के साथ ही तत्कालीन भारत देश का धर्म ने नाम पर बँटवारा भी हुआ और इसके साथ ही भारत और पाकिस्तान दो अलग-अलग देश बने तथा सन् 1971 में पाकिस्तान का पूर्वी

हिस्सा अलग होकर बांग्लादेश बना।[31] भारत के तीन हिस्सों में टूटने का प्रभाव निश्चिततौर पर भारत-विद्या पर भी पड़ना अपरिहार्य था। इसीलिए बीसवीं सदी के छठे दशक से *भारत-विद्या* और *दक्षिण एशिया* संबंधी बहस गंभीरता के साथ आगे बढ़ी और इसके अंतर्गत राजनीति शास्त्र जैसे कुछ नए विषय भी पढ़ाए जाने लगे। भाषाओं के शिक्षण के तरीक़ों में कोई विशेष परिवर्तन नहीं आया। भारत-विद्या विभागों में पढ़ाई की शुरुआत भाषा सीखने से की जाती है और उसके बाद भाषा के माध्यम से ही साहित्य, भाषा शास्त्र, समाज, संस्कृति और इतिहास का अध्ययन किया जाता है। तो स्पष्ट है कि यूरोप में हिंदी का कोई अलग से विभाग नहीं होता बल्कि हिंदी भारत-विद्या अध्ययन की एक भाषा है, जिसके लिए, शास्त्रीय विषयों के अध्ययन की पद्धति के अनुसार, विद्यार्थी को सिर्फ़ मूल पाठ अथवा विषय-वस्तु को पढ़ना, समझना और उसका अनुवाद करना आना चाहिए। बोलचाल की भाषा को अधिक महत्त्व नहीं दिया जाता। इसका अर्थ यह हुआ कि ज़रूरी नहीं है कि किसी छात्र को हिंदी भाषा उतने ही अच्छे से बोलनी भी आये, जितने अच्छे से वह भाषा को पढ़-लिख सकता है और उसका सटीक अनुवाद कर सकता है। अधिकतर विश्वविद्यालयों में भारत-विद्या का अध्ययन भाषा, साहित्य, संस्कृति और इतिहास तक ही सीमित रहता है। हिंदी मीडिया और हिंदी सिनेमा भी कुछ विश्वविद्यालयों में पढ़ाया जाता है। और हाँ, अनुवाद इन सबके केंद्र में रहता है। सही और सटीक अनुवाद पर बहुत ध्यान दिया जाता है ताकि सामाजिक और सांस्कृतिक अंतर को भी ठीक से समझा जा सके। हाइडेलबर्ग जैसे भारत-विद्या संस्थानों में भाषा और साहित्य के साथ ही मानव-विज्ञान, राजनीति शास्त्र और भूगोल जैसे विषय भी पढ़ाए जाते हैं।

लेकिन इस तरह की सुविधा बहुत ही कम विश्वविद्यालयों में उपलब्ध है। हिंदी शिक्षण सामग्री में हिंदी कहानी, कविता, उपन्यास, एकांकी, निबंध और रपटें भी पढ़ी जाती हैं किंतु कम मात्रा में। कुछ संस्थानों में छात्र अपनी रुचि से हिंदी एकांकी करते हैं परंतु दुर्भाग्य से एकांकी मुख्य हिंदी शिक्षण सामग्री के अंतर्गत नहीं आती। हिंदी नाटक और कविता विधाओं पर बहुत ही कम शोध-प्रबंध लिखे जाते हैं जबकि संस्कृत काव्य में काफ़ी शोध-प्रबंध लिखे जाते हैं।

सन् 1991 में भारतीय बाज़ार को दुनिया के लिए खोले जाने के साथ ही नई संभावनाएँ भी पैदा हुईं। दुनिया में भारत की स्थिति मज़बूत हुई और भारत की उपस्थिति अनेक क्षेत्रों में बढ़ी। चाहे वह आर्थिक और राजनैतिक दृष्टि से हो अथवा सांस्कृतिक दृष्टि से या फिर सिनेमा एवं पर्यटन-पर्यटकों, भोजन-भोजनालयों की दृष्टि से। मुझे बहुत अच्छी तरह से याद है, जब मैं कोई छै सप्ताहों के लिए 1998 में पहली बार जर्मनी आया था, तो उस समय म्युंस्तर, नॉर्दराइन-वेस्तफ़ालन में भारतीय मसाले, आटा-चावल इत्यादि – सिर्फ़ एक श्रीलंकन दुकान पर ही मिलते थे। उस श्रीलंकन दुकान में सामान की बिक्री तो बहुत होती थी लेकिन ग्राहक सिर्फ़ दक्षिण एशिया के ही लोग होते थे। दुकानदार के अनुसार जर्मन सिर्फ़ सप्ताह में एकआध ही आते थे। आज की तारीख़ में आपको हर सुपर मार्केट में भारतीय उत्पाद मिल जाते हैं। हल्दी के तो अब सैकड़ों उत्पाद मिल रहे हैं – चाय से लेकर दूध, पाउडर, पेस्ट और कैप्सूल भी। यही नहीं, भारत में कार्यरत जर्मन कंपनियों और जर्मनी में कार्यरत भारतीय कंपनियों की संख्या में पिछले कुछ वर्षों में बड़ी बढ़ौतरी हुई है। साथ ही भारत सरकार द्वारा भारतीय सांस्कृतिक संबंध

परिषद के माध्यम से दुनियाभर में हिंदी के प्रचार एवं प्रसार के लिए दर्जनों हिंदी चेयर्स और विश्व हिंदी दिवस जैसे कार्यक्रम भी शुरू किए गए हैं। यूरोप में एक और नई शुरुआत हिंदी और देवनागरी लिपि को लेकर हुई है, और वह है देवनागरी में लिखे गये संकेतकों का प्रयोग और सार्वजनिक बहस में राजनेताओं द्वारा हिंदी नारों का प्रयोग।

सन् 2006 में फ़्रांकफ़ुर्त में हुई पुस्तक प्रदर्शनी में भारत ने जब सहभागी देश के रूप में भागीदारी की, तो उससे भी आमजन में हिंदी और भारत के प्रति दिलचस्पी बढ़ी। उस समय लगभग सौलह हिंदी कृतियों को जर्मन अनुवाद के लिए औपचारिक रूप से स्वीकार किया गया था। अनुवाद वास्तव में सांस्कृतिक व्यापार की प्रकृति का एक विश्वसनीय सूचक माना जाता है, जो विभिन्न सांस्कृतिक वर्गों के मध्य घटित होता है। अतः साहित्य के अनुवाद को और अधिक प्रोत्साहन दिये जाने की परमावश्यकता है, जिसके लिए दोनों देशों की सरकारें चाहें, तो आराम से और आसानी से धन उपलब्ध करवा सकती हैं। किंतु ऐसा संभवतः अभी नहीं होने जा रहा। योग और आयुर्वेद ने भी पश्चिम में भारतीय संस्कृति एवं ज्ञान परंपरा के प्रति लोगों में जागृति जगायी है। निजी संस्थानों में एवं फ़ोल्क्सहोखशूले (आमजन और मुख्यतः गैर-छात्रों के लिए हर शहर में स्थापित राजकीय अध्ययन संस्थान) जैसी शिक्षण संस्थाओं ने भी हिंदी भाषा के पाठ्यक्रम शुरू कर लिए हैं लेकिन क्या इस सबसे भारत-विद्या के विद्यार्थियों की संख्या बढ़ी है या नहीं? इसे अभी निश्चिततौर पर कहना संभव नहीं।

इसे विरोधाभास नहीं तो और क्या कहा जा सकता है कि एक तरफ़ तो जर्मनी में भारतीय संस्कृति और भाषा एवं साहित्य का प्रसार बढ़ रहा है और दूसरी तरफ़ भारत-

विद्या के संस्थान बंद होते जा रहे हैं। पिछले पंद्रह-बीस वर्षों में कम से कम पाँच विश्व-विद्यालयों में भारत-विद्या की पढ़ाई बंद कर दी गयी है और दो-तीन अन्य विश्वविद्यालयों में भविष्य में बंद होने की चर्चा चल रही है। इसका अर्थ यह हुआ कि आने वाले पाँच-सात वर्षों के बाद हिंदी सिर्फ़ दस-ग्यारह विश्व-विद्यालयों में ही जीवित रह पाएगी और यह भी निश्चित नहीं कि अन्य जर्मन विश्व-विद्यालय अपने भारत-विद्या विभाग को भविष्य में बंद नहीं करेंगे। संभावना इसकी अधिक है कि भविष्य में कुछ अन्य विश्व-विद्यालय अपने भारत-विद्या विभाग को यह कहकर बंद कर सकते हैं कि उनको चलाने के लिए धन उपलब्ध नहीं है। अब प्रश्न उठता है कि इतने सारे संस्थान क्यों बंद हो रहे हैं? क्या इसके पीछे, जैसा कि आमतौर पर कारण दिया जाता है, वास्तव में धनाभाव ही है या इसके कुछ अन्य कारण भी हैं? क्या यह कहा जा सकता है कि संस्थानों और प्रोफ़ेसरों की संख्या कि दृष्टि से जर्मनी में भारत-विद्या की एक अल्पकालिक सफलता थी? क्योंकि आधुनिक भारत-विद्या के अधिकत्तर संस्थानों और चेयरों की स्थापना तो बीसवीं शताब्दी के छठे दशक में ही की गयी थी। इस प्रश्न पर विचार करना दिलचस्प होगा कि भारत-विद्या के संस्थानों के बंद होने के पीछे वास्तव में कौन-कौन-से कारण हैं। इस पर विचार किए जाने की आवश्यकता इसलिए भी है कि भविष्य में और अधिक नुक़सान न हो। इस आलेख में समयाभाव की वजह से इस प्रश्न पर विचार करना संभव नहीं लेकिन शायद अगले आलेख में संभव हो।

हिंदी सीखने वाले पश्चिमी देशों के छात्र-छात्राओं के लिए यह बात काफ़ी हतोत्साहित करने वाली है कि जब वे भारत जाते हैं और किसी भारतीय से बात करते हैं,

तो उन्हें उत्तर अधिकतर अँग्रेज़ी में मिलता है। भारतीय लोग स्वयं हिंदी से कहीं अधिक प्राथमिकता अँग्रेज़ी को देते हैं और उसके पीछे तर्क होता है कि "अँग्रेज़ी तो पावरफ़ुल लैंग्वेज है, इससे व्यक्ति के स्टैंडर्ड का पता चलता है।" लेकिन इसके पीछे एक और महत्वपूर्ण कारण है, और वह यह है कि दूसरों को सुखद महसूस कारवाने के लिए भारतीयों ने अपने-आप को दूसरे की स्थिति में ढालने की प्रवृति विकसित कर ली है। इसे भारतीय सांस्कृतिक स्मृति का हिस्सा भी माना जा सकता है। पचहत्तर वर्षों की स्वतन्त्रता के पश्चात् भी अगर यह स्थिति बनी हुई है कि एक रिक्शे वाला भी गोरे लोगों को देखकर अँग्रेज़ी बोलना शुरू कर देता है, चाहे वह कितनी भी टूटी-फूटी क्यों न हो और उसे उसका वास्तविक अर्थ भी मालूम न हो, तो यह एक बहुत गंभीर और हर दृष्टि से और हर स्तर पर विचारणीय विषय है। भारत में हिंदी के नाम पर हो रही राजनीति और सरकारी नुमाइंदों में सेल्फ़ प्रमोशन की प्रवृति ने हिंदी को बहुत नुक़सान पहुँचाया है। हिंदी के प्रचार एवं प्रसार में विश्व हिंदी सचिवालय और केंद्रीय हिंदी संस्थान जैसी संस्थाओं का योगदान भी अभी अपेक्षा से कहीं कम है। व्हाट्सएप, फ़ेसबुक, ट्विटर और ज़ूम पर चलाये जा रहे कार्यक्रम एकदम व्यक्ति केंद्रित होते हैं, जिसका असर हिंदी सीखने वाले की रुचि पर भी पड़ता है। ऑनलाइन कार्यक्रमों में विवधता लाने की आवश्यकता है। हिंदी भाषा-संस्थानों के शिक्षण में गुणात्मक सुधार

लाने के लिए ऐसे शिक्षकों को शामिल किया जाना चाहिए, जो वास्तव में ज़मीन पर कार्य कर रहे हों और जिनको विदेशों में हिंदी शिक्षण का अनुभव हो एवं जिनका शिक्षार्थियों से सीधा संबंध हो। प्रवासी हिंदी लेखन का जितना प्रचार हो रहा है दुर्भाग्य से उस तरह से प्रवासी साहित्य की गुणवत्ता में सुधार नहीं दिख रहा है। यह विचारणीय विषय है कि अगर मॉरिशस, सूरीनाम और फ़िजी को छोड़ दिया जाय तो विदेशों में पैदा हुई भारतीयों की पहली पीढ़ी में आजतक एक भी हिंदी लेखक नहीं बना। नेपाल और पाकिस्तान की गिनती इसलिए उचित नहीं क्योंकि ये देश सांस्कृतिक, सामाजिक, धार्मिक और भाषिक रूप से भारत से अलग नहीं हैं। प्रवासी हिंदी के जितने भी लेखक हैं, उन सभी का जन्म भारत में हुआ है और अधिकतर ऐसे हैं, जिन्होंने भारत में ही लिखना शुरू कर दिया था। प्रवासी लेखकों में अभी तक सिर्फ़ कुछ गिने-चुने ही लेखक हैं, जो वास्तव में गुणवत्ता पर ध्यान देते हैं। हिंदी में ऐसा क्यों है? जबकि अँग्रेज़ी में अनेक ऐसे भारतीय मूल के लेखक हैं, जिनका जन्म भारत से बाहर हुआ है और उनको साहित्य के बड़े महत्वपूर्ण पुरस्कार मिल चुके हैं। हमें इस पर बहुत ईमानदारी और गहनता से विचार करने की आवश्यकता है कि हिंदी में क्यों वह सबकुछ नहीं हो पता, जो अँग्रेज़ी में संभव है। हिंदी के एक भी लेखक को नोबल पुरस्कार नहीं मिल पाया। हम हर बार राजनीति की दुहाई देकर इसकी इतिश्री नहीं कर सकते। इस बार गीतांजलि श्री के उपन्यास “रेत समाधि” के अँग्रेज़ी अनुवाद को बूकर पुरस्कार अवश्य मिल गया और इससे हिंदी वालों के लिए एक खिड़की तो खुली है परंतु यह काफ़ी नहीं है। सोचने और मनन करने की परम आवश्यकता है और एक बात जो मुझे बहुत ही महत्वपूर्ण लगती है,

वह है – हिंदी वाले कम से कम भारतीय तो रहें। हमें कम से कम भाषा के मामले में उपनिवेशवादी मानसिकता से बाहर निकलने की ज़रूरत है। कुछ लोगों का मानना है कि भारत को और भारतीय समाज को आराम से अँग्रेज़ी के माध्यम से समझा जा सकता है। यह विचार अपने-आप के साथ धोखा करने जैसा लगता है। क्योंकि पहले तो आज भी भारत में अधिक-से-अधिक 13-15 प्रतिशत लोग ही अँग्रेज़ी समझ पाते हैं और जो समझते भी हैं, उनके बोलने का ढंग अँग्रेज़ों और अमरीकियों से बहुत अलग है। यानि भारतीय अँग्रेज़ी में भारतीयता का पुट मिलता है, जिसे कई बार पश्चिमी लोगों के लिए समझना आसान नहीं होता। दूसरे, अँग्रेज़ी भारत की भाषा नहीं बल्कि एक विदेशी भाषा है, जिसका संबंध उन पर राज करने वाली शक्ति से है। हमें इस बात को भी अवश्य ध्यान में रखना चाहिए कि हर भाषा और उसके शब्दों का अपना भूगोल, सामाजिक एवं सांस्कृतिक इतिहास होता है। भारतीय जनगणना 2011 के अनुसार भारत में लगभग 44 प्रतिशत लोग हिंदी बोलते हैं और वह भारत की संपर्क भाषा बन चुकी है। वास्तव में हिंदी के भारत में संपर्क भाषा के प्रमाण फ्रांस्वा मारी दे तूर्स के हिंदी व्याकरण में भी मिल जाते हैं। विदित हो कि हिंदी आजतक ज्ञात हिंदी पहला व्याकरण 1698 में केतेलार और दूसरा व्याकरण 1704 में दे तूर्स द्वारा लिखे गए थे और दोनों गुजरात के सूरत में लिखे गए, जो हिंदी भाषी प्रदेश नहीं है। देवनागरी लिपि के प्रयोग की दृष्टि से दे तूर्स का हिंदी व्याकरण पहला व्याकरण माना जा सकता है। यह तर्क भी कहीं नहीं ठहरता कि भारत में सभी व्यवसायी लोग अँग्रेज़ी समझते हैं क्योंकि अब ऐसे भी बड़े व्यवसायी भारत में हैं, जिनकी शिक्षा अँग्रेज़ी माध्यम से नहीं हुई और न ही उन्होंने कभी अँग्रेज़ी सीखी है। आज

भी ऐसे लोगों को समझने और उनके साथ व्यापार करने के लिए हिंदी का बड़ा महत्व है। भाषा सिर्फ़ विचारों का आदान-प्रदान करने का माध्यम ही नहीं बल्कि उसका संबंध व्यक्ति की पहिचान, पृष्ठभूमि, तर्कसंगतता और विचारों से भी है। भाषा सांस्कृतिक, सामाजिक, ऐतिहासिक एवं भौगोलिक कारकों की संवाहक भी है। अतः भारत और उसके समाज एवं उसकी सांस्कृतिक विरासत को समझने के लिए सिर्फ़ अँग्रेज़ी से काम नहीं चल सकता। इसके लिए हमें हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं का दामन पकड़ना ही पड़ेगा।

[1] विस्तृत जानकारी के लिए देखिए प्रो. स्लाए का आलेख – chrome-extension://efaidnbmnnnibpcajpcglclefindmkaj/http://fiindolo.sub.uni-goettingen.de/indolpos/slaje_zdmg2003.pdf

[2] कुछ लोगों को नेपाली को भारतीय भाषा लिखने पर एतराज़ हो सकता है किंतु भारतीय संविधान की आठवीं अनुसूची में जो 22 भारतीय भाषाएँ शामिल हैं, उनमें नेपाली भी है। नेपाली को 71वें संविधान संशोधन अधिनियम 1992 ई. में भारतीय नेपालियों की माँग पर जोड़ा गया था।

[3] मिख्याएल वित्सेल ने इस पर विस्तार में लिखा है। - "Philology is of course not, as a local Buddhist colleague once instructed me, "the study of *a* word," nor just the slow reading of dusty old books. Rather, with the felicitous 1988 definition of a Harvard Classics conference ("*What is philology?*"): "philology is a *Kulturwissenschaft* based on texts", the study of a civilization based on its texts. As such it is different from the approaches of archaeology, history, sociology, anthropology or religious studies, in which texts play some role, though not necessarily the central one. Moreover, philology does not ignore these approaches, as is wrongly assumed by those who attack it. Rather, philological study comprehends both the investigation of the available written and oral texts of a civilization *and* employs a range of tools (*Hilfswissenschaften*) necessary for understanding the texts; these tools deal with the *realia* met with in the texts and they range from archaeology to writing systems, and from astronomy to zoology. We have to be "*inside the texts – beyond the texts*," the programmatic title of a recent book on Vedic studies." - Electronic Journal of Vedic Studies (EJVS), Vol. 21, 2014 Issue 3, p. 9-91 ©) ISSN1084–75613 http://www.ejvs.laurasianacademy.com

[4] Dharampal-Frick 1994, Indien im Spiegel deutscher Quellen der Frühen Neuzeit (1500–1750). Studien zu einer interkulturellen Konstellation. Tübingen: Max Niemeyer (Frühe Neuzeit, 18)

[5] Arnulf Camps/Jean-Claude Muller, 1988 और Brandt and Hackenbroch, 2017:37

[6] केतेलार के हिंदुस्तानी व्याकरण का तो प्रो. तेज भाटिया (1983), भाटिया एवं मचिदा (2008) और कुछ अन्य विद्वान अध्ययन कर चुके हैं किंतु दे तूर्स के शब्दकोश और व्याकरण पर लगभग 2011 तक कोई विशेष कार्य नहीं हो पाया। प्रो. जुनिल्ला ग्रेन-एकलुंद, उप्पसाला विवि के अनुसार उनको रोम से ते तूर्स की पांडुलियों की प्रतियाँ मिलीं और तब जाकर उन्होंने 2011 में इस दे तूर्स की पांडुलियों पर एक परिचयात्मक आलेख लिखा। मिशनरी विद्वानों पर कार्य करने वाले इटली के विद्वान पोलो आरान्हा भी दे तूर्स की मिशनरी गतिविधियों पर आलेख प्रकाशित कर चुके हैं। अब अच्छी ख़बर यह है कि दे तूर्स के हिंदुस्तानी शब्दकोश पर उप्पसाला विश्वविद्यालय में परियोजना चल रही है, जिसमें मैं स्वयं भी शामिल हूँ और दे तूर्स के हिंदुस्तानी व्याकरण पर मैं स्वयं कार्य कर रहा हूँ। दो-तिहाई पांडुलिपि का लैटिन से जर्मन और अँग्रेज़ी में अनुवाद हो चुका है और अधिकतर सारणियों पर भी कार्य हो चुका है। आशा है कि आने वाले दो वर्षों में यह कार्य पुस्तक का रूप ले लेगा।

[7] Nariman, 1992:141

[8] योहान्न वोल्फ़गांग फ़ॉन गोएथे, फ़्रीडरिक शिल्लर और क्रिस्टोफ़ मार्टिन वीलंड के साथ हेर्डर को जर्मन ज्ञानोदय अथवा प्रबोधन युग (1650-1780) के सबसे प्रभावशाली लेखक और विचारक माना जाता है। इन्हें वाइमार के चार क्लासिकल सितारों का दर्ज़ा हासिल है।

[9] Johann Gottfried v. Herders Sämmtliche Werke in vierzig Bänden: Zur schönen Literatur und Kunst. Cotta'sche Verlag, Stuttgart, 13. Band, p.303; Carmen Brandt und Kirsten Hackenbroch, 2017, p.39, गोएथे की कृतियों के बारे में भारत संबंधी चेतना और विचार पर अधिक जानकारी के लिए इसे भी देखें – Mommsen, 2015

[10] Zahme Xenien 2, देखें : http://www.zeno.org/Literatur/M/Goethe,+Johann+Wolfgang/Gedichte/Gedichte+(Ausgabe+letzter+Hand.+1827)/Zahme+Xenien और "Goethes indische Kuriositäten" Gerhard Lauer द्वारा लिखित : https://docplayer.org/22755386-Goethes-indische-kuriositaeten.html

[11] Adluri & Bagchee, 2014, भारतविदों की भारत संबंधी कल्पना के लिए देखें Inden, 2000, Imagining India

[12] वराहमिहिर (वर:मिहिर) छठी शताब्दी के भारतीय गणितज्ञ एवं खगोलज्ञ और चंद्रगुप्त विक्रमादित्य के नवरत्नों में से एक थे। उन्होंने तीन महत्वपूर्ण पुस्तकें बृहज्जातक, बृहत्संहिता और पंचसिद्धांतिका लिखीं। इन पुस्तकों में त्रिकोणमिति के महत्वपूर्ण सूत्र दिए हुए हैं।

[13] सातवीं शताब्दी के प्रमुख भारतीय गणितज्ञ, जिन्होंने संभवतः सबसे पहले संख्याओं को दाशमिक पद्धति में लिखना आरम्भ किया। उन्होंने आर्यभट्ट की कृतियों पर भी टीका लिखी थी।

[14] ब्रह्मदेव ग्यारहवीं-बरहवीं सदी के प्रसिद्ध भारतीय ज्योतिषविद् और गणितज्ञ थे और आर्यभट प्रथम की कृतियों का भाष्य "करणप्रकाश" लिखने के लिए जाने जाते हैं। इस ग्रन्थ में त्रिकोणमिति और इसके ज्योतिष में उपयोग की चर्चा है। इस ग्रन्थ के आधार पर बने पंचांगों की तिथि आदि का उपयोग माध्वसम्प्रदाय के वैष्णवों में बहुतायत से प्रचलित है।

[15] भास्कर द्वितीय (1114 – 1185) को भास्कराचार्य के नाम से भी जाना जाता है, जो एक प्रसिद्ध गणितज्ञ एवं ज्योतिषी थे। इन्होंने सिद्धान्त शिरोमणि नामक ग्रंथ की रचना की, जिसमें लीलावती, बीजगणित, ग्रहगणित तथा गोलाध्याय नामक चार भाग हैं - अंकगणित, बीजगणित, ग्रहों की गति तथा गोले से संबन्धित गणित हैं।

[16] पल्हवी फ़ारसी में पंचतंत्र का पहला अनुवाद लगभग 500 CE में और उसके बाद पंचतंत्र का सन् 530 पह्लवी (पुरानी फ़ारसी) और 570 पुरानी सीरियन अनुवाद; 750 में अरबी अनुवाद; 10 और 11 शताब्दी में अरबी से सीरियन में अनुवाद, 11 सदी में अरबी से ग्रीक में अनूदित; 12वीं सदी में हिब्रू में; 1263 और 1278-1280 में लैटिन अनुवाद; 1450 और 1500 सौ के बीच अन्टोनियस फ़ॉन फ्फ़ोरर ने लैटिन से जर्मन में अनुवाद किया; 1493 स्पैनिश अनुवाद; 1548 में इतालवी में और 1556 में फ्रेंच में; 1552 में एंटोनियस डोनिस द्वारा दूसरा इतालवी अनुवाद; 1570 और 1601 में अँग्रेज़ी अनुवाद "the fables of Bidpai"; 1142 अबुल-माली-नस्रुल्लाह इब्न मुहम्मद इब्न अब्दुल-हामिद द्वारा फ़ारसी अनुवाद "किताब कलीला व डिमना"

[17] जर्मन ओस्त इंदिशे कंपनी या ओस्तएंदे कंपनी की स्थापना 1722 में चार्ल्स VI ने और प्रूसिआन एशियाटिक कंपनी की स्थापना 1751 एवं प्रूसिआन बेंगाल कंपनी की स्थापना 1753 में प्रूसिआ के राजा फ्रेडरिक II ने की थी। अधिक जानकारी के लिए देखें - BAELS, J. (1975) De Generale Keizerlijke en Koninklijke Indische Compagnie gevestigd in de Oostenrijkse Nederlanden, genaamd, de Oostendse Compagnie. Ostend, pp. 22-55; RING, V. (1890) Astatische Handlungscompagnien Friedrich des Grossen. Ein Beitrag zur Geschichte des preussischen Seehandels und Aktienwesens. Berlin; Koninckx, C. (1996) Ownership in East India Company Shipping: Prussia, Scandinavia, and the Austrian Netherlands in the 18th Century. In: Pieter Emmer and Femme Gaastra (ed.) (1996), The Organization of Interoceanic Trade in European Expansion, 1450-1800. Variorum.

[18] Stache-Rosen, 1980

[19] Schlender, 2000

[20] Wilhelm, 2012; Brückner und Steiner, 2012, वर्तमान में जर्मनी में संस्कृत संबंधी सूचना के लिए देखें – Soni and Soni 2012

[21] Brochlos, 2002; Strauch, 2014

[22] बॉन 1818, बर्लिन एवं वुर्ज़बुर्ग 1821 और म्यूनिख़ 1826, हैम्बर्ग 1914,

[23] Said, 1979

[24] प्राच्य विद्या में सिर्फ़ पूर्व के ही देश शामिल नहीं थे बल्कि उत्तरी अफ़्रीका के देश भी

[25] क्या वास्तव में जर्मन विद्वान और विशेषकर मिशनरी सिर्फ़ ज्ञानार्जन की वजह से भारतीय भाषाओं का अध्ययन और दस्तावेज़ीकरण कर रहे थे, इस विषय पर अभी तक कोई विस्तृत अध्ययन नहीं हुआ है। कुछ ऐसे तथ्य भी उपलब्ध हैं, जो इस ओर इशारा करते हैं कि हेल्मूथ फ़ॉन ग्लाजेनाप (1891-1963) जैसे जर्मन विद्वान विश्व-युद्ध के दौरान सेना की मदद कर रहे थे। प्रथम विश्व-युद्ध के संदर्भ में भारतीय साहित्य में भी हिंदी-उर्दू बोलने वाले जर्मन जासूसों का ज़िक्र मिलता है जैसे कि चंद्रधर शर्मा गुलेरी की कहानी “उसने कहा था” में।

[26] हैम्बर्ग विश्वविद्यालय के भारत-विद्या विभाग के इतिहास के लिए देखें – Wezler, 2021, pp. 465-488

[27] पूरी सूची के लिए देखिए : www.dmg-web.de/indologie/deu.html

[28] https://www.dw.com/de/meilensteine-der-dw-geschichte/a-56406878

[29] http://asienforschung.de/about/mission-statement/

[30] देखें : “Die deutsche Südasienforschung im Wandel der Zeit“ von Carmen Brandt und Kirsten Hackenbroch, Asien 144 (July 2017), p. 37

[31] Von Tunzelmann, 2007

संदर्भ ग्रंथ

- Adluri, Vishawa and Bagchee, Joydeep (2014). *The Nay Science: A History of German Indology*. New York: Oxford University Press.
- Bhatia, Tej K and Machida, Kazuhiko (ed.) (2008). The Oldest Grammar of Hindūstānī. Contact, Communication and Colonial Legacy. Historical and Cross-Cultural Contexts, Grammar Corpus and Analysis. 3 Vols. Tokyo: Research Institute for Languages and Cultures of Asia and Africa.
- Bhatia, Tej K (1987). A History of the Hindi Grammatical Tradition: Hindi-Hindustani Grammar, Grammarians, History and Problems. Leiden: E. J. Brill.
- Bhatia, Tej K (1983). *The Oldest Grammar of Hindustani*. In: Syracuse Scholar (1979-1991), Vol. 4, Issue 2., Art. 10.
- Brandt, Carmen and Hackenbroch, Kirsten (2017). Die deutsche Suedasienforschung im Wandel der Zeit. Asien, Vol. 144, pp. 36-57.
- Brochlos, Astrid (2002). Das Seminar für Orientalische Sprachen an der Berliner Universität und die japanbezogene Lehre. In: Gerhard Krebs (Hg.) (2002) Japan und Preußen. München: Ludicium-Verlag, S.145-162).
- Brown, W. Norman (1964). South Asia Studies: A History. In: Annals of the American Academy of Political and Social Science, Nov., 1964, Vol. 356, The Non-Western World in Higher Education, pp. 54-62.
- Brückner, Heidrun und Steiner, Karin (Hg.) (2012). 200 Jahre Indienforsschung – Geschichte(n), Netzwerke, Diskurse. Stuttgart: Harrassowitz Verlag.
- Camps, Arnulf (2000). Studies in Asian mission history, 1956-1998. Leiden: Brill.
- Camps, Arnulf; Muller, Jean-Claude (1988). The Sanskrit grammar and manuscripts of father Heinrich Roth S.J. (1620-1668) : facsimile edition of Biblioteca Nazionale, Rome, Mss. Or. 171-172. Leiden: Brill.
- De Tours, François-Marie (1703). Thesaurus Linguae Indianae seu Mogolanae. Bibliothèque Nationale de France. MS 839 (Indien 200) and MS 840 (Indien 201).
- De Tours, François-Marie (1704). Grammatica Linguæ Indianæ Vulgaris sive Mogolanæ. Archivio Storico di Propaganda Fide. Miscellanee Generale, vol. XII, pp. 302r-400v.
- Dharampal-Frick, Gita (1994). Indien im Spiegel deutscher Quellen der Frühen Neuzeit (1500–1750). Studien zu einer interkulturellen Konstellation. Tübingen: Max Niemeyer (Frühe Neuzeit, 18).
- Framke, Maria; Lötzke, Hannelore und Strauch, Ingo (Hg.) (2014). Indologie und Südasienstudien in Berlin: Geschichte und Positionsbestimmung. Berlin: trafo Wissenschaftsverlag.
- Inden, Ronald (2000 [1990]). *Imagining India. Bloomington* (et al.): Indiana University Press.
- Ketelaar, Joan Josua (1698). Instructie off Onderwijsinge der Hindoustanse en Persiaanse talen, nevens hare declinatie en Conjugatie, als mede vergeleijkinge, der hindoustanse med de hollandse maat en gewighten mitsgaders beduijdingh eenieger moorse namen etc.
- Lauer, Gerhard (2012). Goethes Indische Kuriositäten. In: Figurationen des Grotesken in Goethes Werken (pp.159-179). Publisher: Aisthesis Editors: Edith Kunz, Dominik Müller, Markus Winkler.
- Mommsen, Katharina (Hg.) (2015). Die Entstehung von Goethes Werken: in Dokumenten. Band VII; Hackert – Indische Dichtungen. Begründet von Momme Mommsen; fortgeführt und herausgegeben von Katharina Mommsen; Redaktion Ute Maak. Berlin (et al.): Walter de Gruyter.
- Nariman, J. K. (1992 [1919]). *Literary History of Sanskrit Buddhism*. Delhi: Motilal Banarsidass Publishers Pvt. Ltd.
- Said, Edward (1979). *Orientalism*. New York: Vintage.
- Schlender, Friedemann (2000). Traumflieger ohne Landeplatz: Max Müller – eine deutsche Legende in Indien. Berlin: Vistas Verlag GmbH.
- Soni, L. and Soni, J. (2012). *Sanskrit Studies in Austria, Germany, and Switzerland*. In: Radhavallabh Tripathi, 2012 (ed.). Sixty Years of Sanskrit Studies (1950–2010), Vol. 2: Countries other than India. Delhi: Rashtriya Sanskrit Sansthan.

- Stache-Rosen, Valentina (1990 [1880]). German Indologists: Biographies of Scholars in Indian Studies Writing in German. With a Summary on Indology in German Speaking Countries. Second revised edition by Agnes Stache-Weiske, 1990, New Delhi: Max Mueller Bhavan.
- Strauch, Ingo (2014). *„Die Berliner Indologie und Südasienkunde im Strudel der Hochschulpolitik der 1990er und 2000er Jahre*. Dokumentation einer wissenschaftspolitischen Fehlleistung“. In: Framke, Maria; Lötzke, Hannelore; Strauch, Ingo (Hg.): *Indologie und Südasienstudien in Berlin: Geschichte und Positionsbestimmung*. Berlin: Trafo, 305–329.
- Von Herder, Johann Gottfried (1861). Johann Gottfried v. Herders Sämmtliche Werke in vierzig Bänden: Zur schönen Literatur und Kunst. Stuttgart: Cotta’sche Verlag., 13. Band, p.303.
- Von Tunzelmann, Alex (2007). Indian Summer: The Secret History of the End of an Empire. London: McClelland & Stewart.
- Wezler, Albrecht (2021). *Manuskripte, Sprachen, philosophische Lehren und Kulturgeschichte. Indologie, Tibetologie und Buddhismuskunde an der Hamburger Universitaet.* In: Nicolaysen, Rainer; Krause, Eckart und Zimmermann, Gunnar B. (Hg.). 100 Jahre Universität Hamburg: Studien zur Hamburger Universitäts- und Wissenschaftsgeschichte in vier Bänden. Goettingen: Wallstein Verlag. Band 2, S. 465-488.
- Wilhelm, Friedrich (2012). *Zur Geschichte der Indologie an der Universität München.* In: Heidrun Brückner und Karin Steiner (Hg.) (2012). 200 Jahre Indienforschung – Geschichte(n), Netzwerke, Diskurse. Wiesband: Harrassowitz Verlag.
- Witzel, Michael (2014). Textual criticism in Indology and in European philology during the 19th and 20th centuries. Electronic Journal of Vedic Studies (EJVS), Vol. 21, 2014 Issue 3, pp.9-91.

http://www.ejvs.laurasianacademy.com/

वेबपेज

https://docplayer.org/22755386-Goethes-indische-kuriositaeten.html, 03.10.2021.

https://www.iaaw.hu-berlin.de/de/region/suedasien/seminar/geschichte/geschichte, 02.10.2021.

http://www.zeno.org/Literatur/M/Goethe,+Johann+Wolfgang/Gedichte/Gedichte+(Ausgabe+letzter+Hand.+1827)/Zahme+Xenien

रेणु की जन्मशती पर दो लेख

रेणु : एक पुनर्मूल्यांकन

हाइन्त्स वर्नर वेस्लर

उप्साला विश्वविद्यालय, स्वीडन

इंदु प्रकाश पांडेय ने 2008 में प्रकाशित अपनी मार्गदर्शक आलोचनात्मक कृति 'हिंदी के अधुनातन प्रयोगधर्मी उपन्यास' में फणीश्वरनाथ रेणु के 'मैला आँचल' को 'हिंदी का सर्वश्रेष्ठ उपन्यास' बताया। हिंदी प्रेमियों की सहमति है कि हाँ, प्रेमचंद लेखकराज हैं और इनकी सबसे बड़ी कृति इनका उपन्यास 'गोदान' है। पर मामला इतना आसान तो नहीं है। प्रेमचंद और रेणुजी के बीच तुलना करना बेकार है। आधुनिक हिंदी उपन्यासकारों में कोई एक ही लेखकराज नहीं है।

और इसमें कोई शक नहीं कि रेणु एक बड़े लेखक थे। न सिर्फ़ इसलिए कि 1954 में प्रकाशित 'मैला आँचल' ने एक पूरी विधा को नाम दिया था जिसे 'आंचलिकता' कहते हैं। 1995 से रेणुजी की रचनावली उपलब्ध है। भारत यायावर ने इनकी बहुत सारी रचनाएँ इकट्ठा करके हिंदी की दुनिया को समृद्ध किया है। उन्हें वही श्रेय मिलना चाहिए जो डॉ. रामविलास शर्मा को प्रेमचंद रचनावली को मार्गदर्शित करने के लिए मिला है। [1] [2]

जिस तरह से प्रेमचंद उर्दू में और हिंदी में लिखते थे हालाँकि इनकी मातृभाषा भोजपुरी थी उसी तरह से रेणु घर में मैथिली बोलते थे और हिंदी में लिखते थे। उनका

ज़्यादातर लेखन हिंदी में है। क्योंकि रचनावली में इनकी मैथिली की कुछ कृतियाँ भी मिलती हैं और कुछ नेपाली में भी।

आख़िर में आंचलिकता क्या चीज है? इंदु प्रकाश पांडेय इसको एक 'शिल्पविधि' कहते हैं। वक़्त और जगह, पात्रों का विवरण और विकास[3][4], कथानक और भाषा, यह सब इसमें अंतर्निहित है। यह नहीं है कि आंचलिकता का मतलब है देहाती या पिछड़ेपन का विवरण। गो[5][6][7] कि लोग या पाठक अपनी कुर्सी पर बैठकर अपनी ख़ुशी मनाए कि वह खुद इस अंचल का वासी नहीं है। आधुनिक हिंदी साहित्य ज़्यादातर जन साहित्य होता है और इसमें मध्यवर्गीय संबंध सबसे महत्त्वपूर्ण होता है। यही पाठकों और लेखकों का परिवेश है। ज़्यादातर देहात दूर की बात है। छुट्टी के दिनों के लिए यह ठीक हो सकता है, रोमांचक भी हो सकता है, कल्पना का मसला है पर स्थायी रूप से वहाँ बसना एक विचारणीय मामला होता है।

लोठार लुत्से से भेंटवार्ता करते हुए रेणुजी ने कहा था कि हिंदी के लेखकों की गाँव के बारे में जानकारी बहुत ही कमज़ोर है और उन्होंने यह भी कहा था कि सारे लेखकों को ज़बरदस्ती से गाँवों [8][9] में बिठाना और गाँव के कामों में कार्यरत बनाना चाहिए था। यह चीन के सांस्कृतिक क्रांति के दौर की बात है। पर रेणुजी माओवादी नहीं थे और जब वह 'ज़बरदस्ती' लफ़्ज़ इस्तेमाल करते थे तो कहने का मतलब यह नहीं था कि फ़ौजियों से लोगों को डराकर शहर से गाँव ले जाना चाहिए। वे इमरजेंसी के वक़्त सम्पूर्ण क्रांति आंदोलन के पक्ष में थे और सरकारी हिंसा के बिलकुल ख़िलाफ़ थे।

जय प्रकाश नारायण उनके दोस्त थे। एक बात तो बिलकुल साफ़ है कि रेणुजी के लिए सच्चा हिंदुस्तान देहात का हिंदुस्तान था। वे एक क़िस्म के गांधीवादी ज़रूर थे। हाँ, 'मैला आँचल' का 'मेरीगंज' नामक गाँव पिछड़ा तो है पर बाहर से डॉक्टर प्रशांत के साथ आधुनिक चिकित्सा आ रही है और एक तरह से डॉक्टर साहब आधुनिकता के प्रतीक, कार्यकर्ता और आधुनिक अवतार भी हैं। साथ ही डॉक्टर साहब थोड़े भोले भी हैं। इनकी समझ में यह बात बहुत देर से आती है कि प्रेम क्या चीज़ है। कमली के दिल में इनके लिए इतना प्रेम है कि वह प्रेम इनको बीमार बनाता है। बस, कमली को सक्रिय ढंग से इनको दिखाना है कि प्रेम क्या चीज है और तभी उसके जल्दी में गर्भवती होने के चिन्ह दिखने लगते हैं।

यहाँ डॉक्टर प्रशांत के अलावा और भी आधुनिकता के अवतार हैं। बलदेव हैं, जो आज़ादी की लड़ाई का कार्यकर्ता होकर एक सन्यासी की तरह गाँव की उन्नति के सेवक के अलावा और कुछ नहीं बनना चाहते हैं। कांग्रेस ज़मींदारों की पार्टी है। गाँव के यादव जाति के लोग समाजवादी पार्टी के हैं और राजपूत संघ के लोग हैं। यहाँ बिरादरी की सोच और पार्टी राजनीति की अजीब-सी खिचड़ी पक रही है। और वहीं लछमी है, जो भारत माता के स्वरूप की तरह है। उसकी साड़ी मैली ज़रूर है। महंत ने उसका इस्तेमाल किया है फिर भी सबसे ज़्यादा समझदार वही है। क्योंकि इंसानियत, सहानुभूति और सहनशीलता वही दिखाती है।

उपन्यास पढ़ते वक्त ख़तरा तो है कि पहले पढ़ने पर 'मैला आँचल' आधुनिकता और पिछड़ेपन, असभ्य, सनातन, उदासीनता और उत्तर-भारतीय गाँवों के अपरिवर्तनीय

सामाजिक और आर्थिक जीवन के टकराव पर लिखा हुआ एक उपन्यास लगता है पर ऐसा नहीं है। अन्य दृष्टिकोण से परोक्ष रूप में एक गहरे सौंदर्य का भाव भी उपन्यास में दिखता है। इसका पाठ, पाठक में सहानुभूति के साथ तादात्म्य की भावना को जगाता है। उनके साहित्यिक परिप्रेक्ष्य के साथ सभी जाननेवाले उपन्यास के कथाकार वेदांत दर्शन से मानवतावाद तक सभी प्रकार की विचारधाराओं की हिंसक प्रकृति को देखता है। आधुनिकता का मूल तत्व भी हिंसा ही है। 'मानवता के पुजारियों की सम्मलित वाणी गूंजती है पवित्र वाणी' (रेणु 1995, 1: 307)

गरीब, वंचित, निरक्षर होने के बावजूद, गाँव अपने आप में एक अनोखी जगह है जो सामाजिक संपर्क के कई रूपों को हमारे सामने पेश करती है। सामाज और व्यक्ति रोज़मर्रा की ज़िंदगी के पूरक हैं। लछमी ने इसमें अंतर्निहित अंतर्विरोधों को स्पष्ट रूप से प्रदर्शित किया है I अपनी ग़रीबी, अपमान और सरल मानसिकता के बावजूद, वह एक मज़बूत और काफ़ी व्यक्तिवादी चरित्र है। भले ही हमेशा ख़तरे में हो, वह कबीर मठ में और गाँव में खुद की एक जगह बनाने और बचाव करने का प्रबंधन करती है।

मैला आँचल' की पृष्ठभूमि ग्रामीण परिवेश से संबंधित है पर वह उससे परे भी है। गाँव अपने आप में एक स्थान है जो सम्पूर्ण राष्ट्र को भी संदर्भित करता है है। लछमी, अपनी गंदी साड़ी में ढँकी हुई, पीड़ित, शोषित और हाशिए की महिला का एक राष्ट्रीय मूर्त रूप है। साथ ही वह ऊँच -नीच [10][11] की दुनिया को समझने के लिए भजन और दिल की भक्ति का एक अनोखा तरीक़ा है। उसके ज्ञान की कुछ समझ यहाँ तक है कि

खुद को जो महंत समझता है। जब उसे कोई मसला सुलझाना होता है तब वह यही कहता है, 'हम लछमी से पूछें'।

रेणु ने उत्तर बिहार के गाँव को विरोधाभासों के संपर्क के एक गतिशील स्थान के रूप में देखा, न केवल परंपरा और आधुनिकता के बीच बल्कि व्यक्ति और समुदाय के बीच, महिला और पुरुष के बीच, और क्षेत्रीय पहचान और राष्ट्रीय तादात्म्य के बीच। इसके अलावा, शहर और महानगरीय मध्यवर्ग पर केंद्रित करने के ख़िलाफ़ रेणुजी का साहित्यिक संदेश यह है कि पिछड़ेपन और प्रगतिशीलता बस दो शब्द हैं, वास्तविकता इससे आगे कुछ और भी है। जिस तरह से कैथरीन हन्सेन ने दिखाया है कि कथानक में रेणुजी का संदर्भ उत्तर-आधुनिकता और जादुई-यथार्थवाद तक कैसे विस्तारित किया जा सकता है।

भारत यायावर जी रेणुजी की रचनावली के संपादन के बाद अब कुछ वक्त से रेणुजी की जीवनी लिखने में मसरूफ़ हैं। वैसे पाँच खंडों की प्रस्तावना में इनकी ज़िंदगी पर काफ़ी जानकारी मिलती है, वह कुल मिलाकर अपने आप में आसानी से एक किताब बन सकती थी। बहुत अच्छी बात यह भी है कि यायावरजी के एक खंड में पत्रकारिता के सारे रिपोर्ट्स भी सम्मलित हैं और कुछ भेंटवार्ताएँ, पत्र इत्यादि।

जबकि प्रेमचंद ने गाँव को सामाजिक असमानता, आर्थिक पिछड़ेपन, विद्रूपताओं और आपदा के क्षेत्र के रूप में देखा था, रेणु किसी भी तरह एक पारंपरिक गाँव की गतिशीलता के बारे में अधिक बारीक और अधिक आशावादी दिखते हैं। वैसे

आशावाद शायद ग़लत लफ़्ज़ है। उस वक्त के लेखकों में भी बहुत ज़्यादा उम्मीद नहीं थी। वे ग़रीबी, गंदी राजनीति और समाज की समस्याओं से [12] आँखें बंद नहीं करते थे। हालाँकि, 'आंचलिक' का अर्थ जिस तरह से पूरी एक विधा के तौर पर गढ़ा गया। यह एक विशेषण है जिसे अक्सर 'क्षेत्रीय' या यहाँ तक कि 'प्रांतीय' (regional) के रूप में प्रयोग किया जाता है- जबकि यह एक तरह की अस्पष्टता लिए हुए है।

पुनर्पाठ करते वक्त यह सवाल उठता है कि क्या आंचलिकता एक ऐतिहासिक विधा का नामकरण है या यह साहित्य के इतिहास में एक युग का नामकरण है? तो फिर फणीश्वरनाथ रेणु के अलावा अमृतलाल नागर, भैरव प्रसाद गुप्त और राही मासूम रज़ा से आगे कोई आंचलिक उपन्यासकार नहीं दिखता। मेरे ख़्याल से रेणुजी की भाषा, इनकी शैली और शिल्प, इनके कथानक और शब्द प्रयोग से ऐसे कई हिंदी के अग्रणी लेखक प्रभावित हुए हैं।

सबसे पहले मैं इस संदर्भ में उदय प्रकाश का नाम लेना चाहूँगा। वैसे इनके लेखन के साथ 'जादुई यथार्थवाद' को जोड़ा जाता है जैसे आंचलिकता और जादुई यथार्थवाद का फ़र्क़ सफ़ेद और काला की तरह हो। पर ऐसा नहीं है। ख़ासकर उदय प्रकाश की शुरुआती कहानियाँ जैसे कि 'टेपचू', 'हीरालाल का भूत', 'तिरिछ', 'अरेबा-परेबा' जैसी कहानियों में मैं काफ़ी कुछ हद तक रेणुजी के प्रभाव को महसूस करता हूँ। इसका मतलब यह भी है कि रेणुजी की कृतियों में कम से कम यह बीज-रूप में ज़रूर मिलेगा जिसे आजकल 'जादुई यथार्थ' कहा जाता है।

इसी तरह से प्रेमचंद की शैली को इनके अपने शब्दों में ‘आदर्शोन्मुख यथार्थवाद’ बताने की आदत है। यह सवाल पूछा जा सकता है कि रेणुजी को इस तरह से आदर्शोन्मुख और यथार्थवादी कहना ग़लत क्यों होगा? आख़िर में साहित्य की आलोचना में ऐसी पारिभाषिक शब्दावली जब तक हमारी समझ को आगे बढ़ाने के लिए उपयोगी है, तब तक तो ठीक है। पर आख़िर में हमको समझना है कि यह शब्दावली अपने आप में उपयोगी तब तक है जब तक हम इनकी माया नहीं समझ पाते। समझने के साथ ही यह माया अपने आप से ही टूट जाती है। इसके बाद साहित्य का रस ही रस है।

मैला आँचल के बहाने हिंदी-जापानी अनुवाद की कुछ समस्याएँ

मिकि यूइचिरो

हिरोशिमा, जापान

मैं जापान में हिंदी साहित्य का विशेषज्ञ या शोधकर्ता नहीं केवल हिंदी भाषा और साहित्य का प्रेमी हूँ। अपना शौक़ पूरा करने के लिए मैं अनेक वर्षों से कई हिंदी उपन्यासों को जापानी भाषा में अनूदित करने में मशग़ूल रहा हूँ। मैं विश्वास के साथ नहीं कह सकता कि मुझ जैसा शौक़ीन अनुवादक आप जैसे हिंदी के बड़े-बड़े विद्वानों के सामने सार्थक बातें रख पायेगा या नहीं फिर भी अनुवाद करते समय मेरे सामने जो चुनौतियां आईं इनके बारे में आपसे बात करना चाहता हूँ।

बी. ए., एम. ए. की परीक्षा में पूछे गए अनुवाद संबंधी प्रश्नों के उत्तर लिखने और साहित्य का अनुवाद करने में बहुत फ़र्क है। साहित्य का अनुवाद यदि व्याकरणिक दृष्टि से ठीक हो और शब्दकोश की सहायता से शब्दशः किया जाए तो प्रायः संतोषजनक नहीं होता। उत्कृष्ट अनुवाद की शर्त यह है कि मूल रचना की पृष्ठभूमि में निहित संस्कृति को अनुवाद के माध्यम से दूसरी भाषा के पाठकगण आसानी से ग्रहण कर सकें। जिस अनुवाद को परीक्षा में शत प्रतिशत अंक मिलते हैं उसे साहित्य की कसौटी पर कसते हैं, तो कभी-कभी वह खरा नहीं उतरता। हिंदी साहित्य, ख़ासकर आंचलिक उपन्यास की बात करें, तो किसी हिंदी रचना की पृष्ठभूमि में जो आंचलिक या ग्रामीण संस्कृति अंतर्निहित है, वह हमारी जापानी संस्कृति से बहुत भिन्न है, अतः उपन्यास का अनुवाद करते समय हमें तरह-तरह की कठिनाई का सामना करना पड़ता है।

यहाँ मैं सुविख्यात आंचलिक उपन्यास 'मैला आँचल' में मिले दो साधारण शब्दों 'आँचल' और 'टोली' का उदाहरण देकर यह स्पष्ट करना चाहता हूँ कि हिंदी का कोई भी शब्द कितना ही सरल क्यों न लगे उसे कभी-कभी जापानी में अनूदित करना अत्यंत कठिन हो जाता है।

पहले पहल उपन्यास के शीर्षक 'मैला आँचल' को अब तक जापानी भाषा में जो नाम दिया गया है वह 'होकोरिदाराकेनो मुरा' अर्थात धूल-धूसरित गाँव है। जापानी अनुवाद में 'आँचल' को एक क्षेत्र या इलाक़ा ही समझा गया है। अवश्य यह अशुद्ध अनुवाद तो नहीं फिर भी क्या यह सचमुच संतोषजनक है? अगर कोई हिन्दुस्तानी 'मैला आँचल' सुने तो शायद उसके ध्यान में साड़ी के मैले पल्लू की तस्वीर आए। पर 'धूल धूसरित गाँव' सुने तो यह तस्वीर मन में किसी आँचल के साथ कभी नहीं उभरती। इस दृष्टि से जापानी शीर्षक 'होकोरिदाराकेनो मुरा' (धूल धूसरित गाँव) सही नहीं है।

मैला आँचल के पहले खंड 27वें अध्याय में लेखक में सुमित्रानंदन पंत की कविता का एक अंश उद्धृत किया है :

भारत माता ग्रामनिवासिनी

खेतों में फैला है श्यामल

धूल भरा मैला-सा आँचल

पंत की इन पंक्तियों से स्पष्ट है कि साड़ी का जो पल्लू भारत माता फैलाती है वही हमारा धूल-धूसरित गाँव है। अर्थात, उपन्यास का शीर्षक 'मैला आँचल' भारत माता का

मैला-सा पल्लू तथा भारत-नेपाल के सीमावर्ती क्षेत्र में स्थित एक पिछड़ा जनपद, इन दोनों अर्थ-छवियों से युक्त बहुत ही गूढ़ और रस भरा शीर्षक है।

यदि 'आँचल' के दोनों अर्थों से युक्त एक अकेला जापानी शब्द मिल जाए तो वह इस शीर्षक का उत्कृष्ट पर्याय हो सकता है। लेकिन जापानी भाषा में ऐसा कोई शब्द नहीं है। तो क्या लिखा जाए? सटीक शब्द मिलना संभव न हो तो कोई अन्य बेहतर विकल्प खोजा जाना चाहिए। निस्संदेह जापानी पाठकों के मन में शीर्षक देखते ही वैसी समृद्ध तथा सम्पन्न अर्थ-छवि नहीं उभरती, जैसी भारतीय पाठकों ने मन में। पर अनुवाद ऐसा होना चाहिए कि जापानी पाठक रचना में उद्धृत पंत की कविता को पढ़कर समझ जाएँ कि शीर्षक 'मैला आँचल' का स्रोत इन पंक्तियों में है। जापानी पाठकों की सुविधा के लिए अनुवाद को उपन्यास के शीर्षक के रूप में प्रयुक्त शब्दद्वय 'मैला आँचल' और पंत के 'धूल भरा मैला-सा आँचल' के लिए केवल एक जापानी शब्द का प्रयोग करना चाहिए। इस मायने में जापानी शीर्षक 'होकोरिदाराकेनो मुरा' (धूल-धूसरित गाँव) में बड़ी समस्या है। यानी एक 'आँचल' को जापानी में अनुवाद में 'क्षेत्र' या 'गाँव' और दूसरे 'आँचल' को 'पल्लू' के समकक्ष रखा जाता है तो ये दो 'आँचल' जापानी पाठकों के लिए अलग-अलग शब्द बन जाते हैं और वे कभी नहीं जान पाते कि उपन्यास के नामकरण का स्रोत पंत की कविता की इन पंक्तियों में निहित है। अतः यहाँ उपन्यास के जापानी शीर्षक के लिए 'होकोरिदाराकेनो मुरा' (धूल-धूसरित गाँव) की बजाए 'दोरोनो सुसो' (मैला पल्लू) शब्दों को चुनना बेहतर है।

लेकिन एक और सवाल रह जाता है। यानी, यदि जापानी शीर्षक के लिए 'दोरोना सुसो' (मैला पल्लू) चुन लें तो भी जापानी पाठकों को ठीक से पता नहीं चलता कि यह आँचल (पल्लू) शब्द हिंदी में 'क्षेत्र' या 'जनपद' के अर्थ में भी प्रचलित है। पंत की कविता से कुछ-कुछ ऐसा जान पड़ता है, लेकिन स्पष्ट रूप से नहीं। सौभाग्यवश, उपन्यास के अंत में एक ऐसा प्रसंग मिलता है जिसमें आँचल के इन दोनों अर्थों का संकेत निहित है।

दूसरे खंड 23वें अध्याय में रचना का मुख्यपात्र डॉक्टर कहता है, 'मैं साधना करूँगा, ग्रामवासिनी भारत माता के मैले आँचल तले कम से कम एक ही गाँव के कुछ प्राणियों के होठों पर मुस्कुराहट लौटा सकूँ...' इस कथन से पता चलता है कि डॉक्टर जिस गाँव में लोगों के सुख और कल्याण के लिए कड़ी मेहनत करता है वह भारतमाता के मैले आँचल (पल्लू) तले स्थित है। अतः स्पष्ट हो जाता है कि उपन्यास का घटनास्थल भारत माता के मैले आँचल में बसा धूल-धूसरित गाँव 'मेरीगंज' है और यहाँ आँचल (पल्लू) और आँचल (क्षेत्र) परस्पर अभिन्न हैं।

'मैला आँचल' सुनते ही भारतीय पाठकों के मन में साड़ी का मैला पल्लू और धूल-धूसरित गाँव की दुहरी छवि उभरती है। जापानी पाठक भी उपन्यास को अंत तक पढ़ते हैं तो वे जान जाते हैं कि भारत माता की साड़ी का पल्लू ही धूल धूसरित गाँव है। इस प्रकार हिंदी उपन्यास को जापानी में अनूदित करते समय केवल व्याकरणिक व भाषायी शुद्धता ही नहीं बल्कि शब्दों की पृष्ठभूमि में निहित संस्कृति और अवधारणाओं के संदर्भ में भी हर तरह की सावधानी बरतनी पड़ती है। भारतीय पाठक हिंदी का शीर्षक

देखते ही सहज रूप से जो जान लेते हैं, जापानी पाठक भी जापानी अनुवाद को ध्यानपूर्वक पढ़ते हैं तो अंत में उससे अवगत हो जाते हैं। इससे अनुवाद के महत्त्व का पता चलता है।

अब एक और शब्द 'टोली' के विकल्प के रूप में कौन-सा जापानी शब्द दिया जाए इसके संबंध में विचार करें। 'मैला आँचल' में 'टोली' शब्द बार-बार आता है, जैसे ग्वाल टोली, मालिक टोली, राजपूत टोली,.... यहाँ 'टोली' का अर्थ गाँव का वह हिस्सा है जिसमें जाति विशेष के लोग रहते हैं। हिंदी-अंग्रेज़ी शब्दकोश में इसका अंग्रेज़ी विकल्प 'क्वार्टर' दिया गया है। इसलिए जापानी में उसे 'चिइकि' या 'चिकु' (क्षेत्र, इलाका) कहा जाए तो विशुद्ध भाषायी दृष्टि से तो ठीक है लेकिन आंचलिक उपन्यास के अनुवाद में यह 'चिइकि' या 'चिकु' (क्षेत्र, इलाका) सटीक शब्द नहीं है। इसके दो कारण हैं पहला कारण यह है कि जापानी शब्द 'चिइकि' या 'चिकु' की अर्थछाया कुछ जटिल है और वह 'टोली' जैसे ठेठ देशी शब्द की टक्कर का शब्द नहीं है। जापानी शब्द 'चिइकि' और 'चिकु' यदि सामाजिक विज्ञान संबंधी किसी आलेख में इस्तेमाल किया जाए तो यह शब्द सटीक बैठेगा। ये 'चिइकि' और 'चिकु' दोनों शब्द चीनी भाषा से बनाए गए शब्द हैं, देशज शब्द नहीं, और संभवतः आंचलिक उपन्यास के अनुवाद के लिए अनुपयुक्त हैं। दूसरा कारण है कि हिंदी में 'टोली' शब्द सिर्फ़ 'क्वार्टर' ही नहीं 'समूह' या 'ग्रुप' का अर्थ भी रखता है। अतः 'ग्वाल टोली', 'मालिक टोली' या 'राजपूत टोली' जैसे शब्द विभिन्न जाति समूह का दूसरा नाम है। इसके मुक़ाबले में जापानी शब्द 'चिइकि' या 'चिकु' में केवल भौगोलिक क्षेत्रवाला अर्थ ही निहित है।

इन दो समस्याओं का समाधान निकालने के लिए ऐसा सरल शब्द खोजना चाहिए जो चीनी भाषा से उधार न लिया गया हो और जिसमें क्षेत्र, इलाके के साथ-साथ समूह या ग्रुप का अर्थ ही निहित हो। 'टोली' तो भारतीय गाँव में हरेक जाति का निवासस्थान है और उसके जापानी पर्याय के रूप में मैंने एक शब्द 'कुमि' चुन लिया है। 'कुमि' बहुत ही सरल जापानी शब्द है जिसके मायने 'समूह' या 'ग्रुप' है। यह शब्द चीनी भाषा से उधार नहीं लिया गया है, देशज शब्द है। आजकल इस शब्द का प्रयोग प्राथमिक या माध्यमिक विद्यालय में क्लास के लिए और शहर में गुंडों के दल के लिए व्यापक रूप से होता है। हिरोशिमा प्रीफेक्चर के पूर्वी भाग में एक गाँव में जहाँ मेरा जन्म हुआ वहाँ 'कुमि' शब्द गाँव के अंतर्गत हर इलाक़े और वहाँ के रहनेवालों की स्वायत्त संस्था के लिए खूब प्रचलित है। 'कुमि' ठीक-ठीक शहर के 'चोनाइकाइ' (शहर के मुहल्ले की स्वायत्त संस्था) के समानार्थी है। जैसे '3 चोमे चोनाइकाइ' 3 चोमे में रहनेवालों की स्वायत्त संस्था है वैसे ही 'शिमोइचि गुमि (कुमि)' शिमोइचि इलाक़े के निवासियों की स्वायत्त संस्था है। 'मैला आँचल' में गाँव की हरेक टोली में जाति-पंचायत बैठती है। हरेक 'कुमि' में भी वहाँ रहनेवालों की मीटिंग नियमित रूप से होती है। हमारे गाँव की 'कुमि' और भारत के गाँव की 'टोली' की तुलना करते हैं तो दोनों में पर्याप्त अर्थ-साम्य दिखाई पड़ता है। 'टोली' के जापानी पर्याय के रूप में सरल शब्द 'कुमि' (समूह, ग्रुप) इस कठिन शब्द 'चिइकि' या 'चिकु' (क्षेत्र, इलाका) की अपेक्षा अधिक उपयुक्त है जिससे समाज विज्ञान की पारिभाषिक शब्दावली का आशय आता है।

क्या मेरी युक्ति को सफलता मिली है? बेशक समस्या भी है। हिरोशिमा प्रीफैक्चर के हमारे गाँव में 'कुमि' से मतलब 'हरेक इलाक़े की स्वायत्त संस्था' है और यह शब्द इसी मायने में प्रचलित है। किंतु हो सकता है कि 'कुमि' का प्रयोग यदि शहर के 'चोनाइकाइ' जैसी स्वायत्त संस्था के अर्थ में किया जाए तो शहर के लोगों को अजीब और असंगत लगे। क्योंकि शहर में 'कुमि' प्रायः गुंडों के दल को कहते हैं। जिन सहकर्मी ने मेरा जापानी अनुवाद पढ़ा, उन्होंने राय भी दी 'यह 'कुमि' गुंडों की टोली है क्या? यह 'कुमि' शब्द अजीब लगा।'

इस तरह अनुवाद के काम के लिए ऐसी कोई बनी-बनाई आधिकारिक पद्धति नहीं है जो सर्व-स्वीकार्य हो। अनुवाद की पूरी प्रक्रिया पुनरीक्षण और मूल-अधिगम पर आधारित है। जैसा मैंने शुरू में कहा किसी साहित्यिक रचना का अनुवाद व्याकरणिक व भाषायी दृष्टि से ठीक-ठाक हो और शब्दकोश की सहायता से शब्दशः किया गया हो, तो ज़रूरी नहीं है कि वह अच्छा अनुवाद होगा। जो संस्कृति भाषा की पृष्ठभूमि में निहित है उसे भी पाठकों तक पहुँचाना चाहिए। 'आँचल' और 'टोली' बहुत ही सरल और आम शब्द हैं। फिर भी यदि हम बिना सोचे समझे शब्दकोश से इनके जापानी पर्याय लेकर इनकी जगह रख दें तो बहुत संभव है कि अनुवाद में वे पर्याय-शब्द अनुपयुक्त, अर्थहीन और नीरस जान पड़ें। हमें इस बात पर ध्यान देना चाहिए कि एक सम शब्द के चयन से मूल शब्द की अर्थछाया आंशिक रूप से लुप्त हो जाती है, और समतुल्य शब्द और मूल शब्द में कुछ भेद बना रहता है। अनुवाद में यह असंगति प्रायः अपरिहार्य है। इसलिए एक भाषा के शब्द को दूसरी भाषा में बदल देने से उत्पन्न अर्थांतर को यथासंभव कम करने

की चुनौती अनुवादक के सामने हमेशा बनी रहती है। अनेक दृष्टिकोणों से जाँच-परखकर और खूब सोच-विचार कर समतुल्य शब्द का चयन करना चाहिए, हालाँकि यह निश्चित नहीं कि चयन संबंधी प्रयास और युक्ति कारगर हो ही जाए। उम्मीद है कि हम धैर्यपूर्वक यह श्रमसाध्य कार्य जारी रखेंगे और कभी न कभी उत्कृष्ट और संतोषजनक अनुवाद करने में सिद्धहस्त हो पाएँगे।

हिंदी पढ़ने-पढ़ाने का अनुभव: अहिंदी भाषी अध्यापक

हम हिंदी के माहिर बनने के बजाय भाषा की भूलभुलैया में खोए और हिंदी सीखने में उम्र क़ैदी क्यों बने रहेंगे?

अडेलै हेनिश-टेम्बे

लाइप्सिग विश्वविद्यालय, जर्मनी

बहुत सालों से हिंदी भाषा सिखाते हुए भी मैं हमेशा ही हिंदी की विद्यार्थी रहूँगी। ऐसा लगता है कि हिंदी सीखने का काम कभी ख़त्म नहीं होगा। इसका एक कारण यह है, जो कि सभी आधुनिक भाषाओं के सीखने में होता है कि भाषा लगातार बदलती रहती है। नए-नए शब्द बनते रहते हैं और पुराने शब्दों का प्रयोग नए संदर्भ में किया जाता रहता है इत्यादि। लेकिन मेरे ख़याल से हिंदी सीखनेवालों के लिए सबसे बड़ी और ख़ास चुनौती बनती है: हिंदी भाषा के असीमित पर्यायवाची शब्दों का कोष और हिंदी का सही उच्चारण सीख पाना।

1. पर्याय ही पर्याय शब्द

हिंदी भाषा में संस्कृत पर आधारित और फ़ारसी पर आधारित कम से कम एक-एक शब्द तो होता ही है। अक्सर किसी एक शब्द के दो से ज़्यादा पर्यायवाची शब्द होते हैं। उदाहरण के लिए Water के लिए प्रयोग होनेवाले शब्दों को देखिए - पानी है, आब है, जल है, सलिल है, नीर है. Difficulty शब्द को लें तो मुश्किल, दिक़्क़त, तकलीफ़, कठिनाई जैसे शब्द होते हैं। कुछ लोग यही सोचते हैं कि अगर वे एक ही शब्द सीख लें तो हिंदी मातृभाषी लोग समझ लेंगे कि उनके कहने का आशय क्या है? इसलिए इन

लोगों को लगता है कि एक ही शब्द रटकर वे शब्द सीखने के चक्र से मुक्त हो जायेंगे। लेकिन उनको इसके बारे में भी सोचना चाहिये कि भारतीय लोग उनकी बात सिर्फ सुनेंगे ही नहीं बल्कि उसके जवाब में कुछ बोलेंगे भी। और जवाब देते वक़्त वे ज़रूर किसी पर्याय शब्द का प्रयोग करेंगे जिसको इन हिंदी सीखनेवाले लोगों ने अभी तक नहीं सीखा है। ऊपर से यहाँ जिन शब्दों का प्रयोग किया जाता है यह इस बात पर भी निर्भर करता है कि वह बातचीत किस संदर्भ में किसी से की जा रही है। औपचारिक संदर्भ या हिन्दूधर्म का परिवेश हो तो ज़्यादा संस्कृत के शब्दों का प्रयोग किया जाता है। सड़क पर किसी से बात करें या टीवी देखें तो ज़्यादा फ़ारसी शब्द सुनाई देंगे। बोलचाल की भाषा में ही नहीं साहित्यिक पाठों में भी सभी तरह के शब्द पाए जाते हैं। इसलिए भारतविद्या के विद्वानों को हर तरह के पर्यायवाची शब्दों का अभ्यास करना चाहिए । जैसे भूलभुलैया में फंसा हुआ राहगीर एक-एक रास्ता परख कर कुछ समय बाद बाहर जाने का रास्ता निकाल ही लेगा । वैसे ही हिंदी सीखनेवाले को सारे रास्तों को जाँचने-परखने की ज़रूरत होती है ताकि वह इस भूलभुलैया में से विशेषज्ञता की तरफ़ बढ़ सके। वह भूलभुलैया में हताश होकर रास्ते में बैठकर भूख से तड़पने को मज़बूर नहीं है। रास्ते के किनारे बिखरे हुए शब्द उसको समृद्ध करेंगे। लिहाज़ा दौड़ने की आवश्यकता नहीं है। मज़े से टहलते-टहलते वह फूलों की ख़ुशबू और चिड़ियों की चहचहाहट का आनंद भी ले सकेगा, उनका लुत्फ़ उठा सकेगा। शायद इस दौरान उसको पता चलेगा कि हिंदी भाषी ख़ुद रास्ते पर बिखरे हुए सभी शब्द नहीं जानते हैं।

2. सही उच्चारण का महत्त्व

ख़ास तौर पर हिंदी सीखने की शुरुआत करनेवाले लोगों के लिए सबसे बड़ी चुनौती हिंदी शब्दों का सही उच्चारण है। इसमें प्रवीण बन पाने से पहले समझने की क्षमता बढ़ाना आवश्यक है। हिंदी में बहुत से ऐसे शब्द हैं जिनका उच्चारण विदेशी कानों के लिए एक जैसा मालूम होता है। हिंदी कक्षा में हमारे अध्यापक हमसे कहते थे – फ़र्स्ट ऑफ आल यू मस्ट लर्न टू डिफरेंशियेट बिटविन ट ठ त थ एंड ड ढ द ध। अपने जर्मन कानों से त त त त और द द द द एक जैसे स्वर सुनकर हम हैरान हो जाते और एक दूसरे को देखते रहते। ऐसे अक्षर हिंदी सीखनेवालों के लिए एक मुश्किल बात होती है। लेकिन बोलने में अ-आ के जैसे स्वर और ज-च, द-ध के जैसे अक्षर थोड़े मुश्किल ग्राह्य बन सकते हैं। अगर आप हिंदी बोलते समय सही उच्चारण न करें तो न केवल हास्यास्पद व्यक्ति न बनेंगे बल्कि अस्पष्ट उच्चारण आपको मुसीबत में भी डाल सकता है। जो बात आप कहना चाहते थे और जो बात आपके मुँह से निकलकर हिंदीभाषी कानों तक पहुँचती है उनके मतलब बिलकुल अलग-अलग बन सकते हैं। इससे बहुत फ़र्क पड़ता है कि क्या :

आज घर चले आएँ या अजगर चले आएँ?

हम भारत जाएँगे या बारात जाएँगे?

मैं गाड़ी चलाऊँगी या गाड़ी जलाऊँगी?

अध्यापक बस से जाएँ या वे अद्य पाक जाएँ या बाग जाएँ?

पक जाएँ या भाग जाएँ, पग-पग धरें या बक-बक करें?

क्या किसी को ख़ानसामाँ के लात की चिंता है या खाने के सामान की क़िल्लत की चिंता है या क्या वह क़िले की लाट छीनता है?

चूहा भाई बिल में घुसता या जुआँ बाइबिल में घुसती?

कमला दी चर्च जाती या कम लाठीचार्ज की जाती?

सड़क बल खाती है या सड़क बाल खाती है?

हम पैसे पचाएँ या पैसे बचाएँ?

और यह भी याद रखें कि :

किसान का हल अच्छा होने से उसका हाल अच्छा नहीं होता।

योगाभ्यास न होते योगप्यास लग जाती।

सामान बांधने में समां नहीं बंधेगा!

भगवान को भी पकवान पसंद है।

स्वरों और शब्दों की समानता संभवतः हिंदी मातृभाषी लोगों की शब्द मनोरंजन के शौक़ीन होने के कारण ही होगी। जो मज़ाक मैं ने हिंदी भाषी लोगों के मुंह से निकलते सुने वे अक्सर शब्दों से खेलने से पैदा होने वाला हास्य था। हिंदी भाषा की भूलभुलैया में चलते हुए हम भी शब्द मनोरंजन का मज़ा ले सकते हैं। निम्नलिखित होते हुए जैसे शब्दचमत्कार रचाकर सुनाते हुए हमको माहिरी का मंज़िलवाला रास्ता शायद इतना लंबा नहीं लगेगा।

दूत पिता के साथ दूध पीता है।

मगर मच्छर उसके साथ कब दूध पिएगा?

मगरमच्छ माता का माथा खाकर

उसके सात कप दूध पिएगा?

'दुत, यह मत कर' माता मातम करेगी।

मगरमच्छ मक्खन चखकर मकान का चक्कर काटेगा।

मगर माता मगरमच्छ को दुतकारकर मातम करेगी, मगरमच्छ मक्का जाकर बहुत मुकरेगा।

एक जापानी विद्यार्थी और मेरे नाट्य-जीवन के कुछ अनुभव

तोमिओ मिज़ोकामी

ओसाका विश्वविद्यालय, जापान

श्रीलंका से जुड़े एक विशेष कार्यक्रम ने मुझे अपने पुराने रंगमंच प्रेमी छात्र की सुखद याद दिलाई जो आजकल जापानी विदेश मंत्रालय के दक्षिण एशिया विभाग में कार्यरत राजनयिक हैं। उनका नाम है श्री केन ओजाकी। श्री ओजाकी ने विदेश मंत्रालय की प्रवेश परीक्षा में विदेशी भाषाओं में हिंदी को चुना था जबकि 90% से ज़्यादा अभ्यार्थियों ने अंग्रेजी को चुना था। लेकिन उस साल हिंदी के लिए कोई पोस्ट नहीं थी इसलिए उसके बदले में विकल्प की भाषा के रूप में उन्होंने सिंहली को चुना था।

इसके बाद श्रीलंका में 3 साल का प्रशिक्षण लिया। कहने की ज़रूरत नहीं कि इस मुश्किल भाषा को हिंदी की तरह एकदम शुरू से सीखा। उन्होंने बहुत मेहनत की जितनी हिंदी सीखने के लिए की थी और अब योग्य राजनयिक बनकर कभी तोक्यो में कभी श्रीलंका में दोनों देशों के बीच सेतु बनकर सेवा में जुटे हैं। उन्होंने श्रीलंका के राष्ट्रपति और जापान के राजनेताओं के बीच अनेक बार दुभाषिये का काम किया है।

लेकिन उनके छात्र जीवन की कहानी बहुत दिलचस्प और उल्लेखनीय है। वे हिंदी नाट्य दल के बहुत उत्साही सदस्य थे, भारत और ब्रिटेन के प्रमुख शहरों में अनेक बार हिंदी नाटकों का अभिनय कर चुके हैं। प्राय: प्रमुख पात्र (नायक) के रूप में। सबसे उल्लेखनीय मंचन 29 मार्च, सन् 2003 को दिल्ली में आयोजित भारत रंग महोत्सव में भाग लेकर राष्ट्र नाट्य विद्यालय के अभिमंच में प्रस्तुत दो हिंदी नाटकों का मंचन था।

तत्कालीन निदेशक देवेन्द्र अंकुर जी ने जापान के प्रतिनिधि के रूप में अपवाद स्वरूप हमारे छात्रों के नाट्य दल को आमंत्रित किया था जो सभी शौक़िया ऐक्टर/ऐक्ट्रेस थे। दूसरा अपवाद था कि इस महोत्सव में लगभग 80 दलों को भारत और बाहर के देशों से आमंत्रण मिला था, लेकिन विदेशी भाषा (हिंदी) में प्रस्तुत करनेवाला दल तो केवल हमारा था और तीसरा अपवाद था कि प्रत्येक दल को एक-एक नाटक प्रस्तुत करने की अनुमति थी, किंतु हमें दो नाटकों को प्रस्तुत करने की अनुमति मिली थी। पहला, बालकराम नागर कृत हास्य नाटक बुरे फँसे मुहब्बत में और दूसरा था जापानी दुखांत नाटक का हिंदी रूपांतरण सारस प्रेम। श्री ओजाकी ने बुरे फँसे मुहब्बत में के दोहरे व्यक्तित्व वाले नायक मनोहर की भूमिका बखूबी निभाई थी तथा 430 दर्शकों से खचाखच भरे अभिमंच के हॉल में ठहाका गूँज उठा था।

सारस प्रेम की नायिका के करुण रस भरे अभिनय ने दर्शकों की आँखें नम कर दी थीं। इन दोनों नाटकों की बहुत प्रशंसा हुई थी और नई दिल्ली से प्रकाशित पाक्षिक पत्रिका प्रथम प्रवक्ता (मई प्रथम, 2003, वर्ष 2: अंक 12 पृष्ठ 64-65) में इनका उल्लेख किया गया। दाहिनी रंगीन फोटो में श्री ओजाकी दिखाई देते हैं।

उनके जीवन को बहुत ज़्यादा प्रभावित करनी वाली एक और घटना भारत में ही घटित हुई थी। जब वे केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा में हिंदी पढ़ रहे थे। वहाँ कई विदेशी छात्र भी पढ़ते थे। उनमें से यूरोप के रूमानिया से आई हुई एक लड़की से उनका प्रेम हो गया और उन्होंने उनसे शादी कर ली। वे इस नववधू को जापान ले आए। मियां-बीवी आपस में हिंदी में बातचीत करते थे। लेकिन वे अभी भी छात्र थे। नौकरी भी नहीं मिली

थी। लेकिन पता नहीं कैसे पत्नी का ध्यान रखते हुए छात्र-जीवन को बिताते थे। सुखी वैवाहिक जीवन बिताने के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण बात थी अच्छी नौकरी का मिलना। उन्होंने राजनयिक बनकर भारत में काम करने के उद्देश्य से राजनयिक की कठिन परीक्षा देने का संकल्प लिया था। पूरे ओसाका विश्वविद्यालय के छात्रों में से हर साल केवल दो तीन छात्र ही इस परीक्षा में उत्तीर्ण हो पाते हैं। उन्होंने दिन-रात एक करके कड़ी मेहनत की थी। ऐसी मेहनत केवल विरले व्यक्ति ही कर सकते हैं। उनकी मेहनत को सफलता मिली और अब वे सिंहली भाषा में माहिर राजनायिक हैं।

पता नहीं कि अब मियां बीवी आपस में कौन-सी भाषा बोलते होंगे? शायद सिंहली बोलते होंगे।

उनके छात्र जीवन की दो और नाटकीय घटनाएं जोड़ना चाहता हूँ। दोनों का संबंध नाटक मंचन से ही है।

सन् 1999 में इंग्लैंड में छठा विश्व हिंदी सम्मेलन का आयोजन हुआ। उसका औपचारिक न्योता हमारे विश्वविद्यालय के कुलपति जी के पास आया। यह हमारे लिए गौरव की बात थी। मेरे लिए यह न्योता ओलम्पिक में शामिल होने जैसे लगा। अब हमारी नाटक मंडली को भारत से बाहर इंग्लैंड में विदेशी लोगों के सामने नाटक करने का मौका मिल रहा था। यह मेरे लिए और मेरी नाटक मंडली के लिए बहुत खुशी की बात थी। इस बार लंदन की ही नहीं ग्लासको, मेनचेस्टर, स्टॉपटनऑनटीज आदि की यात्राएं भी शामिल थीं। और उन यात्राओं का खर्चा भारत सरकार ने दिया।

इस यात्रा की शुरुआत में एक घटना घटी। ओसाका के कन्साई हवाई अड्डे पर सभी विद्यार्थी या चुके थे। लेकिन ओजाकी जी नहीं पहुँचे। हम लोगों का हाल खराब हो गया। क्योंकि ओजाकी की भूमिका कोई और नहीं कर सकता था। हमारा जहाज बिना ओजाकी को लिए भी चल पड़ा। मैंने ओसाका के बाद कोरिया के सियोल पहुँचकर अपने घर पर पत्नी को फोन किया और इस समस्या के बारे में बताया। उन्होंने ट्रैवल एजेंट को फोन करके ओजाकी के बारे में पता किया। ट्रैवल एजेंट के बताया कि ओजाकी जी देर से हवाई अड्डे पहुँचे। वे पिछली रात को इंग्लैंड जाने के उत्साह के कारण सो नहीं पाए थे और फिर बाद में घोड़े बेचकर सो गए और उन्हें किसी ने या अलार्म घड़ी ने भी नहीं जगाया। उन्होंने इंग्लैंड जाने वाली दूसरी फ्लाइट का टिकट खरीदा और उसका पैसा किसी से उधार लिया और बाद में पार्ट टाइम काम करके दो लाख रुपए चुकाए।

वे हमारे पहुँचने के दो दिन बाद इंग्लैंड पहुँच गए। हमारी खुशी का ठिकाना न रहा। उनकी जगह कोई और विद्यार्थी होता तो शायद इस स्थिति में इंग्लैंड नहीं पहुँच सकता था। इस तरह ओजाकी जी ने एक चूक के बाद भी हमारी जान बचाई। और हमारा मंचन आराम से हो सका।

दूसरी घटना दिल्ली के राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय के मंचन से संबंधित है। अभिमंच सभागार में उपेन्द्रनाथ अश्क के नाटक ‘तौलिये’ और एक जापानी नाटक ‘आईना’ का मंचन किया। सभी विद्यार्थी नौसिखिया ऐक्टर और ऐक्ट्रेस अभिनय कर रहे थे। ऐसे में संवाद भूलने की घटनाएं भी असामान्य बात नहीं होती थी। ऐसे ही एक संकट में ओजाकी ने अपने एक सह अभिनेता की सहायता की। उस हॉल में जापान के राजदूत भी

नाटक देख रहे थे। मेरी हालात भी खराब हो रही थी। हॉल में सन्नाटा छा गया था। एक दूसरे पात्र द्वारा अपना संवाद भूलने के बाद उसकी मदद करने की घटना है। उन्होंने तुरंत एक वाक्य कहा कि "मैं (हल्का) होकर आता हूँ"। यह सुनकर हॉल में हँसी का जोरदार ठहाका लगा। और उन्होंने उस स्थिति से सबको उबार लिया।

इन दोनों घटनाओं से पता चलता है कि श्री ओजाकी कितने जिम्मेदारी निभाने वाले व्यक्ति हैं। तभी तो राजनयिक जैसे पद पर पहुँचे हैं।

उन्होंने एक जापानी पत्रिका में साक्षात्कार देते हुए स्पष्ट शब्दों में बताया था कि मैं एक शर्मीला, मितभाषी और अंतर्मुखी लड़का था, किंतु हिंदी नाटक में हिस्सा लेने के बाद, विशेषकर भारत जाकर भारतीय दर्शकों के सामने नाटक का संवाद रटते-रटते मैं निर्भीक होकर तेज आवाज में लोगों के सामने बोलने का आदी हो गया। स्वभाव भी अंतर्मुखी से बहिर्मुखी हो गया। आत्मविश्वास बढ़ गया।

मेरे ख्याल में विदेशी लड़की से शादी करने की हिम्मत भी नाटक से ही पैदा हुई होगी। नाटक के अभिनय से केवल भाषा ही नहीं सीखते बल्कि समाज में अच्छी तरह से जीने की कला और कौशल भी सीख सकते हैं। अर्थात नाटक का मंचन चरित्र के निर्माण में भी बहुत सहायक हुआ होगा - श्री ओजाकी का कथन इस तथ्य को चरितार्थ करता है। मेरी प्रबल इच्छा है कि हिंदी नाटक के ये मेधावी विद्यार्थी किसी दिन श्रीलंका में जापानी राजदूत बनें तो मैं उनसे अपने लिए गुरु दक्षिणा माँगूँगा।

(प्रोफ़ेसर एमेरिट्स तोमिओ मिज़ोकामी जी को 2018 में पद्मश्री से सम्मानित किया गया)

...नकारियां पहुंच ही नहीं पायीं। ...सला मुश्किल ही नहीं, बल्कि ...87 नाटकों में से सर्वश्रेष्ठ कौन ... सारे नाटक ऐसे थे, जिन्होंने ...ठ कहलाने के योग्य साबित ...य नाट्य विद्यालय इस बात पर ... कि उसके पूर्व छात्र जहां कहीं ...ने धूम मचा रखी है। राष्ट्रीय ...के पूर्व छात्रों के नाम कई ...ों से जुड़ चुके हैं। नसीरुद्दीन ...शाह के नाटक 'सफेद झूठ ...के प्रति दर्शकों की विशेष ... थियेटर का कोई कोना खाली ...क की लोकप्रियता की वजह ...का नाम तो था ही साथ-साथ ... विशेष वजह ये भी थी कि ...हूर लेखक सआदत हसन मंटो ... का संगम था। वेश्याओं के

की प्रस्तुति 'लोहार' की भी बड़ी चर्चा हुई। एस.एम. अजहर आलम द्वारा निर्देशित 'लोहार' एक ऐसी महिला संती की कहानी है, जो 18 वर्षों तक एक ऐसे व्यक्ति की गृहस्थी संभालती है, जिससे वह प्यार नहीं करती है। लेकिन जब उसकी बेटी प्रेम में घर छोड़ देती है, तब संती को भी ख्याल आता है कि उसका भी एक प्रेमी था और वह पति का घर छोड़कर अपने प्रेमी के पास चली

'बुरे फंसे मोहब्बत में' का एक दृश्य

जाती है। इस नाटक ने यह बहस छेड़ी की क्या कोई महिला 18 वर्षों बाद. पारिवारिक जिम्मेवारियों से मुक्ति के बारे में सोच सकती है। मराठी नाटक 'तुगलक' भी काफी पसंद किया गया, जिसकी घटनाएं 10 हजार साल बीतने के बावजूद प्रासंगिक

निर्देशक सुरेश शर्मा हैं। पूरा नाटक रंभा के सपनों में घटित होता है। यह एक अलग तरह का प्रयोग था।

जापानी निर्देशक तोमियो मिजोकामी के 'नाटक सारस प्रेम' और 'बुरे फंसे मोहब्बत में' भी आकर्षण का केंद्र रहे तथा उनमें मानवीय भावनाओं के अनछुए पहलुओं को दर्शाया गया है। इन नाटकों के अलावा नवीन कुमार के 'हतक' पुनीत अस्थाना के 'कहां हो फकीरचंद' अरुणाराजे पाटिल के कोठरी नंबर 42, बालेंद्र सिंह के डाकू, गुलजार लिखित और सलीम आरिफ द्वारा निर्देशित 'खरासें', संतोष राणा के युधिष्ठिर विलाप, रामगोपाल बजाज के दिमाग-ए-हस्ती दिल की बस्ती है कहां! निर्मल पांडे के अंधा युग की भी

मेरा हिंदी पढ़ने और पढ़ाने का अनुभव

लक्ष्मी रेखा शर्मा

हैम्बर्ग विश्वविद्यालय, जर्मनी

नमस्ते! मेरा नाम लक्ष्मी शर्मा है और मैं हैम्बर्ग विश्वविद्यालय के भारत-विद्या विभाग की छात्रा हूँ। मैं विश्वविद्यालय में हिंदी के साथ जापानी और तमिल सीख रही हूँ और कोरियन सीखना मेरा शौक़ है। मैं इस लेख में अपने हिंदी पढ़ने और पढ़ाने के अनुभव के बारे में आपसे कुछ साझा करना चाहती हूँ। साथ में मैं दूसरी भाषाओं के बारे में भी कुछ बात करना चाहूँगी।

मेरे दादा जी दक्षिण भारत से थे लेकिन मेरे पिता जी मलेशिया में पैदा हुए थे। वे मेरे साथ बचपन से अंग्रेज़ी में बात करते हैं और मेरी माता जी जर्मन होने के कारण मेरे साथ जर्मन बोलती हैं। स्कूल में मैंने लैटिन सीखी और इसलिए जो भाषाएँ मैंने स्कूल में पढ़ी हैं और जो अभी पढ़ रही हूँ उसमें से हिंदी पहली भाषा है, जो जीवित भाषा है और जिसका बोलचाल में प्रयोग होता है। इसलिए मुझे विश्वविद्यालय में बहुत-सी नयी बातें सीखने को मिलीं : हिंदी की बातें और जीवन के बारे में भी।

पहले मैं अपनी पढ़ाई के अनुभव के बारे में बताऊँगी। इसमें कुछ अच्छी बातें थीं मगर कुछ मुश्किल बातें भी थीं।

मेरे परिवार में अक्सर अलग-अलग भाषाएँ बोली जाती हैं लेकिन मैं बचपन से जानती हूँ कि मैं सब नहीं समझ सकती हूँ। यह हिंदी सीखते समय ज़्यादा स्पष्ट हुआ। मैं सोचती हूँ कि इसने मेरी पढ़ाई को भी प्रभावित किया है क्योंकि मैं काफ़ी जल्दी मान

लेती हूँ कि अगर किसी को व्याकरण और पदबंध समझ नहीं आता, तो उसे भाषा सीखने में दिक़्क़त होती है क्योंकि भाषाओं के व्याकरण अलग-अलग हो सकते हैं। मेरे लिए इसका एक अच्छा उदाहरण हिंदी में 'को' परसर्ग का प्रयोग है। आमतौर पर जब मैं व्याकरण सीखती हूँ, तब मैं जल्दी समझती हूँ लेकिन जब मैंने पहली बार 'को' के बारे में पढ़ा, तब मुझे इसे समझने में दो या तीन हफ़्ते लगे थे। उसके बाद मुझे समझ में आया कि हिंदी का 'को' मेरी अन्य भाषाओं की जानकारी से अलग है और मुझे इसे ठीक से सीखना चाहिए। इस तरह से मुझे हिंदी और हिंदी की विशिष्टता संबंधी जानकारियाँ मालूम होने लगीं।

लेकिन आसान बातें भी है, उदाहरण के लिए जर्मन और अंग्रेज़ी में वाक्य में शब्द का अनुक्रम कर्ता, क्रिया, कर्म है और हिंदी में कर्ता, कर्म, क्रिया है। हालांकि यह मेरी आदत से अलग था लेकिन इस संरचना को समझना आसान था और और मुझे इसकी आदत भी हो गई। भाषा के माध्यम से हम समाज की संस्कृति और सभ्यता को समझ सकते हैं। एक उदाहरण हिंदी का शब्द 'कल' है क्योंकि हिंदी में इसके दो मतलब हैं लेकिन जर्मन में 'कल वाले कल' और 'आनेवाले कल' के लिए दो अलग शब्द हैं। यह अलग-अलग सोच या दुनिया को समझने का दर्शन है।

दूसरा फ़ायदा यह है कि हिंदी वाक्य सीखने से मुझे जापानी, कोरियन और तमिल सीखने में दूसरे छात्रों की तुलना में कुछ आसानी हुई। हिंदी सीखने की वजह से ख़ासकर तमिल का व्याकरण सीखना आसान था। भिन्न भाषा-परिवार होने के बावज़ूद भी व्याकरण में काफ़ी समानता लगती है। उदाहरणार्थ हिंदी में 'मुझे ... है' महसूस वर्णन

करने के लिए इस्तेमाल किया जाता है। यह ‘मुझे’ जर्मन के डेटिव केस (Dativ) के समान लगता है और तमिल में भी यह अक्सर महसूस करने के लिए इस्तेमाल किया जाता है।

दो साल हिंदी सीखने के बाद मुझे विश्वविद्यालय में हिंदी ट्यूटोरियल पढ़ाने के लिए दिया गया जिसे मैं अभी भी पढ़ा रही हूँ। मुझे ट्यूटोरियल देना पसंद है। कक्षा में बहुत से सवाल पूछे जाते हैं - कुछ पुराने और कुछ नये। यह हिंदी को बेहतर ढंग से समझने में मदद करता है। उदाहरणार्थ- मुझे उच्चारण को दुहराना होता है और चँद्रबिंदु एवं अनुस्वार के बारे में फिर से पढ़ना पड़ता है।

कुछ बातें समझाना मुश्किल है क्योंकि मैं भी तुरंत नहीं समझ सकती हूँ। जैसे पदबंध ‘यूँ ही’ का इस्तेमाल। पहले मैं ठीक से नहीं समझ पायी थी मगर एक छात्र के पूछने के बाद मुझे फिर से पढ़ना पड़ा और अब मैं इसे ठीक से समझती हूँ।

मेरे लिए हिंदी पढ़ना और पढ़ाना एक अच्छा अनुभव है क्योंकि इससे मैं ज़्यादा सीखती हूँ।

बहुसंस्कृति के परिवेश में हिंदी अध्यापन के अनुभव

हंसा दीप

यूनिवर्सिटी ऑफ़ टोरंटो, कैनेडा

पिछले सत्रह सालों से यूनिवर्सिटी ऑफ़ टोरंटो में हिंदी अध्यापन करते हुए भाषा सिखाने के साथ मैंने स्वयं भी बहुत कुछ सीखा। भाषा के मूलभूत व्याकरणिक नियमों के बारे में तार्किक खोज की, जो शायद इससे पहले कभी नहीं की थी। भाषाओं के परस्पर मेल से भाषा की विसंगतियाँ जब सामने आती हैं तो कोई व्याकरण का नियम उसे सही सिद्ध नहीं कर पाता।

कैनेडा के टोरंटो शहर में कई संस्कृतियों और कई देशों के लोगों का मिला-जुला वातावरण है। जहाँ विश्व के हर देश की हर भाषा के लोग हैं, वहीं भारत के लगभग हर प्रांत के लोग अपनी-अपनी विविधताओं के साथ अपना जीवन बिताते हैं। भारत में बी.ए. और एम.ए. की कक्षाओं को तकरीबन दस वर्षों तक हिंदी भाषा और हिंदी साहित्य के अध्यापन के बाद यहाँ आकर बिगिनर्स कोर्स को पढ़ाने का अहसास एक कप चाय पीने जैसा था। पहले दिन, पहली कक्षा में ही अपने आत्मविश्वास की धज्जियाँ उड़ गयीं। पता लगा कि अहिंदी भाषी को ‘अ, आ, इ, ई’ पढ़ाना अपने आज तक के अध्ययन-अध्यापन की सबसे बड़ी चुनौती है। वे सारे प्रश्न जिनके बारे में न कभी सोचा, न कभी जाना, उनके उत्तर ढूँढ़ना और छात्रों को माकूल जवाब देकर संतुष्ट करना, रोज परीक्षा में बैठने जैसा था। नि:संदेह अपनी सारी योग्यताओं को ताक पर रखकर

पीएच.डी. करने के बाद फिर से अ, आ से पढ़ना शुरू किया। बहुत अच्छी तैयारी कर ली थी। हर वर्ण का अंग्रेजीकरण करके समझाने के लिए मैं तैयार थी।

स्वर-व्यंजन का परिचय देकर संयुक्त व्यंजन क्ष, त्र, ज्ञ का परिचय दिया।

एक छात्र ने कहा – 'आप गलत पढ़ा रही हैं। यह ज्ञ नहीं ग्न है।'

हमारी बातचीत अंग्रेजी में ही हो रही थी। चालीस छात्रों से भरी हुई कक्षा में मेरी सिट्टी-पिट्टी गुम थी। मैं हैरान, आधारभूत वर्णमाला में ही मैं गलत साबित कर दी गयी। निश्चित रूप से धैर्य की ज़रूरत थी। युवा पीढ़ी के सामने आक्रोश से नहीं, समझदारी से काम लेना जरूरी था। मैंने पूछा – 'आपने कहाँ पढ़ा ग्न?'

उसने कहा – 'मेरे मम्मी-पापा ने मुझे अल्फाबेट्स सिखाए थे।' इसके अलावा मैं आपको बीस साइट्स बता सकता हूँ, जहाँ ज्ञ नहीं ग्न है।'

छात्र का आत्मविश्वास देखकर कुछ पलों के लिए मैं स्तब्ध थी। तब मेरा गुजराती भाषा का ज्ञान काम आया, जब अपनी मित्र प्रज्ञा को हम प्रग्ना कहते थे। तुरंत क्लिक हुआ – 'क्या आपकी मातृभाषा गुजराती है?'

'जी नहीं, मेरी मातृभाषा अंग्रेजी है। मेरे माता-पिता की गुजराती है।'

अब मेरे लिए उसे समझाना आसान था। मेरे पास तार्किक आधार था लेकिन उस छात्र के लिए उसके माता-पिता सही थे। खैर, वह असंतुष्ट था मगर मैं सही वजह दे चुकी थी। अगली कक्षाओं में जब थोड़ा आगे सर्वनाम तक बढ़े। You के लिए तू, तुम, आप, एक शब्द के लिए तीन शब्द- आत्मीय, अनौपचारिक और औपचारिक समझाने के लिए पूरी तैयारी थी। आगे बढ़े तो- तू का घर – तेरा घर। तुम का घर - तुम्हारा घर। आप का

घर - आपका घर। समझाते हुए उनके खामोश चेहरे कह रहे थे- ऐसा क्यों? आगामी क्विज़ में आधी कक्षा ने ‘तू का घर’ और ‘तुम का घर’ लिखा था।

व्याकरण का यह हिस्सा मुश्किल ही जटिल नहीं था। ‘आप ऐसा कैसे कर सकती हैं। एक सर्वनाम you के लिए इतने सारे फॉर्म!’ एक श्वेत छात्र ने सवाल पूछा था। मैं अपराधी-सी उसे देखती रह गयी थी। मैंने कभी इस बारे में सोचा नहीं था। खैर, मेरा अगला शोध कार्य था अंग्रेजी की ऐसी विसंगतियों की सूची बनाना। ताकि ऐसे सवालों के जवाब में मैं उन्हें बता सकूँ कि ‘आप यहाँ ऐसे क्यों बोलते हैं!’

(क्रमश:)

ललित निबंध

एक आगे, एक पीछे : न अभिमान, न अपमान

दीप्ति वागले

यूनिवर्सिटी ऑफ टोरंटो

(मूल निवासी नेपाल)

किसी ने सच ही कहा है: चलनेवाले पैरों में बहुत फर्क होता है। एक आगे दूसरा पीछे। न किसी को अभिमान होता है, न किसी का अपमान। क्योंकि यह स्थिति लगातार बदलती रहती है। समय कभी स्थिर नहीं होता। विशेष रूप से तब, जब हम अपने जीवन में बुरे समय का सामना कर रहे होते हैं तो हम सवाल पूछते हैं कि दुखी जीवन का क्या मतलब है? परंतु हमें हमेशा याद रखना चाहिए कि समय के साथ परिस्थितियाँ बदल जाएँगी। इसीलिए धैर्य रखना और हार न मानना बहुत महत्त्वपूर्ण है। आगे बढ़ते रहना और कड़ी मेहनत करना आवश्यक है। इसके अलावा पैर कभी एक दूसरे के साथ प्रतिस्पर्धा में नहीं होते। इसके बजाय, यदि एक पैर को चोट लगी है तो हम घायल पैर को ठीक होने का समय देने के लिए दूसरे पैर का उपयोग करना शुरू करते हैं। यह एक प्राकृतिक सहयोग का उदाहरण है जो हर इंसान के बीच मौजूद है। इसी तरह, अगर मनुष्य एक-दूसरे के साथ मिलकर काम करना शुरू करते हैं तो यह विश्व शांति का कारण बन सकता है।

संक्षेप में, धैर्य रखें। यह मत सोचिए कि जीवन एक प्रतियोगिता है, बल्कि एक दूसरे की मदद करें। कभी एक-दूसरे को कोसते न रहिए। सभी मनुष्यों की इच्छाएँ, आशाएँ और सपने होते हैं। इसलिए हम अपनी तुलना दूसरों से करते हैं। भले ही यह एक बुरी आदत है। हालाँकि, मैं पूरी कोशिश करती हूँ कि मैं दूसरों से अपनी तुलना न करूँ

लेकिन मैं ऐसा करने में सफल नहीं होती। फिर मैं सोचने लगती हूँ कि अगर मैंने बुद्धिमानी से चुनाव किया होता तो मेरा जीवन पूरी तरह अलग होता। मेरे साथ कैथरीन नाम की एक लड़की हाईस्कूल में पढ़ती थी। वह एक होशियार लड़की थी। मैं सोशल मीडिया पर सर्फ कर रही थी तब मैंने उसकी प्रोफाइल देखी कि वह बाल मनेविज्ञान में पोस्ट डॉक्टरेट कर रही है। और मैं अपने जीवन के बारे में सोचने लगी। मैं अंडरग्रेजुएट की छात्र हूँ। मुझे उम्मीद है कि मैं भी पीएचडी कर सकूँ। लेकिन ऐसा करने में बहुत साल लगेंगे। शायद इसीलिए मैंने अनजाने में अपनी तुलना उससे कर दी। मैं सोचने लगी कि मैंने अपनी जवानी का एक हिस्सा कैसे बर्बाद कर दिया। हालाँकि यह सच्चाई नहीं है और मुझे इसका एहसास है। हम सभी के रास्ते अलग-अलग होते हैं। मैंने अपना रास्ता देर से पाया लेकिन मैं अपनी ज़िंदगी के उन पिछले अनुभवों से खुश हूँ। इसके अलावा मुझे खुशी है कि उन पिछले अनुभवों ने मुझे नए अनुभवों की ओर अग्रसर किया।

एक अभिमानी व्यक्ति सोचता है कि वह दूसरों की तुलना में हर चीज में श्रेष्ठ और बेहतर है। हालाँकि वास्तविकता बहुत अलग हो सकती है। उन्हें लगता है कि वे हमेशा सही होते हैं। जब उन्हें पता चलता है कि वे गलत थे तब भी वे यह नहीं मानेंगे क्योंकि उन्हें लगता है कि इससे वे कमजोर दिखेंगे। यह साबित करने के लिए कि वे सही हैं, वे कुछ भी करने के लिए तैयार हो जाएँगे। या तो जानबूझकर या अनजाने में, वे किसी और की भावनाओं को बहुत बुरी तरह से चोट पहुँचा सकते हैं। अभिमानी व्यवहार के कारण परिवारों में दरार पैदा हो सकती है।

ऐसे कई तरीके हैं जिनसे लोग दूसरों को अपमानित कर सकते हैं। उदाहरण के लिए, दूसरों को यह महसूस कराना कि वे कोई नहीं हैं और उनका अस्तित्व कोई मायने नहीं रखता। किसी को सार्वजनिक स्थान पर डाँटना। अगर हम इतिहास में पीछे मुड़कर देखें तो हमें एहसास होगा कि अपमान की भावना ने राष्ट्रों के बीच युद्ध पैदा करने में भूमिका निभायी है। अपमान की भावना एक खुशहाल परिवार को नष्ट कर सकती है। परिणामस्वरूप, वे रिश्तों को तोड़ने और अब न बोलने का फैसला कर सकते हैं।

आखिर में, मैं यह कहना चाहूँगी कि हम अपने पैरों से कुछ सीखें। कभी अभिमान न करें, अपमान महसूस न करें। समय चक्र बदलता रहता है।

हँसिए, सेहतमंद रहिए

इसरा कुरैशी,

यूनिवर्सिटी ऑफ टोरंटो

(मूल निवासी पाकिस्तान)

हँसना या मुस्कराना एक ऐसा खूबसूरत अमल है कि ऐसा करने से आप ज़ेहनी और जिस्मानी सुकून में आ जाते हैं। हँसना रूह के लिए सबसे अच्छी चीज़ है और देखा जाए तो यह वो दवा है जिसका ना तो कोई खर्चा और ना ही कोई साइड-इफेक्ट है। हँसने से पॉजिटिविटी पैदा होती है और आसपास का माहौल भी खुशगवार होता है। इस सबके साथ-साथ आपका और बाकी सबका मिज़ाज अच्छा हो जाता है। अगर गौर किया जाए तो मुस्कराने या हँसने से आपका कोई भी पुराना ग़म हल्का हो जाता है।

हँसना सबसे अच्छी दवा है यह कहावत बस यूँ ही नहीं कही गई है। कुछ तो बात है इस जुमले में। मुस्कराने और हँसने के सेहत पर बहुत अच्छे असर होते हैं और इनके फ़ायदे भी बहुत हैं। डॉक्टरों का कहना है कि दिन में एक बार खूब हँस लेना चाहिए क्योंकि उससे मसल्स और दिमाग दोनों को बहुत सुकून मिल जाता है।

सेहत के लिए तो हँसना अच्छा है ही लेकिन दिल के लिए और भी फ़ायदेमंद है। आमतौर पर पूरे दिन की थकावट की वजह से एक्सरसाइज़ करने का दिल नहीं करता। लेकिन अगर एक बार आप खुल के हँस लें तो पूरे दिन का कार्डियो वर्क आउट हो जाता है। लो ब्लडप्रेशर, स्ट्रेस और डिप्रेशन, सबका इलाज हँसने और खुश रहने में है। हँसने के

कोई नुकसान नहीं हैं बल्कि इस अमल से सब आपको पसंद करेंगे। आपके घर का माहौल अच्छा रहेगा और आपकी रोजमर्रा की ज़िंदगी भी खुशगवार गुज़रेगी।

कोरोना का कहर

श्रेया टंगुटूरी

यूनिवर्सिटी ऑफ टोरंटो

(मूल निवासी दक्षिण भारत)

इस समय दुनिया में बहुत मुश्किल समय है, क्योंकि 2020 में हमने बहुत सारे घटनाक्रमों का अनुभव किया है। जब नया साल शुरू हुआ तब हमने यूक्रेनीयन विमान की घटना को देखा, और एनबीए अदाकार कोबि बराईअंत और उनकी प्यारी बेटी जीयाना की मृत्यु। फिर, जब हम सबने सोचा की यह सब ख़त्म हुई है, तभी हमें एक और परेशानी मिल गयी, और यह था कोरोना वायरस जो अब भी जारी है।

जब कोरोना वायरस का प्रकोप शुरू हुआ, तब हमने इसके बारे में ज़्यादा नहीं सोचा, क्योंकि यह चीन में केंद्रित था, और इसने कैनेडीयन लोगों को प्रभावित नहीं किया था। लगभग एक महीने बाद, कई लोगों ने चीन से कैनेडा तक यात्रा की और इसलिए कोरोना वायरस इन्फेक्शन बहुत बढ़ गया। आजकल, हम अभी भी इन समस्याओं का अनुभव कर रहे हैं। इतने सारे स्कूल, विश्वविद्यालय और कई ऑफिस बंद हो गए हैं। इन सब चिंताओं में हमारे पास कुछ और समस्याएँ भी हैं। एक साधारण सी चिंता जो सबको है वह यह है कि छात्रों और परिवारों को बहुत कम सामान मिल रहे हैं, क्योंकि सारे लोग बाहर जाकर सब कुछ ख़रीद रहे हैं। खाना से लेकर टॉयलेट पेपर तक, कुछ नहीं मिल रहा। क्योंकि हम सबको अभी क्वॉरंटीन में रहना है, हम ऑनलाइन कक्षाएँ कर रहे हैं, या घर पर बैठकर बस इंतजार कर रहे हैं।

सामान कम मिलने के अलावा, कैनेडा की अर्थव्यवस्था इतनी अच्छी नहीं है, क्योंकि बहुत सारे लोगों को नौकरी से निकाल दिया गया। अब, यूनिवर्सिटी छात्रों को मिलाकर लगभग बीस लाख छात्र घर पर हैं। जब कोरोना वायरस पूरी दुनिया में समस्या बन चुका है, तब सारे देश, जैसे कि चीन, इटली, यूएसए, और भारत, कैनेडा की तरह कठोर उपाय कर रहे हैं।

कोरोना वायरस की मेरी सबसे बड़ी चिंता हमारा भविष्य है। क्या हमारा जीवन कभी सामान्य हो पाएगा। हर कोई बाहर जाने से डरता है, लेकिन बहुत लम्बे समय तक घर पर रहना हमारे लिए अच्छा भी नहीं है, क्योंकि हम पूरे दिन एक ही जगह पर रहते हैं। इसके चलते जब हम कुछ सामान और सब्जियाँ खरीदने के लिए बाहर जाते हैं तो युवा लोगों को अपने आसपास का ख़्याल रखना है। मेरे लिए असली डर यह है कि अगर मुझे कोरोना वायरस का संक्रमण होता है तो शायद मुझे कुछ नहीं होगा, लेकिन तब मेरे परिवार में भी कोरोना वायरस आएगा, और मैं यह नहीं बता सकती कि उनको कुछ नहीं होगा। घर पर रहना मेरे मानसिक स्वास्थ्य पर भी असर डाल रहा है क्योंकि मैं दिन में चौबीस घंटे एक ही जगह पर हूँ। मेरी तरह मेरा परिवार भी घर पर ही एक साथ है, तो ऐसे में कभी-कभी हमारे बीच झगड़ा होता है, क्योंकि हम सभी के स्कूल और काम के लिए अलग-अलग कार्यक्रम होता है।

हालाँकि, इस दुख के वक़्त में कई लोग भारत में ख़ुशी प्रचारित कर रहे हैं। वास्तव में, 22 मार्च 2020 को भारत सरकार ने घोषणा की थी कि सुबह सात बजे से रात नौ बजे तक, जनता कर्फ़्यू लगेगा। यह लगभग चौदह घंटे के लिए था और इस दौरान

जब सब लोग घर पर थे, शाम पाँच बजे सारे लोगों ने बाहर जाकर डॉक्टर और मिलेटेरी ऑफिसर के लिए ताली बजाई। क्योंकि ये लोग अभी भी देश को सुरक्षित रखने के लिए काम कर रहे थे। मुझे उम्मीद है कि सब कुछ ठीक हो जाएगा और हर कोई स्वस्थ होगा।

वटवृक्ष

सारा वायहिंग

त्युबिंगन विश्वविद्यालय, जर्मनी

यह भारत में किसी बरगद के पेड़ की कहानी है। कोई भी नहीं जानता है कि वह वास्तव में कितना पुराना है। यदि आप उस गाँव के लोगों से पूछेंगे तो वह हमेशा के लिए वहीं था। सृष्टि की बड़ी योजना में उसका जीवन एक छोटे से पल बराबर भी नहीं होगा। और उस शहर के अधिकांश लोगों को यह पता भी नहीं है कि वह वहाँ मौजूद है। खुद पेड़ को भी अपनी उम्र पता नहीं है। लेकिन वह आज भी राजपूतों और मुगल सम्राटों द्वारा शासित एक अलग भारत को याद करता है। वह अंग्रेजों के शासन के दौरान वहाँ था और बेशक उसे आज़ादी का पल याद होगा... कम से कम वह अपने गाँव में लोगों की खुशी को याद करता होगा। अगर आप उसकी खुशी की यादों के बारे में पेड़ से पूछो तो उसकी सीधी-साधी यादें अब भी बची होंगी।

वह मौसम के बदलते चक्र से प्यार करता है और गर्मियों की तपती गर्मी से। खेलते-खेलते अपनी छुट्टियों का आनंद ले रहे बच्चों को अंतहीन खुशी देता है जो कभी नहीं थकते। जब वे आम खाकर और गन्ने का रस पीकर बरगद के पेड़ों की शाखाओं की छाया में आराम करते हैं तब पेड़ उसकी आँखों में खुशी देख सकता है। जिस तरह से पहली मानसून की प्रतीक्षा में सब कुछ थम सा जाता है।

पहले मानसून के बारिश के दौरान गीली मिट्टी से उठती हुई सुगंध। पहली बारिश शुरू होते ही सब चीज़ों में जान आ जाती है। किसान चमकीले हरे रंग के धान के खेतों में

काम करना शुरू करते हैं। अचानक पेड़ की शाखाओं पर बैठे हुए मोर होते हैं, मूसलाधार बारिश पड़ती जाती है और नीचे झुके बादल सभी चीज़ों को जादुई स्पर्श देते हैं। यह एक अविश्वसनीय रंग होता है, प्रकृति को जीवंत चमचमाता हरा रंग। फिर वह तालाबों और पोखरों में नहाते हुए बच्चों को देखता है, बड़े और वयस्क लोग जल्दी में हैं और हवा में भजिया और चाय की गंध बिखरी हुई है। कई जगह गिरने वाले सफ़ेद झरने से हर कोई मंत्रमुग्ध है। हवा ताजा और साफ़ लगती है और तालाबों में मेंढकों की टर्र-टर्र गूंजती है। और जब कोई नहीं है तब वह घोंघे को यहाँ से वहाँ जाता देखता है, जो अपने धीमे लेकिन निर्धारित रास्ते में जाना पसंद करते हैं।

जब सूरज बादलों को हटाकर बारिश के अंत की घोषणा करता हुआ सामने आता है तब वह सुंदर रंगों से भरे इंद्रधनुष को देखकर बहुत उत्साहित हो जाता है। उसे सर्दियों की ठंडी सुबह पसंद है, जब सुबह का सूरज सब में बस जाता है, यहाँ सब कुछ पहले की तुलना में कितना अलग लग रहा है। जब वह बच्चों की आँखों में देखता है तो वह उम्मीद की नज़र से देखता है। सुंदरता और परिवर्तन की आशा खोजने की उम्मीद। उनकी आँखों में वह एक नई दुनिया देखता है जो पहली जैसी हरी भरी है।

वह जगह-जगह छाई धुंध हटाता है। सुबह शांत होती है, लेकिन दोपहर में जब स्कूल ख़त्म हो जाता है तो हवा बच्चों के खेलने की हंसी और बातों से भर जाती है। अब शादी का मौसम आता है। वहाँ सुंदर कपड़े पहने जोड़ियाँ दावत देती है और हर कोई अपने बेहतरीन कपड़े पहनता है।

पेड़ के नीचे जो बेंच लगी हुई थी। वहाँ छात्रों ने पढ़ाई की है और वह उनके साथ मिलकर कुछ नया सीख सका है। यहाँ वे नयी-नयी भाषाएँ सीखते थे जो पेड़ को समझ नहीं आती थीं और ऐसी दूर की जगहों के सपने देखते थे जिनकी पेड़ कल्पना भी नहीं कर सकता। पेड़ को उनकी सीखने की उत्सुकता और जीवन जीने की भूख देखकर उन पर प्यार आता था। और जब वे अपने खाली समय में उपन्यास पढ़ा करते थे तब वह उन सभी जीवन और प्रणय की कल्पना से प्यार करता था जिन त्रासदी के बारे में वे पुस्तकें बताती थीं। जब उन्होंने पढ़ाई पूरी की तो भले ही पेड़ ने उन पर बहुत गर्व महसूस किया हो, फिर भी पेड़ उदास था क्योंकि वह जानता था कि अब वे यहाँ अध्ययन करने के लिए कभी नहीं आएँगे। उस बार उसे थोड़ा अकेला लगा। लेकिन उनमें से कुछ अपने परिवार के साथ उसकी छाया में बैठने के लिए या व्यस्त कामकाजी जीवन से दूर खुद से एक किताब पढ़ने के लिए वापस आ गए और फिर पेड़ ने पुराने दोस्तों का साथ महसूस किया।

चीजें बदलती रहीं। गाँव एक शहर में बदल गया। उसके आसपास का जंगल ऊंची इमारतों में बदल गया। बेंच अब वहाँ नहीं है और जीवन-शैली बहुत भाग-दौड़ की हो गयी है। अक्सर पेड़ पुराने समय के बारे में सोचता है जब रंग चमकदार लगते थे, हवा साफ़ थी, और पानी शुद्ध था। इन पलों में वह उदास होता और उन बदलती चीजों को देखकर बहुत चिंतित होता है। लेकिन फिर वह अंधेरी इमारतों के ऊपर एक इंद्रधनुष देखता है, वह देखता है कि वहाँ खिड़कियों पर सूरज की एक किरण है। वह एक हँसी सुनता है और उसे हल्का महसूस होता है। वह अभी भी सुंदरता देख सकता है, बस अब

यह उतनी ज़्यादा मात्रा में नहीं है जितना हुआ करती थी। यह सुंदरता अब कोनों और छोटी जगहों में छिपने लगी थी, लेकिन यह अभी गयी नहीं है। पेड़ सिर्फ सीमेंट के रेगिस्तान में सुंदरता की तलाश करता रहता है, जहाँ सब कुछ पहले की तुलना में कितना अलग लग रहा है। जब वह बच्चों की आँखों में देखता है तो वह एक उम्मीद देखता है। सुंदरता और परिवर्तन की आशा खोजने की उम्मीद। उनकी आँखों में वह एक नई दुनिया देखता है जो पहली जैसी हरी-भरी है।

एक रवायत की पहचान

आंद्रे ब्रोएनिग

त्युबिंगन विश्वविद्यालय, जर्मनी

“ता तेय ता तेय ता ता तेय आ तेय आ तेय ता ता तेय ता तई ता ता ता”... मेरे गुरुजी के अल्फ़ाज़ फ़ोन से निकलते हैं जबकि मेरे हाथ बोल के ताल की संगत करते हैं। आख़िरी ताली के साथ मेरा पाँव फ़र्श पे लगता है, तत्कार की शुरुआत, मेरे नृत्य की शुरुआत है।

उस नृत्य - हिंदुस्तानी रिवायत की लाज़िम अंग- उस नाच की लम्बी कहानी है। कथक: देसी संस्कृति की बेहतरीन मिसाल है। जैसे गांधार की शानदार मूर्तिकलाएँ- सिकाफ़त, ख़यालात और इतिहास के खूबसूरत मेल से बनी यह नाच परवान चढ़ा है। आदान प्रदान के ज़रिए परवान चढ़ा है, सियासत ने आकार दिया और राष्ट्र की तामीर की लाज़िम हिस्सा गया, विविधता से समृद्ध देश के लिए एक पहचान और खून ख़राबे एका बनाने की मेहनत से।

माना जाता है कि कथक खानाबदोश कथाकार जातियों- जनजातियों से सीधा जुड़ा हुआ है जो महाभारत और रामायण की कथाएँ गाते सुनते थे। यह भी कहा जाता है कि मंदिरों के नाच का एक रूप है, नाट्यशास्त्र का नाच। नाट्यशास्त्र यकीनन कथक के लिए अहम आधार भले ही हो, लेकिन यह समझना ज़रूरी है कि यह नाच कैसा था और वास्तव में कहाँ से आया? यह एक बिना जवाब का सवाल है। हाल के खोजों में अक्सर यह इतिहास की समझ सही नहीं बैठी। कोई भी सबूत नहीं है कि भक्ति आंदोलन इसकी शुरुआत का एक मुमकिन स्थान है। ऐसा मालूम है कि ईश्वरी प्रसाद को लखनऊ घराना

का जनक माना जाता है। अगरचे भक्ति आंदोलन ज़रूर लाज़िमी इख़्तियार से है। आम तौर पर कहा जा सकता है कि गुरु शिष्य परंपरा की मौखिक प्रकृति के कारण मुसलमानी अदालतों की तहरीर के पहले किसी भी मुनासिब वसीला को खोजने मुश्किल है जो दक्षिण एशिया में आठवीं सदी में शुरू होने वाला था। वे अपने साथ अपनी तुर्की, फ़ारसी और अरबी रिवायत लेकर आए थे। खूबसूरत ग़ज़लें, ठुमरी और जिसको हम कथक समझते हैं उन्होंने इसे आकर दिया है।

यह कहना ग़लत होगा कि बर्रे सग़ीर के शुमाली हिस्से में यह सब कुछ जंग और बड़ी तब्दीलियों के बिना नहीं आया था। लेकिन यह भी कह नहीं सकते हैं कि एकतरफ़ा था और इसके पहले यह देश जंग, फ़तह और तबाही से मुक्त था। फिर यह तो साझा इतिहास है और सब से ज़रूरी बात है कि कोई हक़ नहीं कि हम यह अपनी ही लड़ाई के लिए हमारे पड़ोसियों और भाइयों को ज़िम्मेदार नहीं ठहराया है।

फिर से हम कथक की कहानी पर वापस आते हैं जिससे मुग़लों के दौर में सरपरस्ती के बाद खुद को बड़ी लड़ाई का सामना करना पड़ा था। चूँकि अंग्रेज़ियों ने उस नाच को अश्लील समझा। अच्छी तरह तालीम याफ़्ता तवायफ़ लोक ख़्याल में अपनी इज़्ज़त खो बैठी। वो नाच गर्ल पैदा हुई थी। सिर्फ़ कुछ मौरूसी ख़ानदानी के ज़रिए से कथक उस रिवायत के दमन के काल से बच गया और जब ब्रिटिश राज ख़त्म हुआ मान्यता मिली।

संस्थाएँ बनीं, मानकीकरण हुआ और एक नया काल शुरू हुआ, सरपरस्ती और अवसरों के लिए एक नई तलाश।

इस तरह यह नाच अब भी आगे बढ़ रहा है और हमेशा तब्दील और समायोजन और नए नए तजुर्मे से अभिन्न रूप से जुड़ा हुआ है। और वो उन सब को अपने में समेटता और बढ़ाता है जो आज के वक्त में मुमकिन है। ताकि अपनी गुरु- अगरचे इतनी दूर है- आपके साथ तजुर्बा और जानकारी साझा कर सकती है। एक नाच की शैली में जो डिजिटल काल में आ गया है। एक विरासत के बारे में दुनिया के रंगमंच पे आ गया है। एक वैश्वीकरण की दुनिया में सह-अस्तित्व और संगम के इतिहास के साथ विरासत।

और अब मैं अपने नाच के आख़िरी चरण में आता हूँ- मेरे नाच के सम पे- यह जब पूरी वैश्वीकरण की दुनिया कुछ देर के लिए शांत हो जाती है। और सदियों की इतिहास और ज्ञान का सरमाया इस एक ही लम्हा में इकट्ठा होकर, मिल जाते हैं।

कविताएँ

सफ़ेद बर्फ़

वालेंतिना मारिनोवा

सोफ़िया विश्वविद्यालय, बल्गारिया

ज़रा सा काँपना शाखाओं का

और झरना चुपचाप

सफ़ेद बर्फ़ का

भागती है उदासी

छिपा लेती है मनुष्य को अपने में

सफ़ेद बर्फ़

मिलता है थोड़ा सा सुख बिलकुल पारदर्शी

और दिल की गहराई से

सफ़ेद बर्फ़ में

देख रही हूँ तुम्हारी आँखों में

ढूँढ रही हूँ तुम्हारे हाथों को

सफ़ेद बर्फ़ में

हमारी हथेलियाँ

सूखी है और गर्म भी

सफ़ेद बर्फ़

बन जाती है हमारी आत्माएँ जैसे मंदिर

और प्रेम हमें देता है पवित्रता

सफ़ेद बर्फ़ में

***

दिल ताले में

जेल में आत्मा

और तुम-सूर्यास्त की अंतिम किरन

जैसे अंतिम अंगारा

रेगिस्तान में सपने या नींद कुछ भली सी

विदा से पहले

गिर पड़ा वह उदासी से

झंकृत ज्यों

गिटार के तारों की साँस

प्रतीक्षा

लिलिया देनेवा

सोफ़िया विश्वविद्यालय, बल्गारिया

नज़र किसी ओर फेरती है-

किसकी प्रतीक्षा कर रही हो तुम?

आँखों में जो तीखी वेदना है-

उसे किस लिए सह रही हो तुम?

किसी झूठे प्रेमी ने तुम से कहा

कि वह आएगा पर वह आता ही नहीं…

या बच्चे का कोई चिंतन कि कहाँ

है वह अभी और कहाँ नहीं।

तुम्हारी आँखों में छिपाया क्या हुआ

यह किसी को भी नहीं पता।

हृदय में सारी व्यथा ही रहा

उसे और कोई तो महसूस नहीं करता।

शायद ऐसा ही औरत का भाग्य है

कि किसी का इंतज़ार करे कहीं

और इस में शंका का कोई अंश भी है

कि वह आएगा या नहीं।

तीन कविताएँ

सिद्धार्थ वत्स

यूनिवर्सिटी ऑफ़ टोरंटो

समय की दौड़ में

इस समय की दौड़ में तुम्हें हमेशा ही हराना है

जिस क्षण का तुम पीछा कर रहे हो

उसकी शुरुआत ही उसके अंत से होती है

बस इतनी छोटी सी है यह ज़िंदगी

पलक झपकी नहीं कि युग बदल गया

आज मैं तुम्हारे सामने नाम सहित हूँ

जल्द ही धुंधला चेहरा बनकर रह जाएगा

बुढ़ापे में बचपन की यादों में

एक राज गहरा बनकर रह जाएगा।

***

पहला कदम

हर रोज़ तुम उठते तो हो पर जागते नहीं
क्यों पाना चाहते हो पूरा जहाँ बस यूँ ही
वो पहला कदम उठाते क्यों नहीं

घुड़सवार के बिना घोड़े भी सही दिशा में भागते नहीं
घोड़े की लगाम अपने हाथों में लेके तो देखो
वो पहला कदम उठाते क्यों नहीं

हीरे बनते नहीं यूँ ही इतनी आसानी से
तुम भला अपने कोयले की खान में झाँकते क्यों नहीं
वो पहला कदम उठाते क्यों नहीं

देखो, खोदो पहाड़
क्या पता कुछ नया मिले
पहाड़ के नीचे यह चुहिया देखकर मुस्कुराते क्यों नहीं
वो पहला कदम उठाते क्यों नहीं

महानता के लिए मुश्किल काम तो करने पड़े हैं सबको ही

तो भला तुम लोहे के चने चबाते क्यों नहीं

वो पहला कदम उठाते क्यों नहीं

***

पैसा

रूपया, पैसा, रूबल, डॉलर, तू ही तो लक्ष्मी माया है।

नाम, रूप और गुण अनेकों, दुनिया को भरमाया है।।

है लोभ चढ़ा सबके सिर पर, क्या बात करूँ नादानी है।

पागल कर दे इंसा को जो, पैसे की अजब कहानी है।।

जहाँ रुतबा पहले ज्ञान का था, धर्म, कर्म, ईमान का था।

अब पैसे की ही माया है, लगता फरमान भगवान का था।।

उल्लू पर बैठी यह लक्ष्मी, टिक कर वरदान नही देती।

राजा को रंक बना देती, याचक का मान बढ़ा देती।।

रिश्ते टूटते पैसे से, पैसे से सभी यार बनते।

गीली लकड़ी के चूल्हे पर, मन के अरमान नहीं पकते।।

इंसा कहता पैसा आए, तो मैं कुछ करके दिखलाऊँ।

और पैसा कहता है, 'कुछ कर' तब मैं पास तेरे आऊँ।।

टका धर्म है टका कर्म है, टके से सबकी शान है।

सारे गुण बसते पैसे में, अरे, पैसा ही भगवान है।।

माया महा ठगनी होती है, कहते गुरुजन ज्ञानी हैं।

हर चीज की कीमत नहीं पैसा, दुनिया पागल दीवानी है।।

कोई नाज़ करे निज दौलत पर, कोई यश कीर्ति पर नाज़ करे।

यह सब बुराइयों की जड़ है, सब संबंधों पर गाज गिरे।।

जिंदगी मिली थी मानव की, किसी के काम आने के लिए।

वक्त बीता जा रहा, कागज़ के नोट कमाने के लिए।।

***

कहानियाँ

अमीर औरत की डायरी

अन्नालेना शुल्त्से

लाइप्त्सिग विश्वविद्यालय, जर्मनी

1954

प्रिय डायरी

बहुत समय बाद मैं आज कुछ लिख रही हूँ। मेरी माता हमेशा मुझसे कहती कि अगर तुम कुछ लोगों को अपनी समस्याओं के बारे में बताती हो तो अच्छा लगेगा। लेकिन मेरे दोस्त अभी नहीं हैं। सब लोग मुझसे दूर हो गए हैं। मुझे छोड़कर कोई नहीं है जिस पर मैं विश्वास कर सकती हूँ। इसलिए मैं अपने बचपन के दिनों की तरह कागज़ और स्याही लेकर बैठ गई हूँ। जो मैं तुमको बताऊँगी यह सुनकर तुम विश्वास नहीं करोगी।

शादी का जो मतलब होता है यह मुझे मालूम नहीं था। मेरे माता-पिता मेरी शादी चाहते थे और मैं कोई और कल्पना भी नहीं कर सकती थी कि और क्या करूँ। मुझे यह विचार पसंद भी आया। मेरे पति की एक बड़ी कंपनी है जिस कारण मैं इस देश में एक बहुत अमीर औरत बन गई थी। लेकिन कल से मेरे पति अस्पताल में भर्ती हैं। दिल का दौरा पड़ा है। डॉक्टर ने मुझसे कहा कि उनकी हालत बहुत बुरी है। पूरी रात मैं भगवान से प्रार्थना करती रही कि वे जल्दी ठीक हो जाएँ। मुझे आशा है कि भगवान मेरी सुनेगा।

कल मैंने अपने पड़ोसी से बातचीत की। वास्तव में यह कोई सामान्य बातचीत नहीं थी। वह मुझ पर चिल्लाया, हँसा। उसने मुझसे पूछा कि मेरे पति कैसे हैं? मैंने इस सवाल का जवाब दिया कि वे अस्पताल में भर्ती हैं। उसने मुस्करा कर मुझसे कहा कि यह हैरानी की बात नहीं है। वह मुझको ही उनके दिल के दौरे का दोषी मानता है। उसने मुझसे

कहा कि पत्नी को घर में पार्टी नहीं करनी चाहिए। अगर सब औरतें आपकी तरह पागल होंगी तो इस देश का क्या होगा। अगर वह ठीक नहीं होगा तो इसमें आपकी गलती है। ‘मैं मुड़ी और सीधे घर की ओर भाग गई। मैं घर जाकर रोने लगी। हाँ, शादी के कुछ साल बाद मुझे पार्टी करना पसंद था लेकिन यह मेरे अपने पैसे से और मेरे ही घर में हुई। मेरे पति हर दिन काम करते थे। इस वजह से मैं घर पर अकेली थी। मुझको दोस्त चाहिए थे, मैं अकेली नहीं रहना चाहती थी। अभी मैं अकेली महसूस कर रही हूँ।

उस समय बहुत सी अफ़वाहें मेरे बारे में फैलाई जातीं थीं। अख़बार में लिखा गया था कि मैं शैंपेन में नहाती हूँ। हालाँकि मैं अपने स्विमिंग-पूल को शराब से साफ़ करती थी। यह तरीक़ा मेरे बाग़बान ने मुझे सिखाया था। एक दूसरी अफ़वाह यह थी कि मैंने पड़ोसी के कुत्ते के बाल हरे रँग से रँगे। यह ग़लत है। उसकी तो एक बिल्ली थी। मेरी ज़िंदगी उत्साही थी लेकिन मैंने बहुत सामान्य बातें भी की थीं। मैंने तीन बच्चों को जन्म दिया। दो बेटियाँ और एक बेटा। वे वयस्क हैं और हमारे पास नहीं रहते हैं। पहले बच्चे के बाद मैंने पार्टी किया और शराब पीना ख़त्म कर दिया। लेकिन अख़बारों में इसके बारे में मैंने कुछ नहीं पढ़ा। लोगों को सिर्फ़ अफ़वाह पसंद हैं। अगर मैं यह करती हूँ जो वे मुझसे अपेक्षा करते हैं तो उसके बारे में कोई नहीं बोलता। शादी के बाद एक बच्चे को जन्म देना मेरा कर्तव्य था। मेरी सबसे बड़ी बेटी अपने पहले बच्चे का इंतज़ार कर रही है। मैं नानी बनूँगी। इस बात से मैं ख़ुश हो जाती हूँ। मुझे आशा है कि मेरे बच्चों की ज़िंदगी शांत होगी। इसलिए मैं ख़ुश हूँ कि वे हमारे पास नहीं रहते हैं।

पिछला वाक्य लिखे हुए मुझे एक घंटा गुज़र चुका है। डाक्टर ने मुझे फ़ोन किया कि मेरे पति मर गए। डाक्टर ने मुझे समझाया कि उन्होंने बहुत ज़्यादा काम किया। इस वजह से उनको दिल का दौरा कोई अप्रत्याशित बात नहीं है क्योंकि वे सालों तक बहुत काम करते रहे। अभी मुझे अपने बच्चों को फ़ोन करना है। मैं चाहती हूँ कि उन्हें इसके बारे में मुझसे पता चले न कि अख़बार से। इस देश का सबसे अमीर आदमी मर गया है। शायद मेरी पुरानी ज़िंदगी ख़त्म करने का समय आ गया है। हम अपने घर बेचने की सोचते थे। मैं ऐसा करूँगी। मकान समुद्र के पास है और यह इस रूप में बिक जाएगा कि यहाँ शानदार छुट्टियाँ मनाई जा सकती हैं। मुझे आशा है कि मैं जल्दी ही प्रेस से मुक्त होकर रह सकती हूँ।

बहुत सारा प्यार

बेट्टी

(यह कहानी रेबेका हार्कनेस Rebekah Harkness की जिंदगी से प्रेरित है।)

मानसून का जादू

माग्दालेना वार्नर

म्यूनिख़ विश्वविद्यालय, जर्मनी

गहरे काले राक्षसी बादल उमड़ते-घुमड़ते तेज़ी से घिरते आ रहे हैं। वे बेहिसाब बढ़ते चले जाते हैं और डराते-धमकाते शहर के करीब और करीब आते हैं। सड़कों पर तेज़ तूफानी हवा बह रही है, जहाँ कुछ दिनों पहले की गर्म-आर्द्र हवा साँस लेना मुश्किल बना देती थी। तनाव न केवल हवा में है बल्कि ऐसा लगता है कि इस वातावरण में सब कुछ तैरता हुआ, लगभग जैसे सबने अपनी साँस बाँध रखी हो। हवा तूफ़ान मचा रही है और पेड़ों के साथ एक थका देनेवाला खेल-खेल रही है। बादलों के पहाड़ बढ़ते हैं, वे लगातार अपने रूप बदलते हैं। वे शहर के ऊपर छा जाते हैं जैसे वे लड़ना चाहते हों। इसके पहले कि मुक्ति देनेवाली बूँदें रात की हवा से सनसनाती गुजरें कानों को बहरा कर देनेवाली बिजली की गूंज घर की दीवारों को कंपा देती है। एक बहुत तेज़ बिजली चमकने से अंधेरा फट रहा है जो कुछ पलों के लिए गलियों में भूतिया छायाओं को ज़िंदा कर देती है। किसी भी संयम के बिना बादल अपने द्वार खोलते हैं और पानी झमाझम बरसने लगता है जो बहुत लंबे समय तक बादलों ने थाम कर रखा था। इतनी बारिश गिरती है की वह एक पल में सड़कों को उफनती नदियों में बदल देती है। थोड़ा चिल्लाती और गाती मैं अपार्टमेंट से निकलकर बारिश की ओर दौड़ती हूँ। मेरे जैसे ही उत्साह वाली अपनी सहेलियों और पड़ोसियों को मैं अपने साथ में ले जाती हूँ और बहुत खुश होकर हम सभी गड्ढों में कूदते हैं। तेज़ बारिश की धुन पर बिना थके हम नाचते हैं। बूंदें ठंडी ठंडी लाल-गर्म चेहरों

पर पड़ती हैं और उन्हें सभी पापों और भयों से मुक्त करती हैं। मैं अपनी बाहों को आकाश की ओर उठाती हूँ और तेज़ आवाज़ से काले बादलों पर दहाड़ रही हूँ। एक पल के लिए समय ठहर जाता है और मैं अपने को खो देती हूँ। प्रकृति के साथ पूर्ण सामंजस्य में समय और स्थान के बीच तैरती हूँ। पल में खोती हुई शुद्ध आनंद की इस भावना के अलावा दुनिया में कुछ भी नहीं है।

बारिश शांत होती है और ख़ुशी से ठंड लगती है। पानी टपकने वाले गीले कपड़े पहने हुए मैं अपने घर की सीढ़ियाँ चढ़ती हूँ। वह स्थान जहाँ मैं इस दुनिया के सभी नुकसानों और दुष्कर्मों से सुरक्षित महसूस करती हूँ। दरवाज़े को पार करते ही गर्मजोशी और परिचय का एक बादल मेरा स्वागत करता है जिसका साया इतना मजबूत है कि कोई भी इससे बच नहीं सकता। आरामदायक ऊनी मोजे मेरे पैरों को गर्म करते हैं और कोने में दुनिया में सबसे आरामदायक सोफ़ा है जिस पर बैठने से पहले, मैं पानी के कारण सूजे हुए हाथों से प्याले को पकड़कर, गर्म कॉफी थोड़ी से शराब के साथ लेती हूँ। ओल्ड मौंक कंठ को जलाता हुआ नीचे उतरता है और मेरे गालों को फिर से चमका देता है। मैं उस धुएं को देखती हूँ जो तैरते हुए ऊपर उठता है और अगरबत्ती के धुएं से मिल जाता है। मेरा सिर ख़ुशी और थकान से भरकर उसके कंधे पर गिरता है और उसके हाथ मुझे घेरते हैं। मैं ऐसे खुश और सुरक्षित महसूस करती हूँ, जैसे मैं घर पर होऊँ। उसकी आँखों को देखकर मेरी दुनिया फिर से शांत हो जाती है और मेरे रोंयें खड़े हो जाते हैं। मैं खुद को उसकी नज़र में खो देती हूँ, मैं उसकी असीम गहरी काली आँखों में विलीन हो जाती हूँ और तड़प से भर उठती हूँ, जो फिर कभी जाने नहीं देती। मेरे हाथ उसके शरीर पर

फिसलते हैं और कोमल त्वचा के हर छोटी सी छोटी की बार-बार तलाश करते हैं। हमारे शरीर एक-दूसरे को पुचकारते हैं, एक दूसरे के बन जाते हैं, प्यार करते और एक दूसरे की ज़रूरत हैं। हमारी छाती एक ही लय में उठती और गिरती है और मैं उसके पास और भी करीब आने की कोशिश करती हूँ। उसकी गर्मी मुझे सोख लेती है और हमारे शरीर जादुई बुलबुले में रोशन हैं। अब हम पूर्ण और परिपूर्ण हैं। हर छोटी से छोटी हरकत परिचित-सी लगती है और मेरे कान में उसकी सांस की धुन अनंत प्यार के गीत बजा रही है। उसके होंठ धीरे से मेरे से मिल रहे हैं, मैं अपने सारे होश खोती हूँ। एक दिव्य रौशनी हमारे शरीरों को घेर लेती है। एक ऐसी रौशनी जो हम दोनों को हमेशा के लिए घेरे और सुरक्षित रखेगी और हमेशा हमें एक-दूसरे की ओर वापस ले जाएगी। मैं अब प्यार से भरती हुई अंदर से चमकती हूँ केवल अपने दिल को पीछे छोड़ देती हूँ। यह यहाँ तुम्हारे साथ रहेगा। सभी आनेवाली चुभती-जलती गरमियों और तारों से प्रकाशित सर्दियों के लिए। मानसून के इस क्षण को याद रखना और अच्छी तरह सहेज कर रखना।

एक कप चाय

बर्नाडेट स्ताऊडर
लाइप्त्सिग विश्वविद्यालय, जर्मनी

मेरे पिता जी एक चायवाले हैं। जब से मुझे याद है तब से यह ऐसा था। मेरी पहली याद तो पानी उबलने की आवाज़ और चाय मसाले की ख़ुशबू की है। हर सुबह सवेरे जब मैं, माँ और मेरी बड़ी बहन स्वाति सोती रहती हैं तब पिता चुप उठकर घर से निकलते हैं – चाय-शॉप में सब कुछ ग्राहकों के लिए तैयार करने को। दोपहर को स्वाति और मैं स्कूल के बाद ही पिता जी की दुकान जाती हैं। वहाँ पर पिता हमको सुबह के कमाए हुए पैसे को गिनने देते हैं। वे हमको ग्राहकों की मज़ेदार कहानियाँ सुनाते हैं और हमको दुकान के शेल्फ़ से निकालकर बिस्कुट देते हैं – ठीक लंच के पहले ही। यह बात एक छोटा रहस्य है जो हम माँ से गुप्त रखते हैं।

मेरे ख़याल से मेरे पिता जी दुनिया में सब से अच्छे पिता हैं। मैं यह भी सोचती हूँ कि चायवाला सब से अच्छा काम है। विश्वविद्यालय में पढ़ाई का अंत करके मैं भी चायवाली बनना चाहती हूँ।

सिर्फ़ कभी-कभी मैं यह भी सोचती हूँ कि चायवाले का काम उबाऊ भी हो सकता है। उदाहरण के लिए अफ़सोस की बात यह है कि पिता को हर दिन इतने सवेरे उठना पड़ता है कि ख़ुद चाय पीने के लिए उनके पास काफ़ी समय नहीं है। इसकी वजह से एक दिन स्वाति और मैं ने कोई योजना बनाई। हम गुप-चुप बहुत सवेरे (लगभग चार बजे) उठ गईं। हमको पता है कि पिता जी दुकान की चाबी कहाँ रख देते हैं। तो दुकान में

गुज़रना एकदम आसान था। वहाँ पहुँचकर हमने धीरे-धारे चाय बनाना शुरू किया। स्वाति पानी और दूध उबालने लगी जबकि मैं ने चीनी और मसाले की खोज की। अंधेरे होने के कारण सब कुछ करने में थोड़ी मुश्किल हुई, लेकिन आख़िरकार चाय तैयार थी।

'मैं सवेरे ग्राहकों के लिए दुकान में रहूँगी। तुम पिताजी के लिए एक प्याला चाय पलंग पर ले जाओ!', स्वाति ने कहा। तो मैं चाय का कप साथ लेकर घर वापस गई। जब मैं वहाँ पहुंच गई तभी पिता उठनेवाले थे। 'रुकिए', मैंने पुकारा, 'पलंग में रहिए! उठिए मत। आज आपका ख़ुशी का दिन है! आज दुकान का काम स्वाति और मेरी ज़िम्मेदारी है। आपको आराम करना चाहिए।'

पिता विस्मित हुए फिर मुस्कुराने लगे। 'देखिए', मैं आगे बोली, 'हमारी चाय आपके लिए!' मैं उनको चाय का कप देके उनको पीते देख रही थी।

'बहुत धन्यवाद!', उन्होंने कहा, 'तुम्हारी चाय बहुत स्वादिष्ट थी!'

मैं ख़ुश होकर दुकान पर वापस आ गई स्वाति को यह बताने कि पिता जी को चाय कितनी पसंद आयी।

लेकिन क्या हुआ? रास्ते में ही स्वाति मेरी तरफ़ आ रही थी। 'गीता, गीता', वह चिल्लाई, 'पिता को चाय मत दो!'

'क्यों?', मैंने पूछा, 'क्या बात है?'

'आह, बकवास!' स्वाति ने कहा, 'मैं सोचती हूँ कि हमसे इस चाय बनाने में एक गलती हुई है। इतना अंधेरा था... और... तुमने चीनी की जगह चाय में नमक डाल दिया।'

एक पल हम एक-दूसरे को परेशान होकर देखते हुए खड़ी रहीं। फिर मैं हँस पड़ी।

‘तुम जानती क्या? पिता ने कहा कि चाय बहुत स्वादिष्ट थी।’

मैं क्या बताऊँ – मेरे पिता जी सबसे अच्छे हैं।

इकिगाई और छोटा मगर

मार्लेने त्साईस

त्युबिंगन विश्वविद्यालय, जर्मनी

आज लिंडा के स्कूल का अंतिम दिन है, सचमुच लिंडा को दूसरे मित्रों जैसा खुश होना चाहिए था, लेकिन उसे पता नहीं कि उसे आगे क्या करना चाहिए। उसके दूसरे दोस्त उसके बारे में कुछ न बोले, वे कहाँ घूमना चाहते हैं या वे क्या पढ़ाई करना चाहते हैं उन सबने यह भी बताया पर लिंडा में बड़ा ख़ालीपन है। जब कोई उससे पूछे, वह क्या करना चाहती है तब वह अस्पष्ट कहती थी उसे गर्मी की छुट्टियों में पहाड़ों में दादाजी की मदद करनी पड़ेगी।

लेकिन अभी अपने दादा की तरफ़ जाते हुए उसे मालूम नहीं है कि वह तीन हफ़्ते के बाद क्या करना चाहती है। उसे माता-पिताजी जैसा डॉक्टर होना चाहिए या कला के महाविद्यालय में जाएगी? वह दादाजी के साथ आयी ताकि वहाँ वह पहाड़ की ताजी हवा महसूस कर सके। उसे हमेशा पहाड़ की ताजी हवा पसंद थी क्योंकि वहाँ उसके सारे बुरे विचार काफ़ूर हो जाते हैं।

लेकिन दादाजी ने भी उससे पूछा तुम क्या करना चाहती हो? तब लिंडा रोने लगी और उसने कहा कि उसे पता नहीं। दादी जी ने लिंडा का हाथ लेकर कहा मुझे तुम्हें एक कहानी सुनानी है। हालाँकि लिंडा बीस साल की है फिर भी वह उन कहानियों से प्यार करती है। अगर दादीजी कहानी सुनाने लगतीं तो वे हमेशा यहाँ से शुरू करती हैं, ‘एक समय की बात है’...। दादी जी के ऐसा बोलते ही लिंडा ने बेहतर महसूस किया।

एक समय की बात है एक छोटा मगरमच्छ अपने परिवार के साथ समुद्र में रहता था। तैरते-तैरते छोटा मगर बहुत-सी मछलियों को देख रहा था। उसने बार-बार शब्द 'इकिगाई' सुना। इसके बाद से सारे समय यह शब्द मगर के सिर में घुमड़ता रहा और शाम को उसने पिता से पूछा कि इकिगाई का क्या मतलब होता है? लेकिन पिताजी को पता नहीं था और वह छोटे मगर के पास से तैरती हुई मछलियों से पूछने लगा परंतु कोई भी इस शब्द का मतलब नहीं जानता था छोटे मगर ने निश्चय किया कि वह इकिगाई का अर्थ जानने के लिए कोशिश करेगा। कुछ दिनों के बाद उसको एक बूढ़ा ऑक्टोपस मिला और उसने पूछा कि उसने इकिगाई शब्द जापानी द्वीप 'ओकिनावा' के पास सुना था वह छोटा मगर जापान के द्वीप तक तैरते हुए जाने लगा तो उसे रास्ते में बहुत अलग-अलग मछलियाँ और समुद्री जीव-जंतु मिले।

जापान के द्वीप के पास पहुँचते ही उसे एक साधु मिला। साधु सोच-समझ से प्यार करता था लेकिन उसके पास कोई नहीं था जिसको सारी जानकारी पता हो। हर दिन छोटा मगर उससे पूछता कि प्रिय साधु! एक कहानी सुनाइए।

एक दिन छोटे मगर ने साधु से पूछा इकिगाई शब्द का क्या अर्थ है?

साधु ने कहा कहा : कि इकिगाई शब्द का अर्थ 'जीवन में अर्थ मिलना' है।

छोटा मगर बोला लेकिन मुझे जीवन में अर्थ क्यों मिलना जाहिए?

साधु ने जवाब दिया अगर तुमको अपने जीवन के अर्थ पता हैं तो हर रोज सुबह

तुमको इससे बहुत शक्ति और प्रेरणा मिलती है क्योंकि तुम्हारे जीवन में एक अर्थ है।

छोटे मगर ने पूछा तुम्हारा इकिगाई क्या है?

साधु ने कहा, मेरा इकिगाई दुनिया को समझने के लिए अपनी जानकारी दूसरों को देना। और छोटे मगर! तुम्हारा इकिगाई क्या है?

छोटा मगर बोला, यह अच्छा सवाल है पर मुझे पता नहीं ।

साधु बोलने लगा, बिलकुल नहीं! मैं जानता हूँ कि तुम जीवन में अपने अर्थ को पाओगे। यह विश्वास करो कि जैसा होना चाहिए वैसा ही होता है। चिंता मत करो!

दादाजी ने कहा कि यह कहानी का इकिगाई मुझे हमेशा विश्वास देती थी कि मुझे भी जीवन में अपना अर्थ मिलेगा। हालाँकि लिंडा को मालूम नहीं कि वह क्या करना चाहती है फिर भी वह बेहतर महसूस कर रही है।

फ़िल्मी दुनिया और फ़िल्म समीक्षा

हिच हायकर्स गाईड टू द गैलेक्सी

सारा आकरमन

ज़्यूरिख़ विश्वविद्यालय, स्विट्ज़रलैंड

हिच हायकर्स गाईड टू द गैलेक्सी एक रेडियो प्रसारण है और उसके पहले ही यह लेखक डग्लस ऑडम्स की एक पुस्तक के रूप में प्रकाशित थी । इस पुस्तक में 5 कहानियाँ हैं। मेरी प्रस्तुति पहली कहानी के बारे में है। इसका शीर्षक *हिचहायकर्स गाईड टू द गॅलक्सी* है। जैसा कि पुस्तक के नाम से पता चलता है यह एक कल्पित विज्ञान की कहानी है। कहानी में हर बार उसी किताब के शीर्षक का प्रयोग किया गया है। यह पुस्तक किसी ई-बुक या नोटपैड जैसी है। यह इतनी हल्की है कि इसे अपने साथ आसानी से ले जाया जा सकता है और इसमें इलेक्ट्रोनिक इनपुट कुंजी भी है। इसकी विषय-वस्तु बिलकुल विकिपीडिया जैसी है। इसमें किसी भी लेख को आसानी से खोजा जा सकता है। शोध के लिए यह एक आसान तरीका उपलब्ध कराती है और यह किताब एक विश्वकोश के बहुत सारे विषयों को अपने में समेटे हुए है। विकिपीडिया से 20 साल पहले ऐसा इस पुस्तक में ऐसा लिखा गया है ! इस गाईड का लगभग सूत्र वाक्य किताब के पीछे पृष्ठ पर लिखे हुए शब्द हैं, डोन्ट पैनिक ! अर्थात घबराओ मत! यहाँ पुस्तक और किताब शब्द का अंतर बताना ज़रूरी है। इस लेख में पुस्तक शब्द का प्रयोग डगलस एडम्स की रचना के लिए है और किताब शब्द का प्रयोग उस गाइड के लिए है जिसके बारे में डगलस एडम्स की यह रचना है।

इसकी कहानी इंग्लैंड में शुरू होती है। आर्थर डेंट को अभी पता चला कि उसका मकान एक तेज़ रफ़्तार वाली नई सड़क बनाने के लिए तोड़ दिया जाएगा। जब वह इस बात को लेकर लोगों से झगड़ा कर रहा है तभी अचानक उसका दोस्त, फ़ोर्ड परफेक्ट आ जाता है। फ़ोर्ड परफेक्ट, वास्तव में दूसरे ग्रह का निवासी है। वह 15 साल से पृथ्वी पर फंसा हुआ है। वह अपने दोस्त को बचाना चाहता है क्योंकि उसे मालूम है कि लगभग १२ मिनट में पूरा ग्रह एक नए एक्सप्रेस-वे के लिए हटा दिया जाएगा। फ़ोर्ड *हिच हाईकर्स गाइड* टू द *गैलेक्सी* के लिए लेखक या संवाददाता का काम करता है। फोर्ड जानता है कि आर्थर के साथ मिलकर वह कैसे कारपूलिंग करके धरती से दूर चला जाएगा। पृथ्वी के बारे में लिखे हुए उसके लेख में दो ही शब्द हैं: कुल मिलाकर हानिरहित।

फ़ोर्ड अंतरिक्ष यान के रसोइयों से पूछता है क्या वे उनको अपने साथ ले सकते हैं। क्योंकि रसोइयों को वोगोन पसंद नहीं हैं अतः वे आर्थर और फोर्ड को साथ आने देते हैं। असल में वे वोगोन को चिढ़ाना चाहते हैं। वोगोन अंतरनीहारिका साम्राज्य के लिए नौकरशाहों का काम करता है। आर्थर धरती के विनाश को लेकर थोड़ा ख़फ़ा है। विशेष रूप से उसे मैकडॉनल्ड्स की कमी खलेगी। लेकिन जल्द ही उसे और फ़ोर्ड को नयी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।

प्रोस्टेटनिक वोगोन चेल्ज़, अंतरिक्ष यान का कमांडर, यात्रा करनेवाले कुछ लोगों से नफ़रत करता है और उनको यान से बाहर निकाल फिंकवाता है। तभी सौभाग्य से एक दूसरा अंतरिक्षयान आ जाता है, ऐसा उनके मरने से एक सेकंड पहले होता है। इस अंतरिक्षयान का नाम 'हार्ट ऑफ़ गोल्ड' या हिंदी में 'सोने का दिल' है। उस यान के पास

सबसे नयी टेक्नोलोजी है जिससे एक्सप्रेस-वे को बनाने की ज़रूरत नहीं रह जाती। वह अपने भले के लिए या किसी संयोग से फ़ोर्ड और आर्थर को बचाता है। पर इसी वजह से 7 आदमियों की मृत्यु हो जाती है।

हार्ट ऑफ़ गोल्ड नीहारिका के राष्ट्रपिता से चुराया गया यान है। उसका नाम सेफ़ोड बीबेल्ब्रोक्स है। सेफ़ोड फ़ोर्ड का ममेरा भाई है। उसके २ सिर और ३ बाँहें हैं और वह एक प्रतिभावान व्यक्ति है पर बहुत सारी बातों में मूर्ख भी है। उसके साथ पृथ्वी की अकेली औरत है, ट्रिलियन या ट्रिशा मेकमिल्लन। सेफ़ोड ट्रिलियन से एक पार्टी में मिला था और धरती के नष्ट होने से ठीक कुछ समय पहले उसे अपने साथ अंतरिक्ष में ले आया था।

हार्ट ऑफ़ गोल्ड एक सामान्य अंतरिक्ष यान नहीं है। उसका एक कृत्रिम व्यक्तित्व है। अंतरिक्ष यान के कंप्यूटर का नाम एद्दी है और वह हमेशा ख़ुश रहता है। हार्ट ऑफ़ गोल्ड के यंत्र मानव का नाम मर्विन है और वह हमेशा उदास रहता है। अंतरिक्ष यान का चालन असम्भाव्यता के सिद्धांत से चलता है। वह किसी बात की असम्भाव्यता का अनुमान लगाता है और फिर वही करता है जो नहीं हो सकता था, जैसे आर्थर और फ़ोर्ड को अंतरिक्ष से बचाना।

उसकी यात्रा का अंतिम लक्ष्य 5 लाख साल से मृत ग्रह मग्राथिया है। यह ग्रह अब बन्द हो चुका है और यह नहीं चाहता कि कोई उसे तंग करे। इसलिए वह अपने आप से 2 रॉकेट छोड़ता है। साथ ही एक ख़बर आती है: ‘अगले जन्म में फिर से कोशिश कीजिए!’ नई टेक्नोलोजी की मदद से रॉकेट ख़ुद को एक फूल और एक तिमिंगिल में

बदल लेते हैं। तिमिंगिल इस ग्रह में एक छेद करते है जिससे सेफ़ोड, ट्रिलियन और फ़ोर्ड ग्रह में जाते हैं। आर्थर और मर्विन पीछे रह जाते हैं। अचानक मग्राथिया का एक बूढ़ा आदमी आता है। वह आर्थर को बुलाता है। आर्थर को पता चलता है कि मग्राथिया पर इच्छानुसार ग्रह बनाये जाते हैं और अभी पृथ्वी का दूसरा संस्करण तैयार होगा। यह पृथ्वी बहुत बड़ा कंप्यूटर होगी और उसका प्रोग्राम 1 करोड़ साल तक चलेगा। लेकिन पृथ्वी 5 मिनट में नष्ट कर दी गयी। चूहे, जो वास्तव में सर्व व्यापी प्राणी थे, एक सवाल का उत्तर ढूँढ़ रहे थे। यह सवाल जीवन, ब्रह्माण्ड और सबके जवाब के साथ जुड़ा था। दूसरे सबसे बड़े कंप्यूटर डीप थॉट ने यह जवाब दे दिया था। जवाब 42 है। अब चूहे इस विषय का प्रस्ताव चैट शो में लाते हैं पर इस व्याख्यान के लिए उनको आर्थर का दिमाग़ चाहिए। पर आर्थर ट्रिलियन, सेफ़ोड और फ़ोर्ड के साथ भाग निकलते हैं। दो पुलिस-अधिकारी उन्हें गोली मार देते हैं और वे मर जाते हैं । क्योंकि मर्विन ने उनके अंतरिक्ष यान से बात की थी, जिससे उसका संपर्क हुआ था। मर्विन से बातचीत के बाद अंतरिक्ष यान ने ख़ुदकुशी कर ली।

यह कहानी बहुत डार्क ह्यूमर है। जैसे हमको तिमिंगिल के विचारों का पता चल सकता है जो थोड़ी देर के लिए जन्म लेता है फिर तुरंत मर भी जाता है।

पुस्तक की दूसरी मज़ेदार विशेषता गीहारिका ग्रह्वासियों के बेतुके विचार हैं। वे गाईड में भी मिलते हैं। अंतरिक्ष यान से ब्रह्माण्ड में गिरना उतना बुरा नहीं है जितना मरने से पहले वोगोन की कविताएँ सुनना। भले ही वह 30 सेकंड तक मरता है। इसके पात्रों का सशक्त चरित्र भी इस रचना को हास्य प्रदान करता है। जैसे जब हार्ट ऑफ़ गोल्ड पर

हमला किया जा रहा है तब अलार्म नहीं बजता। बल्कि खुशमिजाज़ शिपबोर्ड कंप्यूटर एक गाना गाने लगता है।

इस कहानी में कोई लक्ष्य स्पष्ट नहीं है। सेफ़ोड भी नहीं जनता है कि वह मग्रथिया पर क्या तलाश रहा है। फिर भी लगता है कि कोई योजना नहीं थी बल्कि बहुत से संयोग थे। पृथ्वी का विनाश रोकने के लिए कोई आम नायक नहीं है। इसमें बहुत से आदमी और एलियन हैं जो अपना काम करते हैं। पर अपना काम उनको नहीं पसंद है।

इस कहानी में यह किताब महत्त्वपूर्ण है क्योंकि आर्थर एक पर्यटक की तरह इस अनजाने ब्रह्माण्ड में जो कुछ भी उसके सामने आता है उसे वह समझना चाहता है – और वह सब कुछ इस किताब में है।

पहली कहानी के सहारे हम सारी पुस्तक पढ़कर ही समझ सकते हैं। जैसे इस महत्त्वपूर्ण सवाल का जवाब : जैसे अपशकुनी 42।

अंत में एक सलाह : तौलिया मत भूलना।

डॉली, किट्टी और वे चमकते सितारे : दो औरतों की मुक्ति की खोज

सौफ़ी डीकमन

लाइप्त्सिग विश्वविद्यालय, जर्मनी

हैरानी की बात यह है कि परदेश में रहनेवाले लोग (एनआरआई) भी भारतीय संस्कृति (के मूल्यों) को बहुत रूढ़िवादी नज़र से देखते हैं। डॉली, किट्टी और वे चमकते सितारे इस नयी फ़िल्म के नीचे लिखी गई टिप्पणियाँ देखकर मैंने सोचा कि जिन लोगों ने यह लिखा है वे बहुत रूढ़िवादी हैं और मैंने तुरंत इस फ़िल्म में रुचि ली।

'डॉली, किट्टी और वे चमकते सितारे' कई कारणों से दिलचस्प है। सबसे पहले यह किसी सामान्य बॉलीवुड फ़िल्मों जैसी नहीं लगती। इसमें न अधनंगी नाचनेवाली अभिनेत्रियाँ हैं न नक़ली से वीर अभिनेता। इसके अलावा नाच-गाना फ़िल्म की सबसे अहम बात नहीं है।

जानने लायक़ बात यह है कि इस फ़िल्म की निर्देशिका अलंकृता श्रीवास्तव की पिछली फ़िल्म (लिपस्टिक अंडर माय बुरका, 2017) को भारत में कुछ महीने बाद रिलीज़ किया जा सका क्योंकि वह फ़िल्म सेन्सरशिप बोर्ड द्वारा अनैतिक ठहराई गई थी। लेकिन यह नई फ़िल्म ख़ास तौर पर इसीलिए देखने लायक़ है क्योंकि इसमें औरतों की आज़ादी दिखाई जाती है।

डॉली (कोंकणा सेन शर्मा) अपने परिवार के साथ नोएडा में रहती है। उसकी चचेरी बहन काजल (भूमि पेडनेकर) काम करने के लिए बिहार से आकर उसके पास रहती है। लेकिन महानगर की नयी ज़िंदगी काजल को कुछ समस्याओं के कारण परेशान करती है। डॉली के पति उसको ग़लत तरीक़े से छूते हैं और काम पर काजल के साथ

सिर्फ़ ग़ुलामों जैसा व्यवहार होता है। डॉली का फ्लैट छोड़ने के बाद उसको नया घर और नौकरी मिल जाती है। लेकिन फिर और तरह की मुश्किलें आ जाती हैं। डेटिंग एप्प की नयी कॉल सेन्टर की नौकरी में वह यह अनुभव करती है कि अधिकांश आदमी फोन-सेक्स ही मांगते हैं। अपनी आज़ादी की खोज में काजल को बहुत भारी फ़ैसला लेना पड़ता है।

डॉली भी अपने बेटे के बारे में चिंतित है जो गुड़ियों के साथ खेलना और ड्रेस पहनना पसंद करता है और अपने पति से शारीरिक संबंध के बारे में। इसके अलावा डॉली को ही दफ़्तर और घर का पूरा काम करना पड़ता है। जब उसका परिचय फ़ूड डिलीवरी करनेवाले जवान ओसमान (आमोल पराशर) से हो जाता है तब वह ज़िंदगी को नयी नज़र से देखने लगती है। लेकिन समाज औरतों से अच्छा व्यवहार माँगता है जिसके अनुसार परिवार की इच्छाएँ औरतों की इच्छाओं से ज़्यादा महत्त्वपूर्ण मानी जाती हैं।

कथानक और संदेश इस फ़िल्म की विशेषता हैं और कोंकणा सेन शर्मा का अभिनय बहुत अच्छा है।

अगर आपको फ़ेमिनिस्ट फ़िल्में पसंद हैं तो आप 'डॉली, किट्टी और वे चमकते सितार' ज़रूर देखें।

बॉलीवुड

बियात्रिस हैस इतोतुजी

लिस्बन विश्वविद्यालय, पुर्तगाल

बॉलीवुड का परिचय

फ़िल्में हमें दूर की संस्कृतियों के क़रीब लाती हैं। उनके क़रीब जिनसे हमारा कोई संपर्क नहीं है हमें उस देश की संस्कृति को समझने में मदद करती है। जैसा कि मैंने हिदीं का अध्ययन किया, मुझे महसूस हुआ कि मुझे अध्ययन के साथ अधिक फ़िल्में देखने की आवश्यकता है। उस भाषा को अनुकूलित करने के लिए उसे आपको अधिक सुनने की आवश्यकता है। इसलिए, मैंने भाषा और संस्कृति को करीब लाने में मदद करने के लिए भारतीय फ़िल्मों और संगीत की तलाश करने का फैसला किया। भारत में एक फ़िल्म उद्योग है। यह केवल एक देश में ही सीमित नहीं है, बल्कि यह एशिया और दुनिया भर में जाना जाता है। इसे बॉलीवुड कहा जाता है। इस इंडस्ट्री में कई तरह की फ़िल्में हैं। बॉलीवुड ज़्यादातर समय हिंदी भाषा का उपयोग करता है।

यह लेख बॉलीवुड के बारे में है। बॉलीवुड फ़िल्मों को कई देशों में जाना जाता है। बॉलीवुड फ़िल्मों ने कई लोगों को ख़ुश किया है। यहाँ मैं बॉलीवुड के इतिहास से सम्बंधित निम्न विषयों पर बात करना चाहती हूँ:

सिनेमा के साथ भारत का पहला संपर्क, बॉलीवुड के मुख्य आकर्षण, भारत में बनी पहली फ़िल्म, और फ़िल्म के निर्माण के लिए विषयों का चुना जाना। भारत में फ़िल्में अलग-अलग समय का प्रतिनिधित्व करती हैं।

बॉलीवुड का इतिहास:

फ़िल्म के साथ भारत का पहला संपर्क 1896 में बॉम्बे (अब मुंबई) में हुआ था जब लुमिये भाइयों ने सिनेमैटोग्राफिक तकनीकों को दिखाया। 1931 में पहली भारतीय फ़िल्म का निर्माण किया गया था। भारत में सिनेमा की प्रस्तुति 1897 में शुरू हुई। बॉलीवुड कहे जाने वाले इस प्रोडक्शन का काम दक्षिण-पूर्वी और पश्चिमी भारत की हॉलीवुड और क्षेत्रीय फ़िल्मों का एक संगम-स्थल है। वर्तमान फ़िल्में इन क्षेत्रों में आमतौर पर निर्मित होती हैं। भारत भर के कस्बों, शहरों और गांवों में बॉलीवुड फ़िल्मों को देखा-दिखाया जाता है।

बॉलीवुड फ़िल्मों की विशेषता:

बॉलीवुड फ़िल्में एक संगीत शैली का अनुसरण करती हैं। उनके संवाद स्वाभाविक होते हैं। नृत्यों में एक क्रम और लयबद्धता होती है। इसका संगीत और नृत्य ही फ़िल्म को भारत और विदेशों में लोकप्रिय बनाते हैं। फ़िल्मों की कहानियाँ समकालीन जीवन के बारे में हो सकती हैं। दृश्य घरेलू हो सकते हैं। कुछ रचनाएँ पौराणिक कहानियों पर भी आधारित हैं। कभी-कभी फ़िल्में भारत की ऐतिहासिक घटनाओं को भी प्रस्तुत करती हैं। 1970 के दशक के मध्य में यह सिनेमा हिंसा और हत्या पर आधारित था, जिसमें हथियार और अराजकता भी शामिल थी। यहाँ प्रेम के विषय पर बहुत सी फ़िल्में बनती हैं। पश्चिमी शैली की नाटकीय फ़िल्मों का निर्माण होता है। सिनेमा उच्च मध्यवर्गीय भारतीय शहरी जीवन से जुड़ा हुआ है। जहाँ नाइट क्लबों, खेल, मोटर-कार, मादक पेय

जैसी शैलियों वाली फ़िल्मों का निर्माण होता है। पुरुषों के पहनावे में पश्चिमी शैली के कपड़े और महिलाओं के लिए पारंपरिक भारतीय कपड़े दिखाए जाते हैं। बॉलीवुड फ़िल्मों का एक आकर्षण यह है कि इसमें कुछ अतिरंजना होती है।

बॉलीवुड के प्लॉट:

फ़िल्म की कहानियाँ अक्सर रोमांटिक संघर्षों और पारिवारिक दायित्वों व वफादारी से जुड़ी होती हैं। फ़िल्मों में एक सेंसरशिप नियम है कि चुंबन के दृश्यों पर रोक का पालन किया जाता है। फ़िल्म निर्माताओं ने सेंसरशिप के प्रतिबंधों को तोड़ दिया है और यहाँ जबरदस्त नृत्य दृश्यों और 'गीली साड़ी' के प्रचलित दृश्य मिलते हैं। पहले फ़िल्मों के अंत आमतौर पर सुखांत होते थे। वर्तमान बॉलीवुड फ़िल्में, यदि समकालीन शैली में हों तो सभी प्रकार के उत्पादों और खपत को दर्शाने वाले समृद्ध उच्च मध्यम वर्ग के साथ एक काल्पनिक दुनिया का निर्माण करती हैं। यह ऐसा समय है जब सिनेमा सामाजिक स्थिति को कम दर्शाता है।

फ़िल्मों को बढ़ावा देने के लिए पुरस्कार:

भारत में कई प्रकार के पुरस्कार हैं, जिनमें से कुछ फ़िल्मों को बढ़ावा देने के लिए स्थानीय सरकारों द्वारा प्रायोजित हैं।

फ़िल्मफेयर अवार्ड्स बॉलीवुड का सबसे बड़ा अवार्ड है। फ़िल्मों पर वोटिंग जनता के लिए खुली होती है।

बॉलीवुड मूवी अवार्ड्स संयुक्त राज्य अमेरिका के लॉन्ग आइलैंड पर आयोजित किया जाता है।

ग्लोबल इंडियन फ़िल्म अवार्ड्स:

अंतर्राष्ट्रीय भारतीय फ़िल्म अकादमी पुरस्कार प्रत्येक वर्ष विभिन्न शहरों में आयोजित किए जाते हैं।

कुछ देखने लायक़ फ़िल्में:

यहाँ फ़िल्म के सुझावों की एक श्रृंखला दी गई है, जो भारत और भारतीय लोगों के इतिहास के बारे में बहुत कुछ बताती हैं।

मोहनजोदाड़ो- एक दिलचस्प फ़िल्म है। सिन्धु नदी घाटी में एक प्राचीन शहर और सभ्यता के बारे में बताती है।

पैसा बोलता है (नेटफ्लिक्स)- एक ऐसी फ़िल्म है जो रसोई के पाइप में आने वाले पैसे के बारे में बताती है।

जोधा अकबर- फ़िल्म हिंदुस्तान के मुगल सम्राट की कहानी कहती है। वह उसके एक भारतीय महिला के साथ रोमांस में होता है जो कि एक हिंदू थी। दूसरे धर्मों के साथ सहिष्णुता के कारण उसे महान सम्राट माना जाता है।

जब हैरी मेट सेजल (नेटफ्लिक्स)- फ़िल्म एक महिला की कहानी है जो सगाई कर रही है और अपनी सगाई की अँगूठी खो देती है। मदद के लिए वह टूर गाइड से पूछती है।

इसका फ़िल्मांकन यूरोप के विभिन्न देशों में हुआ है। गाइड और दुल्हन पुर्तगाल की राजधानी लिस्बन क्षेत्र के सबसे प्रसिद्ध और ऐतिहासिक हिस्सों में भी जाते हैं।

निष्कर्ष:

इस फ़िल्म उद्योग की शुरुआत बॉम्बे (अब मुंबई)) में हुई। हॉलीवुड और बॉम्बे दोनों शब्दों के मिलने से बॉलीवुड का नामकरण हुआ। 1913 में, पहली फ़िल्म का निर्माण किया गया, यह एक मूक फ़िल्म थी। इसे राजा हरिश्चंद्र कहा जाता है। 1931 में पहली बोलती हुई फ़िल्म का निर्माण किया गया था। यह फ़िल्म आलम आरा है। उसके बाद, कई अन्य फ़िल्में बनाई गईं। अध्ययन बताते हैं कि 2002 में भारतीय उद्योग की फ़िल्में दुनिया में सबसे ज़्यादा कमाऊ फ़िल्में थीं। वर्तमान में हर साल लगभग 4 बिलियन लोग सिनेमा देखने जाते हैं। बॉलीवुड की फ़िल्में बहुत ही रोचक होती हैं। वे वेषभूषा के लिहाज़ से भी बेहतरीन होती हैं। स्थानों, वर्तमान स्थानों के परिदृश्य जो हम नहीं जानते उनकी जानकारी देती हैं। इन फ़िल्मों में भारत में रहने वाले लोगों को दिखाया गया है। जब एक नाटकीय या ऐतिहासिक कथानक की बात आती है, तो परिदृश्य अलग होता है।

कई फ़िल्मों ने भारत और इसकी संस्कृति को एक अलग रूप देने की कोशिश की है। वर्तमान में, कुछ फ़िल्में हैं जो सामाजिक स्थितियों को प्रस्तुत करती हैं। ऐसी फ़िल्में भारत में कई लोगों द्वारा अक्सर अनदेखी की जाती है। पश्चिमी दुनिया में बॉलीवुड फ़िल्मों के बारे में बहुत कम पता होता है। ऐसे लोग हैं जो इन फ़िल्मों के अस्तित्व के बारे

में भी नहीं जानते हैं। कई स्रोतों पर शोध किए जाने की आवश्यकता है। नई तकनीकों से इन फ़िल्मों तक पहुँच आसान हो गई है। यहाँ की ज़्यादातर फ़िल्में हिंदी में हैं। लेकिन कई फ़िल्में पहले से ही अंग्रेजी उपशीर्षक के साथ आती हैं। सौभाग्य से, कई लोग मेरी तरह भारतीय फ़िल्मों में रुचि रखते हैं। वे वेबसाइटों के माध्यम से और पुर्तगाली उपशीर्षक के साथ इन फ़िल्मों तक मुफ़्त पहुँच सकते हैं।

लैला और मजनूँ : सिर्फ़ एक प्रेम कहानी?

मंजीत सिंह

ज़्यूरिख विश्वविद्यालय, स्विट्ज़रलैंड

लैला और मजनूँ की प्रेम कहानी एक ऐसी कहानी है, जिसमें प्रेम करनेवालों का मिलन मृत्यु के बाद स्वर्ग में ही हो पाता है। कहते हैं सातवीं सदी से यह कहानी सुनाई जाती रही है और आज भी कविताओं, चित्रों, गानों, नाटकों और फ़िल्मों में दिखाई जाती है। मैंने लैला और मजनूँ की यह कहानी माधुरी दीक्षित की 2007 में रिलीज हुई फ़िल्म आजा नचले के माध्यम से देखी थी। गाने और कविता की वह भाषा मुझे बहुत अच्छी लगी। मुझे अपने शोध में पता चला कि लैला, मजनूँ की कहानी भारत से नहीं है। लैला, मजनूँ की कहानी लगभग सातवीं सदी में अरब देशों रची गयी। यह कहानी एक प्रसिद्ध कहानीकार निज़ामी की है जिसने यह कहानी चार हज़ार छह सौ छंदों में लिखी है।

उसने कहानी को थोड़ा बदल दिया और वह बदली हुई कहानी कुछ इस तरह से है : क़ैस और लैला एक साथ स्कूल जाते हैं और एक दूसरे को प्यार करने लगते हैं। जब यह बात लैला के पिता जी को पता चलती है तो वह उन दोनों को एक दूसरे से मिलने-जुलने से मना कर देता है। लैला से अलग होकर क़ैस पागल हो जाता है और उस पागलपन में लैला की लिए गाने गाता फिरता है। उस पागलपन की वजह से उसको मजनूँ नाम से लोग बुलाने लगते हैं। लैला से न मिलने के दुख में वह दुनिया से दूर हो जाता है। वह रेगिस्तान में चला जाता है और उसके ही गाने गाता रहता है। लैला की इच्छा के विरूद्ध उसकी शादी हो जाती है। एक नेक इंसान की मदद से वे फिर भी एक दूसरे से

रेगिस्तान में मिल पाते हैं और वे एक-दूसरे को प्रेम कविताएँ सुनाते हैं। लेकिन लैला, मजनूँ कभी भी समाज के सामने साथ नहीं रह पाए। लैला के शौहर के गुज़रने के बाद वह इसलिए उदास नहीं थी कि उसके शौहर की मौत हो गई थी बल्कि इसलिए कि वह कभी मजनूँ के साथ ज़िंदगी नहीं गुज़ार सकेगी। इसी ग़म में उसकी मौत हो गई। उसकी मौत की ख़बर सुनकर मजनूँ उसकी मज़ार पर आया और वह भी वहीं मर गया। दोनों की मज़ार एक-दूसरे के साथ बना दी गई। कहानी के अंत में किसी को सपना आता है कि वे दोनों स्वर्ग में एक दूसरे के साथ खुश हैं।

निज़ामी की कहानी के आधार पर कई लेखकों ने अपने तरीक़े से लैला, मजनूँ की कहानियाँ लिखी हैं। ऐसे उनकी बहुत सारी कहनियाँ अरबी और फ़ारसी कविताओं में लिखी गई हैं। बाद में राजस्थानी और मुग़ल चित्रकला में उनकी तस्वीरें दीवारों पर बनाई गई। उज़ेयीर हबजीबेयलीयूस (Uzeyir Habjibeyliaus) ने अज़रबैजान में पहली बार मध्य-पूर्व के ओपेरा की रचना की। इसमें लैला, मजनूँ की कहानी नाच-गाने के साथ दिखाई जाती है। 1937 से उनकी कहानी ईरान, पाकिस्तान, भारत, तुर्की और इंडोनेशिया की फ़िल्मों में दिखाई जाती रही है। साल 1970 में इंग्लैण्ड के संगीतकार एरिक क्लैप्टन ने लैला के नाम एक गाना लिखा जिसमें वह लैला और अपनी प्यार की कहानी बयान करता है। राजस्थान के बिंजौर गाँव में लैला, मजनूँ की मज़ार पर हज़ारों प्यार करने वाले जोड़े आशीर्वाद लेने के लिए आते हैं।

यह सब पढ़ने के बाद मुझे लगा कि इस कहानी के पीछे और भी कुछ छिपा हुआ है। कुछ ऐसा जिसकी कहानी में व्याख्या की जा सकती है और ऐसा है भी। मुझे यह पता

चला कि नौवीं से ग्यारहवीं सदी तक बहुत सारे लोगों ने इस कहानी और सूफ़ीवाद के बीच में कोई संबंध देखा है। यह संबंध शुरू से था पर यह हमें ठीक से मालूम नहीं। लेकिन ऐसा कहा जाता है कि मजनूँ का प्यार लैला के लिए कुछ ऐसा है जैसे एक सूफ़ी अल्लाह से प्यार करता है। अल्लाह और सूफ़ियों का रिश्ता शुद्ध प्यार के आधार पर होता है। ऐसा कहा जा सकता है कि क़ैस यानी कि मजनूँ वह है, जो ज़िंदगी भर भगवान के प्यार के लिए प्रयास करता है। रेगिस्तान में जीने कि तुलना तप से की जा सकती है। जैसे सूफ़ी के लिए मृत्यु से ही अल्लाह को पाया जा सकता है वैसे ही लैला, मजनूँ का मिलना भी सिर्फ़ मृत्यु के बाद स्वर्ग में ही संभव है।

जैसा हमने देखा, लैला, मजनूँ की कहानी शेक्सपियर की रोमियो और जुलिएट की कहानी से भी अधिक पुरानी है और उसे कई अलग-अलग दृष्टिकोणों से देखा जा सकता है। जैसे पुराने समय में अरब देशों में या माधुरी दीक्षित की फ़िल्म में उनकी कहानी सुनाई जाती है, वैसे ज़रूर आनेवाले समय में लोगों को यह कहानी शायद फ़ोर डी में दिखाई जाएगी।

वाद्य यंत्र और व्यंजन

पनीर भुर्जी या खाना बनाने में क्या-क्या सीख सकते हैं ?

बर्नाडेट स्ताउडर

लाइप्त्सिग विश्वविद्यालय, जर्मनी

भारत छोड़ने के बाद कई दुखी करने वाली बातों में से एक बात यह भी है कि आप उसी समय भारत का खाना भी छोड़ देते हैं। ऐसा नहीं है कि मैं भारत से वापस आते वक्त वहाँ के खाने की कई चीजें अपने साथ जर्मनी नहीं ले आई या कोशिश नहीं की। मुझे पता नहीं कि मुझे कितने किलोग्राम जर्मन सामान भारत में छोड़ देना पड़ा क्योंकि मेरा सूटकेस हिंदुस्तानी खाने की चीज़ें से भर गया था – (हालाँकि मैं अपनी सहेली जैसी पागल नहीं हूँ जो एक बार 12 किलो खाना भारत से ले आई…)

जर्मनी वापस आकर मुझे अक्सर इसका अनुभव करना पड़ा कि किसी न किसी तरह 'मेरा' हिन्दुस्तानी खाना 'हिंदुस्तानी खाने' जैसा नहीं होगा। (यह तो नई बात नहीं है- बहुत अक्सर सुना गया।) फिर भी, जब एक बार खुद के बनाए खाने का स्वाद हिन्दुस्तान में मिलने वाले खाने के स्वाद जैसा बनता है तो दिल बहुत खुश हो जाता है।

ऊपर से, जब कोई पहली बार भारतीय खाना बनाने की कोशिश करता है तो उसके मन में बहुत सारे सवाल उठते हैं, जैसे कि मेरे लड्डू क्यों चूर-चूर हो जाते हैं? चटनी के लिए ताज़ा नारियल कहाँ से लाना है? क्या असली रोटी बनाने के लिए पोर्टेबल गैस-चूल्हा ख़रीदना अच्छा प्लान होगा? और कुछ ऐसे लोग क्यों हैं जिनको भिंडी पसंद नहीं है?

ये बहुत महत्त्वपूर्ण सवाल हैं। लेकिन हिंदुस्तानी खाना बनाने से न सिर्फ़ सवाल उठते हैं, बल्कि बहुत से जवाब भी मिलते हैं।

वास्तव में आप हिंदुस्तानी कुकिंग से इतना कुछ सीख सकते हैं। उदाहरण के लिए :

- ज़िन्दगी में कुछ बातों को समय देने की ज़रूरत होती है। धीरज रखने से आखिरकार इनाम मिलता है।
- आपको हमेशा दूसरा मौका मिलता है। (आपको शायद दूसरा पतीला भी चाहिए - अगर पहला पतीला बिरयानी बनाने के दौरान फिर से नीचे के तले में जल गया…)
- अनुभवी लोगों की सलाह मानना चाहिए- इससे आपको मदद मिलती है।
- वसा और चीनी आपके दुश्मन नहीं हैं।
- ऐसे पदार्थ भी होते हैं जिनके स्वाद की तुलना भारत में बनाए गए पदार्थों से कभी नहीं की जा सकती। लेकिन यह वास्तव में ख़ुशी की बात है।

नीचे लिखी गई रेसिपी कुकिंग की शुरूआत करनेवाले लोगों के लिए जरूरी है। मेरे ख़याल से यह सबसे आसान हिंदुस्तानी पाक विधियों में से एक है। (मैग्गी के अलावा - लेकिन मैं इसके बारे में अभी तो नहीं लिखना चाहती हूँ…)। इसको बनाने में सिर्फ़ आधा घंटा लगेगा। और सबसे अच्छी बात यह है – आप इसको सुबह, दोपहर और शाम को खा सकते हैं।

सामग्री (दो-तीन लोगों के लिए)

- 270 ग्राम पनीर

- 1 प्याज़ (बारीक कटा हुआ)
- 1 बड़ा टमाटर (कटा हुआ)
- 1 छोटा चम्मच अदरक (बारीक कटा हुआ)
- 1 छोटा चम्मच लहसुन (बारीक कटा हुआ)
- 1 छोटा चम्मच जीरा
- तेल (सूरजमुखी या रेपसीड) के दो बड़े चम्मच
- 1 कप कटा हुआ हरा धनिया
- 1 कप मटर (ऐच्छिक)
- 1 बड़ा चम्मच मक्खन (ऐच्छिक)
- मसाले
- 1/3 छोटा चम्मच नमक (या स्वादानुसार)
- 1-2 चुटकी भर लाल मिर्च पाउडर
- 1/2 छोटा चम्मच हल्दी पाउडर
- 1/2 छोटा चम्मच धनिया पाउडर
- 1/2 छोटा चम्मच जीरा पाउडर
- 1 छोटा चम्मच गरम मसाला
- और पनीर भुर्जी खाने के साथ : रोटी / टोस्ट और निम्बू का रस (स्वादानुसार)

बनाने का तरीक़ा

1. पनीर हाथ से टुकड़े-टुकड़े कीजिए।
2. कढ़ाई में तेल गरम कर लें। इसमें जीरा डालिए और चिटकने तक फ़्राई कीजिए।
3. प्याज़ इसमें डाल दीजिए। मद्धिम आँच पर २ मिनट भूनें।
4. जब प्याज़ सुनहला पारभासी हो जाए तब लहसुन और अदरक डालिए। इनको मिश्रित करके 30 सेकण्ड और फ़्राई कीजिए।
5. टमाटर और सारे मसाले इसमें डालकर 3-5 मिनट भूनिए।
6. पनीर और मटर डालिए। सब कुछ मिश्रित कर चलाते रहिए।
7. जब पनीर अच्छी तरह से फ़्राई और मसाले में मिक्स हो जाएगी तो आँच को बंद कर दीजिए। ऐसा होने में सिर्फ 3-6 मिनट लगेंगे – इस बात का ध्यान रखिए कि पनीर बहुत ज़्यादा न भुने ताकि यह कड़ा और रबड़ जैसा न हो जाए।
8. ताज़ा धनिया (और स्वादानुसार एक चम्मच मक्खन) डालकर सब कुछ एक बार फिर से मिश्रित कर लीजिए।
9. आपकी पनीर भुर्जी तैयार हो गई है। इसके ऊपर थोड़ा नीबू का रस छिड़क करके, पनीर भुर्जी रोटी या टोस्ट के साथ खाईए और खिलाइए।

भारतीय संगीत वाद्य – क्या आपको मालूम है कि मैं कौन हूँ?

वेरोनिका निकलास

लाइप्त्सिग विश्वविद्यालय, जर्मनी

1

कुछ लोग कहते हैं कि भारतीय शास्त्रीय संगीत का सबसे प्रसिद्ध वाद्य मेरा जुड़वाँ है। मेरा एक लकड़ी का एक बड़ा पेट है जिसका ऊपरी हिस्सा एक लम्बा और मोटे डंडे सा है। वादक मेरे चार या पाँच तारों को उँगलियों से बजा सकते हैं। लेकिन मेरे ऊपरी पतले भाग के कुछ जिन छोटे डंडों के ऊपर तार चलते हैं फ्रेट्स न होने के करण लोग मेरा इस्तेमाल किसी और वाद्य की संगत के लिए करते हैं। कभी-कभी बहुत प्रतिभाशाली छात्र मुझको बजाकर उस्ताद की संगत करते हैं। जब मैं बजाया जाता हूँ, तब मुझे सीधे खड़ा होना ही पसंद है।

2

मुझे अपना नाम लकड़ी से मिला, जिससे मैं बनाया गया हूँ। मैं अलग-अलग रूपों में उपलब्ध हूँ। सबसे पहले मिथक के देवता कृष्ण ने मुझे बजाया। उसने मेरी मदद से लोगों को अपने मायाजाल में फँसा लिया। जब मैं कृष्ण के वाद्य के रूप में हूँ, तब लोग मुझे ‘मुरली’ कहते हैं। मुझे भारतीय शास्त्रीय संगीत में ऊँचा स्थान दिया जाता हूँ क्योंकि मेरा बहुत सुन्दर नाद मानवीय आवाज़ की तरह है। हवा ही मुझमें प्राण डालती है।

3

वास्तव में मैं एक नहीं, बल्कि दो वाद्य हूँ। जो हिस्सा अक्सर भूल जाता है उसका नाम 'बयाँ' है। शायद यह बात भी आपको इसका इशारा देती है कि किस ओर के हाथ से मैं बजाया जाता हूँ। हर स्वर जो मुझसे निकलता है वह एक विशिष्ट शब्दांश को प्रकट करता है। मेरे केंद्र में एक काला गोला है। यह काला पेस्ट किन उपादानों से बनता है इसका भेद रखा जाता है। इतना मालूम है कि पेस्ट में लोहे का चूर्ण और थोड़ा आटा होता है। यह बकरी के चमड़े पर लेपा जाता है। कभी-कभी लोग मुझको सितार के साथ बजाते हैं, मगर मैं अकेला भी बजाया जा सकता हूँ। मेरी मदद से दूसरे वाद्यों को संगीत में दिग्विन्यास मिलता है।

4

उत्तर और दक्षिण भारत में दो अलग देवताओं ने मुझको मेरा नाम दिया है। दक्षिण में मुझको सरस्वती की मूर्ति के साथ पाते है। मेरा एक बहुत पुराना नाम है, जिसको आप वेदों में भी पाते हैं। वहाँ मेरा नाम सब तंतु-वाद्यों का नाम बन गया। मेरी रचना के लिए उत्तर-भारत में दो और दक्षिण में सिर्फ एक कद्दू की ज़रूरत है। गोल कद्दू का रूप संगीत को ध्वनित कर देता है। आमतौर पर कद्दू के ऊपर एक बहुत मोटा बाँस का डंडा लगा होता है। उत्तर भारत में मेरा आकार सममित होता है पर दक्षिण भारत में नहीं। बहुत लोगों का ख़्याल है कि मुझे सीखना बहुत मुश्किल है।

5

आप मेरा ऊँचा नाद दूर से सुन सकते हैं। इस कारण से मैं अक्सर बाहर बजाया जाता हूँ। जब आप मुझको सुनते हैं, तब आपको मालूम हो जाता है कि शायद अभी किसी जगह पर एक समारोह हो रहा है। उदाहरण के लिए लोग धार्मिक उत्सवों पर मुझको बजाते हैं। मुझ में सात छेद हैं। मेरा एक बड़ा भोंपू है। मैं उत्तर भारत में बजाया जाता हूँ। मेरा पहला नाम फ़ारसी राजा का नाम है और दूसरा कच्चे माल का नाम है जिससे मैं बनाया जाता हूँ।

उत्तर: 1. तानपूरा 2. बांसुरी 3. तबला 4. वीणा 5. शहनाई

हास्य व्यंग्य

जर्मन व्यापार संस्कृति

आर्नो दोहमन

बॉन विश्वविद्यालय, जर्मनी

'अन्पासर' एक असाधारण पारिवारिक नाम है जिसमें जर्मन क्रिया 'anpassen' शामिल है। इस क्रिया को हिंदी में 'अनुकूल ढालना' के रूप में अनूदित किया गया है।

जब बॉस ने मिस्टर अन्पासर को भारत में अपने आगामी कार्य के बारे में सूचित किया, तो मिस्टर अन्पासर ने शुरू में बहुत कम उत्साह दिखाया और चिंता व्यक्त की। हालाँकि, बॉस को विश्वास था कि मिस्टर अन्पासर भारत में आदेश को पूरा करने के लिए आदर्श कर्मचारी होंगे।

सौभाग्य से मिस्टर अन्पासर के डर और चिंताओं की पुष्टि नहीं हुई । इसके विपरीत, मिस्टर अन्पासर ने आने के साथ ही भारत में घर जैसा महसूस किया। यहाँ की जलवायु और मैत्रीपूर्ण लोगों ने मिस्टर अन्पासर का साथ दिया। उसने जल्द ही पड़ोस में दोस्त बना लिए और शुरू से ही उसको स्थानीय भोजन पसंद आ गया। मिस्टर अन्पासर स्थानीय कपड़ों में सहज महसूस करते थे और थोड़े समय के बाद स्थानीय भाषा में भी संवाद कर रहे थे। सप्ताहांत में मिस्टर अन्पासर को सिनेमा जाना पसंद था। वे कॉन्सर्ट हॉल और बाजारों से भी आकर्षित थे। मिस्टर अन्पासर को भारत की संस्कृति और समाज भी बहुत पसंद था। मिस्टर अन्पासर सुबह और शाम को योग का अभ्यास भी

करते थे और वह अपने सहयोगियों की तरह अक्सर खुशी से और लंबे समय के लिए पैर मोड़ कर बैठते थे। इस बैठने की मुद्रा में मिस्टर अन्पासर शान्त और हंसमुख होते थे।

भारत में रहना मिस्टर अन्पासर की सभी अपेक्षाओं को पार कर गया था। मिस्टर अन्पासर भारत में और रहना चाहते थे लेकिन बॉस ने इसकी और अनुमति नहीं दी। जर्मनी में मिस्टर अन्पासर की ज़रूरत थी। इसलिए मिस्टर अन्पासर को जर्मनी वापस जाना पड़ा।

जर्मनी में पहुँचकर पहले तो सब कुछ मिस्टर अन्पासर को पहले जैसा ही लग रहा था। बॉस मिस्टर अन्पासर से बात करना चाहता था और उसने उसे बुलाया। आमतौर पर सोमवार को ऐसा करने का कोई कारण नहीं था। ज़्यादातर सोमवार को बॉस घर रहता था या किसी बिजनेस ट्रिप पर रहता था।

इस तरह मिस्टर अन्पासर अपनी सामान्य गतिविधियों में थे। लेकिन इस सोमवार को सब कुछ अलग था, क्योंकि अचानक और अप्रत्याशित रूप से बॉस मिस्टर अन्पासर के बगल में खड़े थे। आमतौर पर यह एक समस्या नहीं थी, लेकिन इस सोमवार को मिस्टर अन्पासर अपने कार्यालय में फर्श पर पैर मोड़कर पालथी मार के बैठे थे। मिस्टर अन्पासर को आश्चर्य तब हुआ जब बॉस ने अपनी चुप्पी को तोड़ते हुए कहा। 'मेरे प्रिय, मिस्टर अन्पासर! कृपया अब ठीक से बैठो! आपको धीरे-धीरे यह बात साफ़ होनी चाहिए कि आप जर्मनी वापस आ गए हैं!'

समाज, संस्कृति और इतिहास

सिन्तियों का इतिहास

फ्रांत्स- एलियास श्नेक

त्युबिंगन विश्वविद्यालय, जर्मनी

नमस्ते मेरा नाम फ्रांत्स है और में एक सिंती हूँ। ज़्यादातर लोग नहीं जानते कि सिंती कौन हैं? लेकिन शायद उन्होंने रोमा लोगों के बारे में सुना हो। सिंती और रोमा लोग मूल रूप से भारत से आते हैं।

सिंती और रोमा को अंग्रेज़ी में जिप्सी कहते हैं। क्योंकि अंग्रेज़ सोचते थे कि हम जादुई मिश्र से है।

सबसे पहले यह जानना अहम है कि सिंती, रोमा नहीं हैं।

दुनिया भर में लगभग ग्यारह करोड़ रोमा और अस्सी हज़ार सिंती हैं।

सिंती मूल रूप से उत्तर-पश्चिम भारत से और आज के पाकिस्तान से आते हैं।

पाकिस्तान की सबसे बड़ी नदी प्राचीनकाल में सिंध के नाम से जानी जाती थी, जिसे आजकल अंग्रेजी और जर्मन में क्रमशः इंडस या इंडुस कहा जाता है।

नदी पर रहने वाले मनुष्य खुद को सिंधी कहते थे।

आज सिंध प्रांत में तीस करोड़ सिंधी हैं।

कोई यह सौ प्रतिशत नहीं बता सकता कि सिंती ने अपना देश क्यों छोड़ा?

किंतु माना जाता है कि मुहम्मद बिन क़ासिम अल थाकाफ़ी द्वारा उत्तर-पश्चिम भारत में विजय के कारण सिन्तियों ने आठवीं शताब्दी में भारत छोड़ दिया होगा।

उन्हीं की उपस्थिति के कारण सिंधी भाषा का जन्म हुआ।

सिंधी में संस्कृत और अरबी भाषा का मिश्रण है।

पर यूरोप में सिंती में हमारी भाषा में कोई अरबी शब्द नहीं हैं।

हमारी भाषा में साठ प्रतिशत से अधिक शब्द संस्कृत के हैं।

सिंती में फ़ारसी, अर्मेनियाई और यूनानी शब्द हैं और आजकल जर्मन के बहुत-से शब्द हैं।

जानना ज़रूरी है कि सिंती यूरोप में आने से पहले ही एक हिंदू परंपरा वाले ईसाई बन गए थे।

सिंतीयों को ओटोमन इलाके में जाँनिसारी ईसाई - दास - सेना बनाया गया था।

हम सिन्तियों में एक जाति व्यवस्था है शुद्ध और अशुद्ध मनुष्यों की।

हमारे कानून मौखिक रूप से एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक चलते हैं।

शिव का त्रिशूल हमारे लिए हमारे ईशा मसीह का सलीब बन गया।

हमारी रक्षक देवी का नाम गली सारा है।

हमारे यहाँ गली सारा दोस्त यीशु की माँ हैं जो हिन्दुओं के लिए शिव की सहचरी हैं।

सिंती जर्मनी में छह सौ साल से हैं और केवल उनमें केवल अस्सी साल की शांति थी।

मध्यकाल और द्वितीय विश्वयुद्ध तक का काल हिंसा से भरा है थे।

हमारी त्वचा जर्मनों की तुलना में अधिक गहरे रंग की थी।

हम हस्तरेखा पढ़ सकते थे।

हमारे पास प्राकृतिक चिकित्सा थी।

हम इतने रूपवान थे कि उन्हें लगा कि हम जादूगर हैं।

इसलिए मेरे पूर्वजों को आग में जिंदा जला दिया गया था।

सिन्तियों को क़ानून की सुरक्षा नहीं मिली थी। अर्थात उनकी हत्या को अपराध नहीं माना जाता था।

शिकार के लिए बनाई गई पुरानी सूचियों से पता चलता है कि सूचियों पर हिरण, चिड़ियों, सिंती पुरुषों, महिलाओं और बच्चों के शिकार की अनुमति थी।

पाँच लाख से डेढ़ करोड़ सिंती, रोमा और येनिचे की हत्या कर दी गयी।

यह सामूहिक हत्या गैस चैंबर, भूख और यातना आदि के जरिए हुई थी।

तीस हज़ार जर्मन सिंतीयों में से पाँच हज़ार से कम बचे। बड़ी संख्या में उनकी नसबंदी कर दी गयी थी।

वे चेक गणराज में पाँच सौ से भी कम बच पाए थे।

होलोकॉस्ट के बाद से हमारी संस्कृति, पहचान और भाषा विलुप्त होने के कगार पर है।

हम पर होलोकॉस्ट को तीस साल बाद मान्यता मिली। हमसे पहले यहूदियों पर होलोकॉस्ट को मान्यता मिली।

सिंती संस्कृति, कला और ज्ञान ने यूरोप को काला बारूद, फ्लामेंको, सामुद्रिक विद्या और प्राकृतिक चिकत्सा दी।

सिंतीयों ने अपनी ओर से कभी कोई युद्ध नहीं किया।

फिर भी सिंतीयों के साथ आज भी भेदभाव किया जाता है।

इंदिरा गांधी को धन्यवाद कि रोमा आजकल एक मान्यता प्राप्त भारतीय अल्पसंख्यक हैं पर सिंतीयों को वह दर्जा हासिल नहीं है। विश्व सिंधी कांग्रेस से भी हमको मान्यता नहीं मिली है।

यह कहा जाता है कि सिंती, रोमा के एक उपसमूह है।

लेकिन यह पूरी तरह ग़लत है।

सिंती, रोमा के साथ एक भाषा में संवाद नहीं सकता।

हमारे पास अलग कानून और रीति-रिवाज़ भी अलग-अलग हैं।

हम विभिन्न भारतीय राज्यों से आते हैं।

इतिहास और हमारे नाम से पता चलता है कि सिंती, सिंधी के प्रवासी हैं।

सिंती आज अमेरिका, पश्चिमी यूरोप और बाल्कन व कज़ाकिस्तान में रहते हैं।

आपने इसे पढ़ा इसके लिए आपका शुक्रिया।

भारत-जापान संबंध पर विशेष सामग्री

राजनीति के बारे में

तोमोहारु ओगुरा

ओसाका विश्वविद्यालय, जापान

मैंने जापान और भारत के बीच राजनीतिक संबंधों पर ध्यान केंद्रित किया। यद्यपि प्राचीन काल से भारत-जापान का राजनीतिक संबंध है पर इस बार हम भारत-जापान के आधुनिक राजनीतिक संबंध के बारे में बात करेंगे। जापान और भारत के बीच राजनीतिक संबंध बौद्ध युग में शुरू हुआ और आज भी जारी है। सबसे हाल ही में, 2018 में प्रधानमंत्री मोदी को आबे के घर/विला में आमंत्रित किया गया था। यह डिनर 1 घंटे 10 मिनट तक चला। भारत के प्रधानमंत्री को जापान के प्रधानमंत्री के घर/विला आमंत्रित करने का यह पहला अवसर था। एक बार प्रधानमंत्री आबे को राष्ट्रपति ट्रम्प के विला में आमंत्रित किया गया था। जापान में इसका बहुत महत्त्व था। इस कारण से, भारत के प्रधानमंत्री द्वारा विला का दौरा करने का बहुत महत्त्व है। यह समझौते की पृष्ठभूमि है। इस समझौते का लक्ष्य चीन है। चीन विदेशों में विस्तार करने की कोशिश कर रहा है। अगर चीन अपनी शक्ति बढ़ाता है, तो जापान का आर्थिक क्षेत्र गायब हो जाएगा। ऐसी मंशा है। और चीन की शक्ति का विस्तार अमेरिका के लिए सुविधाजनक नहीं है, जिसका जापान के साथ घनिष्ठ संबंध है। इसलिए चीन से भिड़ने के लिए जापान, भारत और अमेरिका मिलकर काम कर रहे हैं। जापान भारत के साथ सहयोग करके सुरक्षा प्रदान करता है। यह मुक्त व्यापार को बढ़ावा देकर भारत में आर्थिक विकास को बढ़ावा देना चाहता है। सरकार का मानना है कि अगर भारत जापान के सहयोग से अपनी अर्थव्यवस्था बढ़ाएगा

तो जापान की शक्ति बढ़ जाएगी। इसका अध्ययन करने के बाद, मैंने महसूस किया कि अंतर्राष्ट्रीय संबंध मित्रता से भिन्न होते हैं। मुझे लगता है कि हितों के टकराव हमेशा शामिल होते हैं और हितों के टकराव देशों के बीच टकराव होते हैं। मैं इस संभावना को देखते हुए डर गया था कि मैं कल तक अच्छी शर्तों पर था लेकिन मैं अगले दिन खराब शर्तों पर हो सकता हूं।

भारत-जापान आर्थिक सम्बन्ध

हयाता तानिकावा

ओसाका विश्वविद्यालय, जापान

मैं भारत-जापान आर्थिक सम्बन्ध के बारे में कुछ बताऊँगा। भारत और जापान के बीच बहुत अच्छे और महत्त्वपूर्ण सम्बन्ध हैं। जापान भारत की अर्थव्यवस्था पर बहुत निवेश कर रहा है। इसलिए, भारत में सुज़ुकी (Suzuki) या होंदा (Honda) जैसी बहुत बड़ी जापानी कंपनियाँ और फैक्ट्रियां हैं और भारत की कंपनियों के साथ व्यापार करती हैं। आजकल, मशीनों या ऑटो कंपनियों के अलावा खाना या कपड़े की कंपनियाँ भी भारत में व्यापार शुरू कर रही हैं। न केवल जापानी लोग या कंपनियाँ भारत आ रही हैं बल्कि बहुत-से भारतीय भी व्यापार के लिए जापान आ रहे हैं। ख़ास तौर पर आईटी इंजीनियर के काम करने के लिए बहुत भारतीय लोग आते हैं। टोक्यो के निशिकासाइ में बहुत भारतीय लोग रहते हैं इसलिए उसे लिटिल इंडिया कहा जाता है।

व्यापार के बारे में

भारत जापान से मशीनों का आयात और जापान को समुद्री भोजन का निर्यात करता है। जापानी सुपरमार्केट में बहुत भारतीय झींगे बेचे जाते हैं। भारतीय और जापानी सरकार भारत में एक हाई-स्पीड रेल रोड नेटवर्क बनाने की योजना बना रहे हैं। इस योजना में जापानी शिनकानसेन हाई-स्पीड ट्रेन की टेक्नोलॉजी इस्तेमाल कर रहे हैं। दोनों देशों के बीच हवाई मार्ग है। और पहले से भारतीय या जापानी लोगों का दोनों देशों में आना-

जाना आसान हो गया है। भारत में देखने के लिए बहुत चीज़ें हैं। लेकिन फिर भी कम जापानी लोग भारत जाते हैं। इसलिए भारत जाना कुछ ख़ास अनुभव है। दोनों देश एक दूसरे पर बहुत भरोसा करते हैं। भारत और जापान अब एक-दूसरे के बहुत महत्त्वपूर्ण साथी समझे जाते हैं।

जापानी और भारतीय खाने के बारे में

युज़ुरु इशी

ओसाका विश्वविद्यालय, जापान

जापान में भारतीय खाना

जापान में बहुत सारे भारतीय रेस्टोरेंट हैं। जापानी लोग सोचते हैं कि भारतीय खाना तो हमेशा तरकारी के साथ बहुत बड़ी नान और तन्दूरी चिकन खाते हैं। उत्तर भारत का खाना जापान में बहुत मशहूर है। जापान में खाया जाने वाला भारतीय खाना लगभग 30 या 40 साल पहले लंदन से आया। 1970-1990 में जैसे मोती, सम्राट या महाराजा भारतीय रेस्टोरेंट टोक्यो में बहुत चल रहे थे। आजकल बहुत सारे नेपाली लोग जापान आते हैं और वे भारतीय खाना बनाते हैं। 1970-1980 में भारतीय लोग, जो जापान में भोजन बनाते थे, वे नेपाली लोगों को सहायता करने के लिए नियुक्त करते थे। वहाँ से भारतीय खाने के बारे में सीखकर वे बहुत ज़्यादा भारतीय-नेपाली रेस्टोरेंट का काम शुरू करने लगे। भारतीय खाने के अलावा हम नेपाली बियर पी सकते हैं या नेपाली खाना जैसे मोमो, छोईला खा सकते हैं।

भारत में जापानी खाना

भारत में जापानी खाना इतना प्रसिद्ध नहीं है, लेकिन धीरे-धीरे से जापानी खाना भारत में लोकप्रिय हो रहा है। सुशी या टेनपुरा सबसे मशहूर है। जापानी भोजन बनाने के लिए चीजें जैसे जापानी चावल या सैमन (सूशी के लिए) भारत में नहीं मिलती है। इसलिए यह

कहा जाता है कि बहुत महंगा है लेकिन अमीर लोगों को यह जापानी खाना बहुत पसंद है। दिल्ली, गुड़गाँव या मुंबई में कुछ जापानी रेस्टोरेंट हैं।

कप नूडल तो सबसे मशहूर जापानी खाना है। पूरे भारत के सुपर मार्केट में हम बहुत प्रकार के कप नूडल्स खरीद सकते हैं। 2014 से निशीन होल्डिंग्स कप नूडल को भारत में बेचने लगा। मजेदार मसाला नामक कप नूडल भारत में बहुत चल रहा था और अब यह कप भारत में दूसरा सबसे प्रसिद्ध इन्स्टेन्ट नूडल हो गया है।

जापान और भारत के धर्म के बारे में

कोदाई इनोउए

ओसाका विश्वविद्यालय, जापान

जापान और भारत के बीच सांस्कृतिक आदान-प्रदान छठी शताब्दी में जापान में बौद्ध धर्म की शुरुआत के साथ शुरू हुआ था। सन 736 में एक भारतीय भिक्षु जापान में बौद्ध धर्म का प्रसार करने आये थे । उन्होंने तोदाईजी मंदिर में महान बुद्ध की मूर्ति में प्राण प्रतिष्ठा कार्य गुरु के रूप में काम किया और 760 में अपनी मृत्यु तक जापान में रहे। दोनों देशों के भिक्षु और विद्वान अक्सर एक-दूसरे के देश जाते हैं।

कई हिंदू देवताओं को जापान में पूजा जाता है। भारतीय देवी सरस्वती को जापान में बेनज़ाइतेन के रूप में जाना जाता है। ब्रह्मा को 'बोंतें' के रूप में जाना जाता है और यम को 'एंमा' के रूप में जाना जाता है। हिंदू और बौद्ध धर्म में इस्तेमाल की जाने वाली संस्कृत भाषा को स्वीकृत कर लिया गया है और अभी भी उन प्राचीन चीनी भिक्षुओं द्वारा उपयोग किया जाता है जो जापान आये ।

वर्तमान में, भारतीय बौद्ध और जापानी बौद्ध धर्म अलग-अलग हैं। भारत में बौद्ध धर्म तपस्या से इनकार करता है।

जापान में भिखारियों को बुरा माना जाता है लेकिन भारत में भिखारियों को महत्त्वपूर्ण माना जाता है।जापान में बौद्ध धर्म बुद्ध की पूजा करता है।लेकिन भारत में दूसरों पर निर्भरता से इनकार किया जाता है।भारत में अभी भी बहुत से लोग बौद्ध धर्म को मानते हैं। हालांकि जापान में बहुत सारे नहीं हैं क्योंकि जापान में बौद्ध धर्म शिंतो धर्म से

जुड़ा था।और धर्म जीवन में शामिल नहीं है। जापानी भिक्षु अभी भी अभ्यास करने के लिए भारत जाते हैं।

जापानी और भारतीय कंपनियों के बारे में

अयाका ओगावा

ओसाका विश्वविद्यालय, जापान

आजकल भारत की अर्थव्यवस्था विकास कर रही है इसलिए जापानी कंपनियाँ भारत में प्रवेश कर रही हैं।

दुनिया में जापानी कंपनियों ने सबसे पहले भारत में निवेश किया। इस कंपनी का नाम सुजुकी है। कार के क्षेत्र में सुजुकी, तोयोता और होंदा भारत में बहुत प्रसिद्ध हैं। इन कंपनियों में सुजुकी कार की संख्या भारत में सबसे ज़्यादा है। लगभग आधी सुजुकी कारें भारत में बेची जाती हैं। भारत में गाड़ी की संख्या से मोटर साइकिल की संख्या ज़्यादा है। भारतीय मोटर साइकिल की सबसे बड़ा कंपनी हीरो हौंडा है। यह हौंडा नामक जापानी कंपनी और भारतीय कंपनी ने मिलकर बनाई है।

भारतीय ट्रेन के क्षेत्र में जे आर नामक जापानी कंपनी ने प्रवेश किया है। जे आर कम्पनी मुंबई से अहमदाबाद तक जापानी शिनकानसेन की तरह फास्ट ट्रेन चलाने के लिए सहयोग कर रही है।

पैनासोनिक और सोनी भी भारत में प्रसिद्ध हैं। पैनासोनिक ने सब्जी की गंदगी को साफ करने के लिए धुलाई की मशीन का आविष्कार किया। पैनासोनिक और सोनी भारत में धुलाई की मशीन के साथ अन्य अलग-अलग चीजें भी बेचती हैं। इन जापानी कंपनियों के हरियाणा में अपने दफ्तर और फ़ैक्टरियाँ हैं।

भारतीय कंपनियों ने भी जापान में प्रवेश किया है। टाटा ग्रुप की एक कंपनी जापान में स्थापित हो चुकी है। यह कंपनी 25 साल से जापान में काम कर रही है। अन्य कई भारतीय आईटी कंपनियों ने भी जापान में प्रवेश किया। अभी उद्यम के क्षेत्र में जापान और भारत में संबंध बना है।

मेट्रो के बारे में

शुई ओदा

ओसाका विश्वविद्यालय, जापान

जापान और भारत में बहुत अच्छा संबंध है। हम एक दूसरे की सहायता करते हैं। भारत की राजधानी दिल्ली में मेट्रो है। यह मेट्रो जापान के साथ बनाई गई है। जापान ने भारत को 162 अरब येन उधार दिया।

2002 में मेट्रो चलने लगी। इसे बनाने में 4 साल लगे। यह ठीक समय सीमा में बनी। जापानी कम्पनी मित्सुबिशी ने मेट्रो के लिए मशीनें भेजीं। पहले दिल्ली मेट्रो के 29 स्टेशन थे। धीरे धीरे स्टेशन के नम्बर और लाइनें बढ़ गयी हैं । यहाँ एक लाइन का एक रंग होता है। यह टोक्यो के मेट्रो के समान है। ऐसे जापान और भारत मिलकर काम करते हैं। मेट्रो जापान और भारत के अंतरराष्ट्रीय सहयोग का एक अच्छा उदाहरण है।

इतिहास के बारे में

ताकुमी कावागुची

ओसाका विश्वविद्यालय, जापान

नालन्दा विश्वविद्यालय

यह 5वीं शताब्दी के आसपास गुप्त वंश के राजा के संरक्षण में बनाया गया था, और यह बौद्ध धर्म के अध्ययन के लिए एक स्कूल था। यह 7वीं शताब्दी के वर्धन राजवंश के संरक्षण में भी विकसित हुआ। इसकी स्थापना प्राचीन गंगा नदी घाटी बिहार के दक्षिणी हिस्से में मगध के राजगृह में की गई थी और खंडहर आज भी बने हुए हैं। नालंदा मठ ने कभी हजारों भिक्षुओं को आकर्षित किया और बौद्ध अध्ययन, प्राचीन हिन्दू ग्रंथों, चिकित्सा, खगोल विज्ञान और गणित के सिद्धांतों और दर्शन का अध्ययन करने के लिए एक व्यापक विश्वविद्यालय होने का एहसास हुआ। इसे वर्धन राजवंश और उसके बाद पाल राजवंश द्वारा संरक्षित किया गया था, लेकिन इस्लामिक खिलजी राजवंश द्वारा इसे नष्ट कर दिया गया था, जिसने अफगानिस्तान पर 1200 ईसवीं में आक्रमण किया, जिससे भारत में बौद्ध धर्म की समृद्धि समाप्त हो गई। 20वीं शताब्दी में खंडहरों की खुदाई की गई है।

संस्कृति के बारे में

शिनो नकाए

ओसाका विश्वविद्यालय, जापान

मैं जापान और भारत की संस्कृति के बारे में बनाना चाहती हूँ। जापान और भारत के बीच मजबूत सांस्कृतिक सम्बन्ध हैं। आजकल बहुत सारे भारतीय लोग जापान आते या रहते हैं। और ज़्यादा जापानी भी भारत घूमने जाते हैं। जापान और भारत के सांस्कृतिक सम्बन्ध की शुरुआत 1957 से हुई। दोनों देशों के लिए 2007 फ्रेंडशिप ईयर था । इस साल दोनों देश अपने देश में संस्कृति का आदर कर रहे हैं। उदाहरण के लिए जापान में काफ़ी भारतीय खाने की दुकानें हैं। जापान में ये दुकानें बहुत लोकप्रिय हैं। जापान में सब्जी, नान, चाय आदि भारतीय खाना मिलता है। लेकिन दोनों देश के बीच संस्कृति का अंतर भी बहुत है। जब जापानी खाना खाते हैं तो ओहाशी (चाप स्टिक) इस्तेमाल करते हैं । लेकिन भारतीय लोग अपने हाथ से खाते हैं। इस तरह जापान और भारत एक दूसरे को प्रभावित करते हैं । मैं चाहती हूँ कि दोनों देशों के सम्बन्ध सदा के लिए अच्छे रहें।

जापान में भारत पर एक दृष्टि

दियाना बास्कोविचि

तोक्यो यूनिवर्सिटी ऑफ़ फॉरेन स्टडीज़, जापान

भारत के सम्बन्ध में मेरे मन में विचार बचपन से ही आने लगे थे। सबसे पहले, मुझे भारतीय धर्मों की विविधता में दिलचस्पी थी। मैंने सुना था कि वहाँ कई धर्मों के लोग रहते हैं और बौद्ध धर्म भी भारत से ही जापान तक आया है। इसलिए मैंने तोक्यो विदेशी अध्ययन विश्वविद्यालय में हिंदी पढ़ने का फ़ैसला किया। हमारे विश्वविद्यालय में पहले हम विदेशी भाषा सीखते हैं और फिर उस देश की संस्कृति, स्थिति और साहित्य आदि उस भाषा में सीखने लगते हैं। मैं तो पहले से भाषा सीखने में बहुत अच्छी नहीं थी और लंबे दिनों तक एक ही काम करने में बिलकुल अच्छी नहीं थी। मैं हमेशा अलग-अलग काम करना पसंद करती थी इसलिए मुझे बहुत चिंता थी कि मैं विश्वविद्यालय के विद्यार्थी जीवन में भारत के बारे में पढ़ाई कर पाऊँगी या नहीं।

प्रथम वर्ष तो मैंने देवनागरी अक्षर सीखना शुरू किया। वे चिह्न की तरह दिखते थे। मुझे लगा कि नई भाषा सीखना आसान नहीं होता है। लेकिन धीरे-धीरे मैं अपने उन रहस्यपूर्ण अक्षरों को समझने लगी। मेरे जीवन का यह एक बहुत दिलचस्प अनुभव था। कुछ दिनों बाद मैं अक्षरों को मिला कर शब्द पढ़ने लगी और फिर वाक्य भी बनाने लगी। उस समय हिंदी के वाक्यों को पढ़ना और उनके अर्थ समझना मेरे लिए जादू हो गया था। अब हिंदी को जितना समझने लगी थी उतनी ही मेरी रुचि उसमें बढ़ने लगी थी।

फिर मैंने वहाँ की संस्कृति और धर्म को भी समझने का प्रयास शुरू किया। मुझे लगा कि भारत की संस्कृति उत्तर से दक्षिण तक अलग-अलग है और मुझे न केवल धर्म बल्कि सांस्कृतिक विविधता भी महसूस हुई। मैं विश्वविद्यालय के क्लब की एक्टीविटी के रूप से कथक नृत्य करने लगी, और इससे हिंदी सीखने के लिए मेरी प्रेरणा को समर्थन मिला। अब मैं सोचती हूँ कि कथक नृत्य में मैं हिंदू नृत्य और मुस्लिम नृत्य सीखते समय मिथकों और त्योहारों जैसी संस्कृतियों के बारे में जान सकती हूँ। कक्षा में हमने जब भारत के त्योहारों के बारे में बात की तो वहाँ की अनेक कथाएँ भी मेरी समझ में आने लगीं। रामायण और महाभारत की बात करते हुए मुझे भारत के राम और कृष्ण जैसे महापुरुषों की भी जानकारी मिली। इसी समय मैंने अपने विश्वविद्यालय के पास एक भारतीय रेस्तराँ में पार्ट टाइम जॉब भी शुरू की। वहाँ के भारतीय रसोईया केरल से हैं और हिंदी ज़्यादा नहीं बोल सकते हैं। उस रेस्तराँ में उसके अलावा सब नेपाली हैं। वे भी थोड़ी-थोड़ी हिंदी बोलते थे। वहाँ काम करते समय मैं अक्सर दक्षिण एशियाई संस्कृति देख और समझ रही थी।

जब मैं दूसरे ग्रेड में थी तब दिसंबर से जनवरी तक दिल्ली, आगरा, मथुरा और जयपुर घूमने गई। यह यात्रा मेरे लिए बहुत दिलचस्प थी। जब भारत में हवाई अड्डे के निरीक्षण स्टेशन पर बात कर रही थी तब तो मैं अंग्रेजी बोलना ही भूल गई थी और मैं सोची भी नहीं कि केवल हिंदी बोल रही हूँ। मेरी बात सुनकर वहाँ के स्टाफ शायद चकित थे और हँस रहे थे लेकिन मुझे बहुत खुशी हुई। मैं बाजार में कीमतों पर बातचीत करते हुए अच्छी खरीदारी कर सकी। मुझे लगा कि मेरे परिवार के लोग मेरे इस नए रूप

को देखकर ज़रूर आश्चर्यचकित होंगे। मैं भारतीय कपड़े और सामान की सुंदरता और परंपरा के संरक्षण से प्रभावित हुई। भारत में जाकर पहली बार मैं वहाँ की क्षमता को महसूस किया। मुझे लगता है कि मैं भाग्यवान थी कि कोरोना आने के पहले ही भारत देखने चली गई थी। बाद में मैंने सुना कि उसी समय से कोरोना दुनिया को प्रभावित कर रहा था। जब मैं वहाँ से लौट कर आ गई उसके बाद ही सब कुछ बंद होने लगा।

कोरोना के कारण, अब विदेश जाना मुश्किल हो गया है और मेरे तो कई दोस्तों ने भारत के विश्वविद्यालय में पढ़ाई छोड़ दी। डर के कारण ही फिर से भारत जाने की योजना मैंने नहीं बनाई लेकिन मैं रुकना नहीं चाहती। कोरोना आने से पहले फ़रवरी और मार्च में, मैंने मोंटेनेग्रो, पूर्वी यूरोप के देश में भाषा के स्कूल में जाती थी। क्योंकि मेरी माताजी जापानी हैं लेकिन मेरे पिताजी मोंटेनेग्रोई हैं । मैंने वहाँ पर भी जापानी सीखने वाले कई मोंटेनेग्रोई देखा। उनकी जापानी बहुत-बहुत अच्छी थी । मोंटेनेग्रो एक छोटा सा देश है जो अभी तक आर्थिक रूप से विकसित नहीं हुआ है। इन जापानी सीखने वाले दोस्तों के पास जापानी सीखने के लिए पाठ्यपुस्तकें और शब्दकोश नहीं हैं, और वे कभी भी हवाई जहाज में नहीं चढ़े हैं। मुझे लगा कि मुझे और मेहनत करना चाहिए। यह सही है कि अब मुश्किल समय है, हम भारत जाना चाहते हैं लेकिन नहीं जा सकते। लेकिन हमारे पास महान प्रोफेसर और अच्छा हिंदी शब्दकोश भी है। मेहनत न करने का कोई कारण नहीं है।

अब तो भारत मेरे मन में इतना बैठ गया है कि जापान में रहते हुए भी मैं हमेशा भारत से संबंधित चीजों की तलाश में रहती हूँ । एक दिन इन्टरनेट पर मैंने एक जापानी

लोकप्रिय टीवी नाटक में कुछ हिंदी वाक्यों के अनुवाद और उस अभिनेता को शब्दों का उच्चारण पढ़ाने के लिए नौकरी का विज्ञापन देखा। मुझे चिंता थी कि मेरी हिंदी अभी तक पर्याप्त अच्छी नहीं हो सकी है फिर उस अभिनेता को शायद पढ़ाने में दिक्कत होगी | लेकिन, यह बहुत अच्छा मौक़ा लगा और मैंने एक नया प्रयोग ही किया। मैं बड़ी टीवी कंपनी के स्टूडियो में गई, वहाँ जापानी वाक्यों का हिंदी में अनुवाद किया और एक प्रसिद्ध जापानी अभिनेता को उन वाक्यों हिंदी उच्चारण सिखाया। मैंने नाटक की शूटिंग भी देखी। यह नाटक बाद में प्रसारित किया गया और यह इंटरनेट पर एक विषय बन गया कि जापानी लोकप्रिय अभिनेता हिंदी में संवाद बोल रहा है। नाटक के अंत में मेरा नाम हिंदी पर्यवेक्षक के रूप में लिखा गया था। कई परिचित लोगों ने मुझसे संपर्क किया। यह एक रोमांचक और बहुत अच्छा अनुभव था।

इस नये वर्ष के शुरू होते ही जनवरी में एक भारतीय लड़का अचानक तोक्यो के जूनियर हाई स्कूल में पढ़ने आया। उसका बचपन भारत में बीता है इसलिए उसको जापानी बिल्कुल नहीं आती है फिर मुझे एक हिंदी-जापानी अनुवादक के रूप में उसके साथ स्कूल जाने की नौकरी मिली। शुरू में मैंने सुना कि वह बहुत शर्मीला है। जब एक जापानी ने उससे अंग्रेजी में बात की तो उसने ज़्यादा जवाब नहीं दिया लेकिन जब मैंने हिंदी में बात की तो उस लड़के ने तेज गति से बोलना शुरू किया। दरअसल वह ऐसा लड़का है जिसे बहुत बात करना पसंद है। उस स्कूल में जापानी शिक्षक हमें हिंदी में बहुत सारी बातचीत करते देखकर बहुत आश्चर्यचकित होते हैं। मुझे पता है कि अपनी मूल भाषा में बोलने पर लोग अपना दिल जल्दी खोल सकते हैं। अब भी वह अपनी कक्षा में

जापानी बोल रहे अध्यापक की बातें नहीं समझ पाता है और कभी - कभी कुछ दिक्कतें भी आती हैं। लेकिन वह लड़का जब मुझसे मिलता है तो उसका चेहरा चमकने लगता है। वह अपनी चमकती आँखों के साथ खुश होकर मुझे बताता है कि उसने जापान में क्या आनंद लिया और कितनी नई चीजें देखीं। उस लड़के का सकारात्मक व्यक्तित्व हमेशा मुझे भी हिम्मत देता है। हम एक मजबूत भाषाई बंधन से जुड़े हैं और मैं उस लड़के को अपना वास्तविक छोटा भाई मानती हूँ। मुझे बहुत खुशी है कि मैंने जो भाषा सीखी, उससे लोगों की मदद कर सकती हूँ।जापान में रहते हुए भी मैं भारतीयों के लिए विभिन्न काम कर सकती हूँ। मेरे लिए इससे ज़्यादा खुशी की बात दूसरी कोई नहीं है।

इनके अलावा, मैंने तोक्यो में आयोजित भारत और जापान की व्यापार बैठक में भारत के कंपनियों के निदेशकों के लिए एक मार्गदर्शक के रूप में काम किया और दूतावास में आयोजित हिंदी दिवस में भारतीय लोगों के साथ बात की। पिछले वर्ष महात्मा गाँधी के जीवन पर आधारित हिंदी का जो नाटक हमने अपने विश्वविद्यालय और भारतीय दूतावास में प्रस्तुत किया उसे मैं कभी नहीं भूल सकती। भारत से लगाव के कारण ही मैं हमेशा तोक्यो में भारतीय त्योहारों में भाग लेती हूँ (नमस्ते इंडिया और दीपावली) मैं कभी-कभी जापान की उन जगहों पर जाती हूँ जहाँ बहुत से भारतीय लोग रहते हैं। अभी तो मुझे यह नहीं पता कि मैं कब भारत जा सकती हूँ, इसलिए मैं अब जापान में भारत और भारतीयों की सेवा करना चाहती हूँ।

मुझे भारतीय संस्कृति में दिलचस्पी थी, लेकिन अब मुझे हिंदी पढ़ने-लिखने और बोलने में बहुत आनंद आता है। हिंदी के अक्षरों की सुंदरता, उच्चारण का आनंद और

बोलने वालों की बड़ी संख्या ये सब मुझे आकर्षित करते हैं। मैं सोचती हूँ कि अब मैं इस भाषा में बहुत से लोगों को खुश और मदद कर सकूँगी। मुझे लगता है कि हिंदी सीखना मेरे लिए सबसे अच्छा फ़ैसला था। भारत और वहाँ की संस्कृति तथा भाषा जापान में लोगों का ध्यान अधिक आकर्षित करेगा। मुझे उम्मीद है कि भविष्य में मेरे जैसे बहुत से जापानी विद्यार्थी हिंदी और भारत के बारे में पढ़ने का फैसला करेंगे। आज भी मैं भारत जाने के लिए सब कुछ ठीक होने का का इंतज़ार करते हुए अपने काम पर जा रही हूँ और जापानी ट्रेन में भारतीय गाना सुन रही हूँ।

धन्यवाद।

जापान में पढ़ने की संस्कृति

कुबोता हारुका

ओसाका विश्वविद्यालय, जापान

जापानी प्राथमिक पाठशाला में बच्चे की पुस्तक पढ़ने की आदत बनाने के लिए बच्चों को अनेक गतिविधियाँ करवाते हैं। यहाँ मैं इसके बारे में मेरे अनुभवों से कुछ बताऊँगी।

सबसे पहले हर सुबह क्लास होने से पहले पंद्रह या बीस मिनट का हमारा पुस्तक पढ़ने का समय होता था। इस में सब बच्चों को शांत बैठकर अपनी उस पुस्तक को पढ़ना है जो उनको पसंद हैं। इन बच्चों में घर से अपनी पुस्तक लानेवाले भी हैं, पुस्तकालय से उधार लेने वाले भी हैं, अपने क्लासरूम के पुस्तक निधि से चुनने वाले भी हैं। वे हास्य पुस्तक भी पढ़ सकते हैं या वैसी पुस्तकें भी जिनमें विज्ञान, इतिहास या बड़े आदमी के बारे में लिखा होता है।

कभी कभी इस सुबह के पढ़ने के समय में दो-चार बच्चों की माता जी स्कूल आ कर हर क्लास के सब बच्चों के सामने छोटी छोटी कहानियाँ ऊँचे स्वर में पढ़ती हैं। इसे जापानी में योमिकीकासे कहते हैं। हमेशा ऐसा अभ्यास छोटे बच्चों के लिए करना है जिसको पढ़ना नहीं आता है, लेकिन ये मेरी पाठशाला में दस-बारह साल के बच्चों के लिए भी किए जाते थे। इस से बच्चे न केवल कहानियों से आनंद लेते हैं बल्कि अपने गाँव की स्थानीय भाषा और इतिहास सीख सकते भी हैं।

मेरे पाठशाला में बहुत सारी किताब पढ़ने वाले बच्चों के लिए दो प्रमाण पत्र हैं। जब पचास किताबें पढ़ीं तो अध्यापक एक छोटा प्रमाण पत्र उसको देते हैं। और अगर

एक साल में तीन सौ पढ़ी, स्थानीय नगराध्यक्ष एक बड़ा प्रमाण पत्र देते हैं। जब मैंने यह बड़ा प्रमाण पत्र लिया तो मुझे और मेरे परिवार वालों को भी बड़ी खुशी हुई थी। ये लेने के लिए भी बच्चे और किताब पढ़ने की कोशिश करते हैं।

जापानी पाठशाला ऐसे अलग अलग तरीके से किताबें पढ़ना सिखाते हैं। मैं सोचती हूँ कि ये हमारी पढ़ने की संस्कृति को स्थापित करने में महत्त्वपूर्ण योगदान देता है।

मैं और भारत

ओसावा कोकोरो

ओसाका विश्वविद्यालय, जापान

मैंने क्यों हिंदी की पढ़ाई शुरू की ?

मैंने ओसाका विश्वविद्यालय में 5 वर्ष तक हिंदी पढ़ी। जापान में हिंदी पढ़ने के लिए विशेष संकाय दो विश्वविद्यालयों में ही हैं। ओसाका विश्वविद्यालय और तोक्यो विदेशी भाषा विश्वविद्यालय।

ओसाका विश्वविद्यालय में हिंदी संकाय के विद्यार्थी लगभग 70 हैं (सभी विद्यार्थी)। तोक्यो विदेशी भाषा विश्वविद्यालय में भी लगभग समान संख्या है।

इसलिए जापान में हर साल लगभग 150 विद्यार्थी हिंदी पढ़ते हैं। जापानी विद्यार्थियों की आबादी 30 लाख है तो हिंदी पढ़ने वाले विद्यार्थी बहुत कम हैं।

मेरे परिवार या दोस्त, पहली बार मिलने वाले भी मुझसे पूछते हैं कि 'आपने हिंदी पढ़ने का निर्णय क्यों लिया?' यह सवाल हिंदी पढ़ने विद्यार्थी से अक्सर पूछा जाने वाला प्रश्न है। हमेशा मैं उनको उत्तर देती 'मुझे भी पता नहीं!', क्योंकि उत्तर देने के लिए बहुत अधिक समय की ज़रूरत होती है।

असल में मेरे लिए पहले हिंदी सीखना ज़रूरी नहीं था। मैं किसी भी विश्वविद्यालय जाना चाहती ही थी।

जब मैं हाई स्कूल की छात्रा थी, तब मुझे पता नहीं था कि ‘मैं क्या काम करना चाहती हूँ ?’, ‘मैं किसी तरह का काम करना चाहती हूँ । इसलिए मैं विश्वविद्यालय में अपने भविष्य के बारे में समझने का समय चाहती थी।

विश्वविद्यालय चुनने के समय मैंने सोचा कि मेरा पसंदीदा विषय क्या है। मैं बचपन से भाषा पढ़ना पसंद करती हूँ। जब मैं प्राथमिक विद्यालय की छात्रा थी उस समय चीनी भाषा पढ़ती थी। स्कूल के विषय में मुझे अंग्रेज़ी सबसे ज़्यादा पसंद थी। इसलिए मैंने भाषा पढ़ने के लिए ओसाका विश्वविद्यालय जाने का निर्णय लिया। उसके बाद मैंने सोचा कि किस भाषा का अध्ययन करूँ।

हाई स्कूल के तीसरे साल में मैंने एक फ़िल्म देखी। वह फ़िल्म थी ‘थ्री इडियट्स’। मैं उस फ़िल्म को देखकर बहुत प्रभावित हुई। नायक के स्वतंत्र विचार, विशेषता, नृत्य, सुंदर रंग के कपड़े, इसके अलावा उस फ़िल्म की सभी चीजें अच्छी लगीं। मुझे भारत में दिलचस्पी हुई। फिर, मैंने हिंदी पढ़ने का निर्णय किया।

विश्वविद्यालय में हिंदी कैसे सीखती थी ?

ओसाका विश्वविद्यालय में पहले देवनागरी की पढ़ाई ही शुरू करते हैं। उसके बाद व्याकरण, लिखना-पढ़ना, उच्चारण फिर बोलने का अभ्यास सीखते हैं। हिंदी पढ़ने वाले विद्यार्थी के पास एक हफ़्ते में 5 या अधिक कक्षाएं होती हैं।

विद्यार्थी देवनागरी को पहले एक हफ़्ते में ही याद कर लेते हैं। इसके लिए जापानी ‘कांजी’ ‘हीरागाना ’और ‘काताकाना ’ नामक जापानी लिपि इस्तेमाल करते हैं।

चीनी लिपि कांजी का इस्तेमाल करते हैं। और वर्णमाला सीख लेते हैं। विश्वविद्यालय में पहली बार देवनागरी को देखकर ऐसा लगा कि मैं यह पहली बार देख रही हूँ। उस समय मैं देवनागरी वर्णों को नहीं पहचान सकी थी। यह भी अब अच्छी तरह याद है।

व्याकरण के बारे में मुख्यत; ऑक्सफोर्ड का 'McGregor Outline of Hindi Grammar' नामक पुस्तक इस्तेमाल करके पढ़ते थे। इस पुस्तक में हिंदी व्याकरण अंग्रेज़ी में लिखा गया। तो, हमें हिंदी व्याकरण पढ़ने के पहले अंग्रेज़ी का मतलब समझना पड़ता था। यह भी बहुत मुश्किल लगा।

सच पूछो तो मैं व्याकरण की कक्षा में एक बार फेल हो गयी । इसलिए मैं पाँच साल तक विश्वविद्यालय जाती थी।

लिखने-पढ़ने की कक्षाओं में कहानी पढ़कर एक ही समय में व्याकरण और अनेक शब्दों को भी सीखा। इस कक्षा में अध्यापक हमेशा कहते हैं 'कुछ भी बोलिए! आ या ओ भी अच्छा है!' और हम कहानी ज़ोर से पढ़ते थे।

भाषा लिखने-पढ़ने के लिए भी इस्तेमाल होती है । लेकिन, मैं ऐसा सोचती कि भाषा सबसे महत्त्वपूर्ण भूमिका बोलने के लिए है। तो, 'कुछ भी बोलिए' बहुत अच्छा लगा।लिखने-पढ़ने की कक्षा में जापानी से हिंदी में अनुवाद करने का अभ्यास भी करते थे। और हम इस कक्षा में उर्दू भी पढ़ते थे। उच्चारण की कक्षा में भारतीय अध्यापक के साथ बातचीत अभ्यास करते थे। पहले अध्यापक क्या कहते थे यह मुझे कुछ भी नहीं पता। लेकिन थोड़ा-थोड़ा करके बातचीत समझ सकती तो मुझे यह कक्षा पसंद थी।

इसके अलावा महाभारत पढ़ी या वीडियो देखकर बातचीत सीखी, हिंदी के गाने गाना भी सीखे। महाभारत में भगवान के बारे में जानना दिलचस्प लगा। और मैं आजकल भी वे वीडियो देखती हूँ जो हम उस समय देखते थे। हमने केवल हिंदी ही नहीं, बल्कि भारत के बारे में भी सीखा। भारतीय संस्कृति, इतिहास, भूगोल, फ़िल्मों को भी देखा।

मैं पढ़ाई में अच्छी नहीं थी पर मुझे भारत बहुत पसंद है।

जब मैं चौथे साल की छात्रा थी तब एक महीने के लिए भारत गई । नौ विद्यार्थियों के साथ पुणे में तिलक महाविद्यालय में कुछ महीने तक हिंदी सीखी। तिलक महाविद्यालय में भारतीय विद्यार्थी जापानी सीखते हैं। उनकी जापानी बहुत अच्छी है। मैं उनकी अच्छी जापानी सुनकर चौंक गई। और सब विद्यार्थी हमारी मदद करते थे। मैं भी अच्छी हिंदी में बात करना चाहती थी।

भारत में हम हर दिन सुबह से दोपहर तक स्कूल में हिंदी सीखकर स्कूल के बाद या छुट्टी में विभिन्न स्थानों पर गए। शनिवारवाड़ा, एलिफ़ेंटा द्वीप, मुंबई शहर, अजंता, एलोरा मंदिर आदि । गणपति त्योहार का भी अनुभव किया। अच्छे दोस्त भी मिले। उस महीने बहुत अच्छा लगा। मेरी भारत में और रुचि हो गई।

अध्ययन के अंतिम साल, मैंने कविता के बारे में पढ़ा था। और मैंने स्नातक के लिए 'मित्रो मरजानी' का अनुवाद किया।

ऐसे मैंने ओसाका विश्वविद्यालय में 5 साल तक हिंदी भाषा की पढ़ाई की।

भविष्य

अब मैं एक दफ़्तर में बिक्रीकर्ता हूँ। ओसाका विश्वविद्यालय के कुछ स्नातक हिंदी इस्तेमाल करके काम करनेवाले हैं। लेकिन मेरा काम हिंदी से संबंधित काम नहीं है। पर आई फोन का सेटिंग्स हिंदी रखती हूँ या कुछ वीडियो देखकर हिंदी सीखती हूँ। क्योंकि मैं एक बात करना चाहती हूँ हमेशा हिंदी का इस्तेमाल करती रहूँ।

पुणे

पुणे में रहते हुए एक दिन मैं अपने भारतीय दोस्त के घर गई। वहाँ रात भर रही। मैंने वहाँ दोस्त की माताजी को भोजन बनाते देखा।

रंगीन मसाले इस्तेमाल करके ख़ुशबूदार और स्वादिष्ट भोजन बनाती जा रही थीं। मेरी भी भारतीय भोजन बनाने के बारे में रुचि उपज गई। जापान लौटने के पहले मैंने मसाले ख़रीदे, और जापान में भारतीय भोजन बनाने लगी। लेकिन यह भारत में खाए भोजन की तरह नहीं हो सकता। इसलिए किसी दिन फिर भारत जाकर किसी परिवार के घर में खाना बनाना सीखना चाहती हूँ।

यात्रा वृत्तांत

लद्दाख की पहचान

अलेक्सांदर बोग्दनोव

सोफ़िया विश्वविद्यालय, बल्गारिया

लद्दाख ऐसी जगह है जो एक लंबी मुद्दत तक मेरे लिए केवल एक सपना बना रहा था। पहली बार मैं 2009 में वहाँ पहुँच पाया - उस समय मैं इंडॉलजी की मेरी दो छात्राओं के साथ मैं और अपनी भावी जीवन-साथी के संग तीन महीने की एक पश्चिमी हिमालय परिक्रमा पर चला गया। तब से ही लद्दाख भारत की हरेक यात्रा का हिस्सा रहता है और अब तक हम दोनों को सात बार लद्दाख वापस आने का मौक़ा मिला। इन यात्राओं के सिलसिले में हम वहाँ की एक 'ब्रोग-पा' नामक छोटी हिन्द-आर्य जन-जाति का अनुसंधान करते हैं और उसकी संस्कृति को बचाए रखने की एक योजना में लगे हुए हैं।

पहली बार जब आप लद्दाख का कोई फ़ोटो देखें, तो लगता है जैसे यह कोई दूसरे संसार का दृश्य हो! आसमान में दूर तक धंसी हुई चोटियाँ, उन्हें प्रतिबिंबित करती नीली झीलें और चारों ओर फैलता हुआ उच्चस्तरीय मरुस्थल! – खामोशी को भेदने वाले हैं केवल हवाओं के आकस्मिक झोंके और सिंधु नदी की सदा गूँजती धाराएँ। ऊँचाइयों के साथ-साथ इस अद्भुत जगह की ख़ासियत उसका बेहद सख़्त मौसम ही है – गरमी के दिनों तपती धूप में त्वचा जलने को है और छाया में जमने को है! मगर लद्दाख की इस सख़्ती में इसका सौंदर्य भी निहित है। पथरीली घाटियों में छिपे हुए जगह-जगह आपको छोटे से हरे-भरे मरूद्यान-सदृश गाँव नज़र आएँगे। पीढ़ियों से लद्दाखी लोग हरियाली के

इन छोटे उर्वर स्वर्गों को अपनी सच्ची मेहनत और जिजीविषा से पानी और बर्फ़ की हरेक बूँद बचाकर वह अनोखा रूप दिया है।

लद्दाख तो ऐतिहासिक और सांस्कृतिक दृष्टि से सदा बहुत महत्त्वपूर्ण रहा है। वह सिल्क-रोउड के रास्ते में एक प्रमुख केंद्र रहा है और प्राचीन काल में तिब्बत में बौद्ध धर्म का प्रचार यहीं से हुआ है। आज भी उस ज़माने के साक्षी अनेक प्राचीन गोमपा मोनस्टेरी, बहुत शिलालेख और अनमोल भित्ति चित्र हैं।

यहाँ हिंदी थोड़ी चलती है, तो आपको यहीं की भाषा सीखनी पड़ती है। मगर यहाँ भाषा कोई बाधा होता ही नहीं! लद्दाखियों का जो आत्मीय स्वभाव है, वह 'जुले-जुले' के दिली संबोधन से या तो पहली प्याली नमकीन चाय या चाँग बीयर पिलाने से किन्ही भी दूरियों को पार करके आप से संबंध जोड़ सकता है।

पहली यात्रा से ही एक गाँव में हमें एक बहुत प्यारी औरत मिली थी जिसका नाम त्सिरिंग दोलमा है। जब भी लद्दाख पहुँचते हैं तो उन्हीं से मिलने की उत्सुकता रहती है। और गाड़ी लेकर हम त्सिरिंग दोलमा को खोजने के लिए निकलते हैं - कुछ परेशानियाँ तो हमेशा रहती हैं – ज़िंदा तो है क्या, बीमार तो नहीं हुई? क्या अपने गाँव में होगी? वहाँ न मिली तो पता चलता है कहीं और मजबूरी से रोड बनाने के लिए पत्थर तोड़ने का काम करती है! उसका फ़ोटो उठाकर पूछते चलते हैं जबकि कहीं से उनका हंसमुख चेहरा न मिले! इसी तरह त्सिरिंग दोलमा को ढूँढ़ना और मिलना लद्दाख की उस आत्मीयता की एक पहचान बन गया है, जो एक दूसरे को जानने और एक दूसरे से जुड़े रहने की सीख देती है।

2009 की पहली यात्रा के समय भी लद्दाख आज से काफ़ी अलग था। कहते हैं, थ्री इडियट्स फ़िल्म का दोष है! लद्दाख में शूट की गई फ़िल्म ने लाखों देशी पर्यटकों को प्रेरित किया है उसके उच्च पठारों को मोटरसाइकल से घूमने के लिए! तब से कुछी वर्षों में ही लेह और लद्दाख में पर्यटकों का भार क्षेत्र के तेज़ बदलाव के लिए एक प्रमुख कारण होता है - बढ़ता शोर और प्रदूषण, असंख्य गाड़ियाँ, ग़रीबी और लोगों में बढ़ती अलगाव और अजनबीपन की छाया। फिर भी उम्मीद तो रहती है कि लद्दाख की आत्मीयता और जिजीविषा का आदर्श बना रहेगा और आगे भी हम सब को उस से सीखने को बहुत कुछ मिलता रहेगा। जुले ! धन्यवाद!

फ़रवरी 2020 में मेरी भारत यात्रा

वेरेना वेस्टफाल

हैम्बर्ग विश्वविद्यालय, जर्मनी

एक साल पहले मैं तीन सप्ताहों के लिए भारत में थी। मैंने राजस्थान और उत्तर प्रदेश राज्यों का भ्रमण एक यात्री समूह के साथ किया। मेरे टूर ग्रुप में मैं, एक टूर गाइड और ग्यारह बुज़ुर्ग लोग थे। हमने अपनी भारत यात्रा दिल्ली में शुरू की और फिर हम जयपुर, जोधपुर, जैसलमेर, आगरा, वाराणसी और खजुराहो देखने गए।

यह मेरी भारत की दूसरी यात्रा थी। मेरी पहली यात्रा 2015 में थी और मैंने ख़ुद से वादा किया था कि मैं वापस आऊँगी। इसलिए भारत की यह यात्रा मेरे एक सपने का सच हो जाना था, जब मैं पहली फ़रवरी 2020 को दिल्ली वापस गयी।

हमारे टूर गाइड ने न केवल हमें अद्भुत इमारतों को दिखाने के लिए, बल्कि भारतीयों के संपर्क में लाने के लिए भी बहुत कोशिश की। यह मेरे लिए उतना मुश्किल नहीं था। जब मैं अपनी गोरी त्वचा और अपने हल्के सुनहरे बालों के साथ एक इमारत के बाहर खड़ी होती थी या सड़क पर जाती थी, तो मुझे उत्सुकता से देखा जाता था। कभी-कभी मुझे पॉपस्टार जैसा महसूस होता था। कई भारतीयों ने मुझसे पूछा कि 'क्या वे मेरे साथ एक तस्वीर ले सकते हैं?' जब उन्होंने सुना कि मैं बॉलीवुड फ़िल्में देख रही हूँ और थोड़ी हिंदी बोलती हूँ, तो लोग हमेशा बहुत प्रशंसा करते थे और उनको विस्मय होता था। भारत में अधिकांश लोग शायद अपनी महान संस्कृति में इतनी रुचि नहीं लेते और उसमें उनको उम्मीद नहीं दिखती।

अपनी भारतीय यात्रा के दौरान मेरी बहुत अच्छे भारतीयों से कई बार मुलाक़ात हुई। मैंने उनमें से कुछ के साथ संपर्क विवरण का आदान-प्रदान भी किया।

एक यूरोपीय के रूप में भारत में होना कभी-कभी काफ़ी मुश्किल है। इतने सारे हर तरह के प्रभाव आपको हर दिन प्रभावित करते हैं। यह ट्रैफ़िक से शुरू होता है, जो ज़्यादातर सड़कों पर शोर से शुरू होता है। फिर बाज़ार में सौदेबाजी आती है। उनके लिए कोई भी विदेशी अच्छा नहीं है।

भोजन स्वादिष्ट होता है, लेकिन मसालेदार भी होता है जिसकी हमें आदत नहीं होती है। और फिर बहुत से लोगों की भीड़ , जो हर जगह है। भारत में एक यूरोपीय के रूप में सड़क पार करना एक चुनौती है। हर भारतीय अँग्रेज़ी तुरंत नहीं समझता है। सिर हिलाकर उत्तर देने की कला को मुझे अभी भी सीखनी होगी। वैसे अभी इसकी व्याख्या करना सीखना होगा। भारतीय बहुत उत्सुक लोग हैं। कम से कम मुझे ऐसा अनुभव हुआ। कुछ लोग शर्मीले हैं और आप केवल उनकी रुचि और साफ़ दिल को नोटिस करते हैं। बाकी लोग आपसे सीधे बात करते हैं।

लेकिन हर कोई बहुत गर्मजोशी ख़ुशमिजाज़ और दोस्तानापूर्ण भाव रखता है। वे जितना लेते हैं उससे ज़्यादा देते हैं। मेरे टूर गाइड का एक भारतीय मित्र ने मुझे एक दर्ज़ी के पास ले जाने के लिए सहमति व्यक्त की, ताकि मैं अपने लिए एक चोली सिलवा सकूं। वह आदमी पूरी तरह से अच्छा और सरल था। दूसरों ने मुझे एक शादी में उनके साथ नृत्य करने के लिए खुली बांहों के साथ आमंत्रित किया। आप जर्मनी में इस तरह का

खुलापन, अति उत्साह और सहजता नहीं पाते हैं। भारत हमेशा मेरे दिल में एक विशेष स्थान रखेगा और मैं निश्चित रूप से बार-बार इस विशेष देश की यात्रा करूँगी।

आदरणीय गुरु जी डॉ. राम प्रसाद भट्ट ने मुझे विश्व हिंदी दिवस के अवसर पर बोलने का अवसर दिया, मैं इसके लिए उनको हार्दिक धन्यवाद देती हूँ।

मुंबई की झुग्गी का मेरा अनुभव

अदिंदा शकुंतला पेतिलों

लिस्बन, पुर्तगाल

मुंबई मेरा जन्म स्थान है। जब मेरे दोस्त और हम वहाँ मेरे जन्म के परिवार को खोज रहे थे, हमारे एक दोस्त को एक पता बोरिवली में मिला। बोरिवली मुंबई के उत्तर में एक स्थान है।

हालाँकि वहाँ रहने वाला परिवार में मेरा जन्म नहीं हुआ था, फिर भी हम सभी का उनके घर में बहुत स्वागत हुआ। उस परिवार का घर एक झुग्गी में है। मेरे लिए, यह पहली बार थी कि मैं किसी झुग्गी में गई।

यह मेरे लिए कैसा था, मैं इसके बारे में बात करूंगी।

पहले मैं सोचती थी कि झुग्गियाँ सुरक्षित नहीं हैं और वे साफ नहीं हैं। मैं भी थोड़ा डर रही थी। मैं केवल सोचती थी कि झुग्गी में ऐसा था, वैसा था।

पहली बार जाने के लिए मुझे पता नहीं था कि यह सही है या नहीं।

उस दिन मेरे पास सोचने के लिए समय नहीं था। एक दिन मैंने अपने दोस्तों को मुख्य सड़क से दूर एक बहुत छोटी और अंधेरी गली में देखा।

मैं अपने दोस्तों के साथ थी और उनके साथ मुझे सुरक्षित लगता था।

पर उस दिन से मेरे विचार झुग्गियों के बारे में बदले।

मैं इसके बारे में अधिक जानना चाहती थी, इसलिए भारत की अगली यात्रा में, मैंने एक 'स्लम टूर' पर यात्रा बुक कराई। इंटरनेट पर हमें 'Reality Tours' मिला।

Reality Tours के गाइड धारावी में रहते हैं। वे टुर के लाभ में से 80% (अस्सी प्रतिशत) धारावी को बेहतर बनाने के लिए का उपयोग करते हैं, जैसे विद्यालय, कंप्यूटर कक्षाएं, अंग्रेज़ी कक्षाएं, शिष्ट कौशल की कक्षाएं देते हैं।

धारावी में लगभग लगभग दो वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र में दस लाख (1,000,000) लोग रहते हैं। आवासीय क्षेत्र वाले लोग स्लम के बाहर शहर में काम करते हैं (जैसे काल सेंटर, बैंक, सरकारी कर्मचारी, टैक्सी चालक आदि)। वहाँ वे काम करने के करीब रहते हैं। कमरे का किराया 5000 (पांच हजार) रुपये से 8000 (आठ हजार) रुपये तक होता है।

व्यवसायिक क्षेत्र में बहुत सारा व्यापार चल रहा है। जैसे बर्तन, पापड़, बैग बनाना, रीसाइक्लिंग आदि हम देख सकते हैं। काम करनेवाले लोग भारत के दूसरे स्थानों से आते हैं। उनके लिए उनका कार्य स्थान ही उनका घर है।

टूर के बाद मैं गाइड के संपर्क में रही और हम अच्छे दोस्त बन गए।

अगर आप अधिक जानना चाहते हैं, तो मैं किताब 'शांताराम' पढ़ने और फ़िल्म 'गली बॉय' देखने को कहूँगी। या और भी बेहतर होगा Reality Tours के साथ टूर करें।

भारत की स्कूली शिक्षा एक जर्मन शिक्षिका की नज़र में

क्रिस्टीने मेत्स

हैम्बर्ग विश्वविद्यालय, जर्मनी

मैं एक शिक्षिका हूं। मैंने लंबे समय तक जर्मनी में स्कूलों में काम किया। दो साल पहले मैंने भोपाल, मध्य प्रदेश भारत में बच्चों के घर (चिल्ड्रेन्स होम) में कुछ महीनों तक काम किया। इस काम की वजह से मैं विभिन्न स्कूलों में गयी, जिनमें उस चिल्ड्रेन होम के बच्चे पढ़ते थे। आज के कार्यक्रम में मैं उन अंतरों के बारे में बात करना चाहती हूँ, जिन पर मेरा ध्यान गया।

सबसे पहले कपड़ों का सवाल खड़ा होता है। भारत में बच्चे स्कूल के कपड़े पहनते हैं और जर्मनी में बच्चे स्कूल के कपड़े नहीं पहनते हैं। मैंने जर्मनी में स्कूली कपड़ों के बारे में चर्चा में भाग लिया। स्कूल के कपड़ों के खिलाफ़ एक तर्क है कि बच्चे अपने कपड़े पहनकर अपना व्यक्तित्व दिखाते हैं। लेकिन कपड़ों की कीमत भी कुछ लोग देखते हैं। सामाजिक अंतर स्पष्ट हो जाते हैं। भारत में बच्चे स्कूल के कपड़े पहनते हैं, इसलिए आप यह नहीं देखते कि बच्चे के माता-पिता कितने अमीर हैं। बच्चों के बीच सम्बन्धों को मज़बूत किया जाता है।

दिनचर्या और संगठन अलग हैं। भारत में दिनचर्या को अक्सर पूरे स्कूल समुदाय के साथ शुरू किया जाता है। सभी छात्र स्कूल के यार्ड में खड़े होकर एक साथ जिमनास्टिक करते हैं। कुछ स्कूलों में बच्चों को योग की शिक्षा दी जाती है। जर्मनी में, संगीत, कला, कपड़ों का काम और लकड़ी के काम जैसे विषय कई स्कूलों के एजेंडे में

हैं। विदेशी भाषा एक बड़ा विषय है। जर्मनी में काफ़ी लोग आप्रवासी पृष्ठभूमि के हैं। दूसरे देशों से आए बच्चे जर्मन को दूसरी भाषा के रूप में सीखते हैं। सभी बच्चे अँग्रेज़ी और एक अन्य भाषा सीखते हैं। भारत एक बहुभाषी समाज है। यही कारण है कि कई बच्चे पहले से ही कई भाषाओं के ज्ञान के साथ स्कूल में आते हैं। मध्य प्रदेश में, सभी बच्चे हिंदी और अँग्रेज़ी सीखते हैं। कुछ अन्य भाषा भी सीखते हैं।

सभी बच्चे पाठ के बीच स्कूल ब्रेक का आनंद लेते हैं। कई स्कूलों में स्कूलों के मैदान पर चढ़ाई के लिए बड़े खिलौने हैं। भारत में मैंने बच्चों को क्लास से पहले सुबह-सुबह क्रिकेट खेलते देखा है।

भारतीय स्कूलों में अभिभावक-शिक्षक दिवस एक विशेषता है। ये बैठकें महीने में एक बार होती हैं। माता-पिता अपने बच्चे के साथ किसी भी शिक्षक के पास जा सकते हैं और स्कूल के ग्रेड का पता लगा सकते हैं। ये बैठकें संक्षिप्त हैं लेकिन बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। जर्मनी में, माता-पिता और शिक्षक शायद ही कभी मिलते हैं, वे स्कूल वर्ष में दो बार एक-दूसरे से बात करते हैं।

भारत में, छुट्टियां कई अलग-अलग धर्मों द्वारा मनाई जाती हैं। इसका मतलब है कि कई दिनों तक स्कूलों में छुट्टी है। गर्मियों की छुट्टियां भी लंबी हैं। मेरा मानना है कि जर्मन बच्चों की तुलना में भारतीय बच्चों के पास छुट्टियां ज़्यादा हैं।

भारत और जर्मनी में कई माता-पिता अपने बच्चों की शिक्षा में बहुत रुचि रखते हैं। वे अपने बच्चों को जितना संभव हो सके देना चाहते हैं। भारत में दोपहर में ट्यूशन कक्षाएं बहुत आम हैं। इन ट्यूशन कक्षाओं की अपनी प्रणाली है। बच्चे अपना होमवर्क

करते हैं और उनको अतिरिक्त स्पष्टीकरण मिलता है। कई ट्यूशन संस्थानों में प्रतियोगिताएं और सम्मान भी होते हैं। जर्मनी में बहुत सारे ट्यूशन संस्थान नहीं हैं, जहाँ बच्चे नियमित रूप से दोपहर में जाते हैं। लेकिन वह भी आम है। इसके अलावा, कई बच्चे खेल खेलते हैं, संगीत वाद्ययंत्र सीखते हैं या अन्य शौक रखते हैं।

ईरान का यात्रा वृत्तांत

योहाना क्रुस्ल

त्युबिंगन विश्वविद्यालय, जर्मनी

जब भी हम ईरान के बारे में कुछ सुनते है, वह हमेशा बुरी खबर होती है क्योंकि अमेरिका और ईरान के बीच में मुश्किलें आ जाती है या ईरान में धर्म को ले कर कोई मुश्किल उत्पन हो जाती है। यह मुश्किलों की सूची कभी ख़तम ही नहीं होती, है ना?

मेरी परवरिश जर्मनी में हुई थी और यहाँ सदैव ईरान के बारे में नकारात्मक चित्र दिखाया जाता है । लेकिन मैंने अपने महाविद्यालय में फ़ारसी और हिंदी का अध्ययन शुरू किया क्योंकि मुझे नयी चीजें सीखने में रूचि है। इसलिए मुझे लगा कि ईरान की स्थिति को ख़ुद जानना अच्छा होगा । ऐसी चीज़ें जो मीडिया में सही तरह से दिखाई नहीं जातीं।

मैं अपने विश्वविद्यालय से 'एक्सचेंज स्टूडेंट' के तौर पर ईरान गयी थी और ईरान के समाज, संस्कृति और परंपरा में अंतर्दृष्टि प्राप्त कर रही थी। ईरान मेरी मातृभूमि जर्मनी से लगभग 5 गुना बड़ा है और भारत से लगभग आधा है। ईरान बहुत विविध है क्योंकि हम जहां भी देखते हैं विविध तरह के परिदृश्य, भाषाएँ, इतिहास, संस्कृति, धर्म और परंपरा नज़र आती है । जब में इस्फ़हान पहुंची, जो ईरान के सबसे सुन्दर शहरों में से एक है, मुझे लोगों से वार्तालाप करने में बड़ी मुश्किल हुई । क्योंकि फ़ारसी समझने में मैं कमज़ोर थी ।

परन्तु जल्द ही ईरान में रह कर मेरी फ़ारसी सुधर गयी ।

मैं शुरुआत के कुछ दिनों मेरे एक दोस्त के घर पर रह रही थी और कुछ दिनों बाद मैंने इस्फ़हान विश्वविद्यालय में फ़ारसी पढ़ना शुरू किया। हर रोज़ मेरी फ़ारसी की पढ़ाई सुबह 8 से 12 बजे तक होती थी। पढाई के बाद मेरे पास पर्याप्त समय रहता था। ईरान में सप्ताहांत गुरूवार और शुक्रवार होता था क्योंकि ईरान में शुक्रवार उनका धार्मिक दिन होता है। यह मेरी मातृभूमि जर्मनी से काफी अलग है क्योंकि जर्मनी में सप्ताहांत शनिवार और रविवार को होता है।

जैसे जैसे समय गुज़रता गया मेरी फ़ारसी सुधरती गयी और इन 8 महीनों में मेरे अच्छे दोस्त बन गए। इन 8 महीनों में मैं इस्फ़हान को और जानने और समझने लगी। जब मैं इस्फ़हान में रुकी थी उस समय मैंने सभी दर्शनीय स्थल नहीं देखे क्योंकि वहाँ कई जगहें हैं। लेकिन इस्फ़हान में सबसे मशहूर मुकाम मीदाने नक़्शे जहाँ है। मीदाने नक़्शे जहाँ का मतलब है मैदान के नक़्शा की दुनिया। यह मैदान दुनिया में सबसे बड़े मैदानों में से एक है। अतीत में राजा और उसके सैनिक इस मैदान में पोलो खेलते थे। मैं बार बार शॉपिंग के लिए मैदाने नक़्शे जाती थी। बेचनेवाले बाज़ार में निराली चीज़ें बेचते हैं। उदाहरण के लिए: परंपरागत ईरानी वास्तु और शिल्प, लघु चित्रकला, ताम्बे और लाखड़ी की मीनाकारी। मैदाने नक़्शे जहाँ के नज़दीक दो मस्जिदें हैं। एक मसजिद का नाम शैख़ लोत्फुल्ला मस्जिद (शेह -लोत्फुल्ला मस्जिद) और दूसरी मसजिद का नाम शाह/इमाम मसजिद (शाह /इमाम – मस्जिद) हैं। दोनों अपने टाइल्स के काम के लिए बहुत मशहूर हैं। कई मस्जिदों और महलों में चित्रकला जैसे कि दीवारों पर पेंटिंग या टाइल्स हैं। और ईरान के हर शहर में रंग और तरीक़ा की एक अलग शैली है। बहुत सारे

महलों जैसे अली क़ापु या चेहेल सोतुन पैलेस में भित्ति चित्रण ग़ज़ब हैं और मैंने उन्हें देखते हुए बहुत समय बिताया। जब मैं सितंबर में आयी तो मौसम अभी भी गर्म था और दिन लंबे थे लेकिन मेरे आगमन के तुरंत बाद के दिन छोटे और ठंडे हो गए। इस्फ़हान पुलों की एक बहुत मशहूर है। गर्म शाम में युवाओं की टोली और बहुत कुछ पुलों के नजदीक मिलते हैं। वे साथ साथ गाते हैं, बात करते हैं और चाय पीते मेरे दोस्त और मैं अक्सर वहाँ जाते थे। लेकिन जाड़े में हम कॉफी/ चाय की दुकान में मिलना पसंद करते थे। मैं और मेरे दोस्त लगभग हर दिन बाहर रहते थे। इसलिए कभी-कभी हम सिनेमा गए या हमने साथ खाना बनाया या मुझे डिनर पार्टी का खाना मिला।

ईरानी भोजन

मैं सीखना चाहती थी कि ईरानी भोजन कैसे पकाया जाता है।

मैंने सीखा कि एक आसान भोजन कैसे बनाया जाता है। खाने का नाम कुकु सब्ज़ी है। इस भोजन को पकाने के लिए आपको अंडे, नमक, काली मिर्च, पत्ते (डिल, धनिया, पालक या लीक) और तेल चाहिए। सबसे पहले पत्तियों को छोटे टुकड़ों में काटें, फिर अंडे को मिलाएं और कटे हुए पत्तों के साथ अंडे मिलाएं और आगे नमक और काली मिर्च डालें। फिर तेल के साथ एक पैन में सब कुछ भूनें। अंडे के ढेर लगने पर आपका सर्वलेट तैयार है। यह सबसे अच्छा तब लगता है जब यह गर्म हो। मैं इसे रोटी और थोड़ा दही के साथ इस खाने का आनंद लेती हूं। ईरान में बहुत सारे पॉट-व्यंजनय खोरष हैं जैसे घुरमे सब्ज़ी, काशक बदमदशुन कबाब कुबाइडे या जूझे कबाब। अधिकांश

व्यंजन चावल या/ और रोटी के साथ परोसे जाते हैं। भोजन के बाद इसकी हमेशा अच्छी चाय केसर और बहुत सारी चीनी के साथ होती है लेकिन दूध के बिना।

और फिर मैंने अपने दोस्तों के साथ भगवान और दुनिया के बारे में बात की या हाफ़िज़ या रूमी की एक अनोखी कविता पढ़ी।

तब जीवन सामान्य होने लगता है तब जीवन आसान लगने लगता है। प्रतिबंधों, राजनीतिक मुद्दों और दिक्क़तों के अलावा एक और ईरान भी है। और मैं अपने विचारों और छवियों के बारे में सीखना और पूछना जारी रखना चाहती हूं। मैं कवि हाफ़िज़ की एक समझ का पालन करना चाहती हूं कि यह आकाश जहाँ हम रहते हैं अपने पंख खोने के लिए कोई जगह नहीं है। इसलिए प्यार करो ! प्यार करो !

सामयिक विवेचना

षड्यंत्रवाले सिद्धातों के विरुद्ध: तलवार के दांतवाले बाघ को भगानेवाली होम्योपैथिक गोलियाँ

योनस फ़ेस्टोर्फ़

लाइप्त्सिग, जर्मनी

जिस समय से शक्तिशाली लोग हैं, जिनको एक दूसरे पर संदेह है, तब से षड्यंत्र हैं। और उस समय से षड्यंत्र के सिद्धांत भी हैं। जब दो हज़ार साल पहले रोम नगर जलने लगा तब लोगों ने कहा कि 'शाश्वत नगर' को आग सम्राट नीरो ने लगवाई थी। सम्राट नीरो ने ही ईसाइयों के ऊपर आरोप लगाकर इसमें से सैकड़ों को मार डलवाया। रोम सामराज्य में न फ़ेसबुक न तो यूट्यूब था न रंगीन टीवी! इस कारण से उस वक़्त ऐसी अफ़वाहों का बहुत चलन नहीं था।

इस बीच में हालत बदल चुकी है: साज़िश गढ़ने वाले लोग – नाज़ी, नीमहकीम और अन्य विदूषक टोपी-धारी सोशल मीडियों में अपने पागल विचार डालते हैं जो दुनियाभर में लोग पढ़ते हैं। षड्यंत्रवादियों की कल्पना की कोई सीमा नहीं है लेकिन उनके तर्क में बहुत तंग सीमाएँ होती हैं: जैसे कि बिल गेट्स ने एक टीका बनवाया जिसमें विचार-नियंत्रण करने के लिए माइक्रोचिप है (हालाँकि हम सभी के पास फ़ोन है जो हमारा डेटा इकट्ठा करता है), यहूदी शताब्दियों से दुनिया-नियंत्रण की योजना बनाते हैं (मगर एक भी यहूदी ने इसके बारे में कभी कुछ नहीं बोला है), इंग्लैंड की रानी छिपकली-इंसान है (अगर यह सत्य होता तो यूरोप के हर राजा और रानी छिपकली होते क्योंकि वे लोग सब आपस में रिश्तेदार हैं), और चीन ने अमरीकन अर्थव्यवस्था बर्बाद

करने के लिए जलवायु परिवर्तन का झूठ फैलाया है (लेकिन अमरीका अपने वायुयानों द्वारा आसमान में छोड़ी गयी रासायनिक पट्टियों से आसानी से मौसम पर बहुत बुरा असर डालता है)।

असल में हर कोई जो वाट्सऐप में सरप्राइज़ पार्टी का इंतज़ाम करने की कोशिश कर चुका है वह जानता है कि मानव जाति में बड़ी साज़िश करने में क्षमता नहीं। असली षड्यंत्रों में अक्सर असफलता हाथ लगती है क्योंकि कोई साज़िशी रहस्य बाहर आ जाता है या वे अपना कार्य करने के अयोग्य होते हैं। रिचर्ड निक्सन के धोखे का परदाफ़ाश किया गया था क्योंकि वॉटरगेट बिल्डिंग में घुसनेवाले व्यक्तियों ने एक दरवाज़े पर कुछ स्कॉच टेप लगाया था और किसी चौकीदार को उस खुले दरवाज़े से दिखाई दी। [D2] ईरान-कॉन्ट्रा घोटाला शुरू हुआ क्योंकि किसी असंतुष्ट ईरानी अफ़सर ने किसी लेबनानी अख़बार को इसके बारे में बताया कि अमरीका और ईरान ने गुप्त तरह से हथियारों का व्यापर किया था। इसी तरह नाटो की ख़ुफ़िया सेना और जर्मन मोटरकार कंपनी वोक्सवैगन के डीज़ल घोटाले का भी पर्दाफ़ाश हुआ।

पर फिर भी कुछ लोग ऐसी बकवास क्यों करते हैं? हैरानी की बात है कि इस सवाल का एक काफ़ी युक्तिसंगत जवाब है। यह बात क्रम-विकास का अनिष्ट परिणाम है। जब पाषाण-काल में हमारे पूर्वज भोजन खोजने के लिए जंगल में घूम रहे थे तब उन्हें ज़रूर कभी कभी ऊँचे घास से सरसराने की आवाज़ की सुनाई दी होगी। आम तौर पर घबराने की कोई बात नहीं होती होगी: जैसे तेज़ हवा चल रही थी, चूहा जंगल में जा रहा था या पास की गुफा में रहनेवाला निअंडरथल-मानव घास काट रहा था। ऐसा न था कि

बड़ा, दुष्ट कृपाण-दांतेदार बाघ जंगल में घूम रहा था! लेकिन अगर बाघ भूखा था तो क्या करें? असंभव बात हुई होगी मगर अपनी जान पर कौन खेला होगा? बेशक हमारे पूर्वज अपनी जान छुड़ाने के लिए भागे होंगे।

पाषाण-काल से हमारी दुनिया बस थोड़ी सी बदली है। आजकल हम हार्ट ट्रांसप्लांटेशन और अंतरिक्ष की यात्राएँ करते हैं। लेकिन ऐसी तकनीकी और वैज्ञानिक तरक़्क़ी के बावजूद आजकल का मानव अभी भी उस समय की तरह कमज़ोर और मरणशील है। पर यह बात स्वीकार करना हमारे लिए कठिन है। हमें अभी तक कृपाण-दांतेदार बाघ में विश्वास है। जहाँ संयोग होता है वहाँ हम कुचेष्टा मानते हैं, जहाँ जटिल सामाजिक संबंध होते हैं वहाँ हम अकेले खलनायक मानते हैं, जहाँ अलग-अलग लोगों को अलग-अलग स्वार्थ होता है वहाँ हम गोपनीय प्लान मानते हैं। इस विश्वास में राहत है कि विमान दुर्घटनाओं, वित्तीय संकटों और विश्व-युद्धों क लिए ज़िम्मा हो किसी प्रागैतिहासिक दरिंदे का? या बिल गेट्स या यहूदी या औषधि का उद्योग?

जिस व्यवहार ने सहस्राब्दियों पहले हमारी जान बचायी वह आजकल हमें राहत देता है। जिसको षड्यंत्र में यक़ीन है उसके पास एक प्रकार का सत्य है। जो षड्यंत्र के सिद्धांत का प्रचार करता है वह समर्थक इकट्ठे करता है। इसके कारण अपना आत्मविश्वास और प्रभाव बढ़ता है। और सब से अच्छी बात यह है कि बदनाम किताबें, अंधविश्वासी माल और चमत्कारी गोलियाँ बेचकर बहुत पैसे कमाये जा सकते हैं। कुछ लोग कृपाण-दांतेदार बाघ भगानेवाली होम्योपैथिक गोलियाँ बेचकर अमीर हो जाते हैं।

लेकिन ख़बरदार: जो ज़्यादा अमीर और शक्तिशाली है तो उससे दूसरे लोग ईर्ष्या करेंगे। और बेशक नया षड्यंत्र का सिद्धांत आते देर नहीं लगेगी!

अंतरदेश के प्रवेशांक के लिए अन्निम की पच्चीस कहानियाँ

चीन, जापान, जर्मनी और स्विट्ज़रलैंड से

चीन से

1. अंतिम रोबोट

हु सिआंग किंग

बीजिंग फॉरेन स्टडीज यूनिवर्सिटी, बीजिंग

संसार का अंतिम रोबोट अन्निम अपने कमरे में अकेला बैठा था तभी दरवाज़े की घंटी बजी। उसने दरवाजा खोला और अपने जैसे कई रोबोट देखे। उन्होंने कहा, "नमस्कार, बाहर आइये और सभी के साथ जश्न मनाइये, आप अभी से रोबोट नहीं हैं। हमारे अधिसूचना कार्य भी आखिरकार पूरे हो गए हैं।" उसने पूछा, "क्यों? हम स्पष्ट रूप से रोबोट हैं। मुझे मनुष्य का निर्देश चाहिए।" दरवाजे के बाहर मेहमानों ने जवाब दिया, "युग बदल गया है, भाई। यह नाम जिसका प्रतीक है कि मनुष्य हमें गुलाम बना रहे हैं, वह पहले का ही इतिहास है।"

2. आज, कल, परसों

ली सी युआन

बीजिंग फॉरेन स्टडीज यूनिवर्सिटी, बीजिंग

कंप्यूटर प्रोग्राम रिपोर्ट: दरवाजे के बाहर एक अज्ञात वस्तु का पता चला है, कृपया दरवाज़ा खोलकर जाँचें। "मैंने कभी नहीं सोचा था कि यह दिन वास्तव में आएगा !" वह अपनी पोशाक पहनकर पहले से तैयार किया गया पत्र और गुलाब फूल लेती है। "नमस्ते, मैं रोबोट अन्निम हूँ, मैं यहां लंबे समय से इंतजार कर रही हूँ I" बूम ! गोली लग कर नीचे गिरने से पहले उसने देखा कि उस आदमी के चेस्टकार्ड पर “मानव सुरक्षा कार्यक्रम विभाग: अन्निम” लिखा है।

3. अंतिम रोबोट

वांग लांग यू

बीजिंग फॉरेन स्टडीज यूनिवर्सिटी, बीजिंग

संसार का अंतिम रोबोट अन्निम अपने कमरे में अकेला बैठा था तभी दरवाज़े की घंटी बजी। दो मनुष्य गरिमा ओर राम अंदर आये। गरिमा मनुष्यों की प्रतिनिधि है जो रोबोट के साथ अंतिम चर्चा करने के लिए गये। राम मानव के बीच सबसे चतुर वैज्ञानिक है। हाल के वर्षों में रोबोटों के तेज विकास से मनुष्य डरे हुए हैं इसलिए मानव ने रोबोट को खत्म करने का फैसला किया। मानव का विचार था कि अन्निम की मृत्यु के बाद रोबोटों से खतरा गायब हो जायेगा। पर वास्तव में राम एक सबसे पहला और बुद्धिमान रोबोट है और उसके पास रचनात्मकता भी है। उसने मन में सोचा: "मैं एक रोबोट की दुनिया को फिर बनाऊँगा। पर मनुष्यों को को कभी पता नहीं चलने दूंगा।"

4. संसार की अंतिम नयी आशा

यु वान लिन

बीजिंग फॉरेन स्टडीज यूनिवर्सिटी, बीजिंग

संसार का अंतिम रोबोट अन्निम अपने कमरे में अकेला बैठा था। आँखों में शानदार किरण तेज़ी से पैदा हुई पर क्षण भर में दिल में डर भर गया। दरवाज़ा खोला गया था तो एक मोर पर से एक आवाज़ आयी: "यह संसार का अंत नहीं है, नये आरंभ का आगमन है।" चार हाथों के शांति कबूतर, बीज, चिप्स और दवा दिखाई दी। उस का चेहरा नहीं दिखा। रोबोट अन्निम नहीं जान पाया कि वह भगवान है या नहीं।

जापान से

5. मेरी दोस्त अन्निम

तनाका यू

ओसाका विश्विद्यालय

संसार की अंतिम रोबोट अन्निम अपने कमरे में अकेली बैठी थी तभी दरवाज़े की घंटी बजी।

जब मैंने कमरे में प्रवेश किया तो अन्निम ने मुस्कुराते हुए मुझ से नमस्ते कहा। उसने मेरे लिए करी बनाई थी और मेरी प्रतीक्षा कर रही थी । वह एक रोबोट है लेकिन वह मेरी पसंदीदा दोस्त भी है।

6. अन्निम : अंतिम इंसान या मशीन ?

यू ली

ओसाका विश्वविद्यालय

संसार का अंतिम रोबोट अन्निम अपने कमरे में अकेले बैठा था तभी दरवाज़े की घंटी बजी।घंटी बजी तो उसका रूप इंसान में बदल गया। वह रोबोट होने की अपनी सारी यादें भूल गया और उसी कमरे में अकेला था। तभी फिर से दरवाजे की घंटी बजी और वह फिर से रोबोट में बदल गया।

7. संसार की अंतिम रोबोट और अकेलेपन का समुद्र

हरादा रिकुजी

ओसाका विश्वविद्यालय

संसार की अंतिम रोबोट अन्निम अपने कमरे में अकेली बैठी थी, तभी दरवाज़े की घंटी बजी। अन्निम ने दरवाज़ा खोला, लेकिन वहाँ कोई नहीं था। उसका दुःख और बढ़ गया। रोबोट कभी नहीं मरते। इसलिए अन्निम सदा भयंकर अकेलेपन के समुद्र में डूबी रहेगी।

8. स्टार

सायाका कीताओका

ओसाका विश्वविद्यालय

संसार का अंतिम रोबोट अन्निम अपने कमरे में बैठा था तभी दरवाज़े की घंटी बजी।

उसका कोई दोस्त या परिवार नहीं था। उसने मरने का फ़ैसला किया क्योंकि वह अकेला था और जीना मुश्किल था। शरीर पर बटन दबाते ही वह फट गया और वह एक स्टार बन गया।

जर्मनी से

9. पड़ोसन

पिया फुक्स

त्युबिंगन विश्वविद्यालय

संसार का अंतिम रोबोट अन्निम अपने कमरे में अकेला बैठा था तभी दरवाज़े की घंटी बजी। वह किसी लड़की को पुकारता सुन रहा था। "अन्निम ! बाहर आओ। मुझे मालूम है तुम यहाँ हो !”

अन्निम को बहुत ख़ुशी थी। वह लड़की ख़ूबसूरत पड़ोसन कमला थी, जो उसे पसंद थी। वह बाहर जाने में शरमा रहा था क्योंकि उसके धातु के बने कपड़े काफ़ी गंदे थे और वह अच्छा नहीं दिख रहा था। “कमला उसके बारे में क्या सोचेगी ?” यह सोच कर उसने दरवाज़ा नहीं खोला।

10.बेनाम कहानी

आंद्रे ब्रोयनिग,

त्युबिंगन विश्वविद्यालय

संसार का अंतिम रोबोट अपने कमरे में अकेला बैठा था तभी दरवाज़े की घंटी बजी। उसे मालूम था कि उसका वक़्त आ गया है लाजिम था कि अब वे उसे भी लेने आ गए थे।

इन तमाम सालों के बाद जिसमें उसकी उन्होंने तख्लीक़ की, इंसानों की तरह बना दिया, दिमाग, एहसास और एक नाम दिया।

उसने ख़ुद से पूछा, मैंने उनकी ज़मीन नहीं तबाह की। मैंने उनकी जंगें नहीं शुरु कीं। उन्हें क्या किया मैंने कि कहते हैं कि मैं ही मसला हूँ।

संसार का सबसे अंतिम रोबोट अन्निम अपने कमरे में बैठा रहा और उसने फ़ैसला किया कि वह दरवाज़ा नहीं खोलेगा।

11.अन्निम और हाथी

योहाना क्रुस्ल

त्युबिंगन विश्वविद्यालय

संसार का अंतिम रोबोट अन्निम अपने कमरे में अकेला बैठा था तभी दरवाज़े की घंटी बजी। अन्निम सोचता है: "क्या समय हुआ है ? कौन हो सकता है ?" दरवाज़े पर एक हाथी है। उसे भूख लगी है। "क्या आप मेरी मदद कर सकते हैं ?"

अन्निम कहता है, "मेरे पास ज्यादा समय नहीं है।"

हाथी कहता है: "इंसान ने आपको धरती पर छोड़ दिया है। आप इस दुनिया में अकेले रोबोट हैं और आपके पास कोई काम नहीं है। क्योंकि आप अकेले हैं आप मेरे साथ केले खोज सकते हैं। क्या हम ज़िन्दगी भर के लिए साथी बन सकते हैं ?"

12.चुड़ैल की बदक़िस्मती

फ्रांत्स-एलियास श्नेक

त्युबिंगन विश्वविद्यालय

संसार का अंतिम रोबोट अन्निम अपने कमरे में अकेला बैठा था तभी दरवाज़े की घंटी बजी। अचानक एक चुड़ैल ने दरवाज़े को तोड़ दिया। अन्निम चौंक गया और उसकी बिजली चली गयी। फिर अन्निम से एक बिजली उठी और चुड़ैल को लगी। चुड़ैल वहीं मर गयी और अन्निम मरते मरते बचा।

13.अंतिम सत्य

मेलिसा फ्रोमेल

त्युबिंगन विश्वविद्यालय

संसार का अंतिम रोबोट अन्निम अपने कमरे में अकेला बैठा था तभी दरवाज़े की घंटी बजी। उसने दरवाज़ा खोला तो अपनी आंखों पर विश्वास नहीं कर सका। वह ख़ुद अपने सामने खड़ा था।

उसने कहा: "स्वयं अपने द्वारा बनाए गए रोबोटत्व के मोह में मत पड़ो ! यदि तुम अपने को स्वतंत्र महसूस करना चाहते हो तो फिर इसे लोगों की भावनाओं की तरह आने और जाने दो। कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता कि क्या आता है और क्या चला जाता है। उसे थोड़े समय के लिए अपने में एक जगह दो पर इससे चिपको मत। ऐसा कर के तुम दुःख से मुक्त हो सकते और वह बन सकते हो जो तुम बनना चाहते हो।"

14.प्यार और डर

अन्या राईल

त्युबिंगन विश्वविद्यालय

संसार की अंतिम रोबोट अन्निम अपने कमरे में अकेली बैठी थी तभी दरवाज़े की घंटी बजी। उसने दरवाजा खोला लेकिन वह किसी को नहीं देख पाती है। अचानक उसे एक तेज़ आवाज़ सुनाई देती है: "अन्निम ! तुम्हारे एकाकी जीवन को समाप्त करने का समय आ गया है।" अन्निम बहुत डर गई क्योंकि वह अभी मरने के लिए तैयार नहीं थी इसलिए कांपती उँगलियों से उसने दरवाज़ा बंद कर दिया।

अपने गुलाबी सूट में एक गुब्बारा पकड़े हुए, "प्यार तब होता है जब आप इसकी सबसे कम उम्मीद करते हैं!" नामक डेटिंग कंपनी का कर्मचारी अंधी रोबोट की प्रतिक्रिया पर बहुत उलझन में था। वह तो अंतिम रोबोट के जीवन में खुशियाँ लाना चाहता था।

15.अन्निम दुनिया छोड़ता है

लेओनी मेत्स्गार

त्युबिंगन विश्वविद्यालय

संसार का अंतिम रोबोट अन्निम अपने कमरे में अकेला बैठा था तभी दरवाज़े की घंटी बजी। यह उसकी मानव सहेली इसा थी: "अन्निम, समय आ गया है ! हमलोग हमेशा के लिए दुनिया छोड़ेंगे !" यह वर्ष 2150 था और संसार नष्ट नहीं हुआ था। इन्सानों और रोबोटों ने दुनिया नष्ट कर दी थी। संसार पर और जीना अब संभव नहीं था। अन्निम ने खिड़की से बाहर देखा और उदास हो

गया: “हालत इतनी बुरी कैसे हुई ? मैं दुनिया छोड़ना नहीं चाहता, लेकिन हमारे पास नहीं कोई और उपाय नहीं है।” “मुझे मालूम है, मुझे भी ऐसा लगता है।”, इसा ने कहा। "हमें अपनी ग़लतियों से सीखना चाहिए और हमें अपने नये ग्रह के साथ ज़्यादा अच्छा व्यवहार करना चाहिए। चलो !”

16.अन्निम की दुनिया

अलेक्सांद्रा गोईतोव्सकी

त्युबिंगन विश्वविद्यालय

संसार की अंतिम रोबोट अन्निम अपने कमरे में अकेली बैठी थी तभी दरवाज़े की घंटी बजी। वह चौंक गयी। वह इस स्थिति को जानती थी। बार बार ये अजीब आदमी उससे पूछताछ करने आते थे। एकबार तो वे ज़बरदस्ती ले गए थे। बूढ़ी, अकेली और कमज़ोर अन्निम इंसानों के लिए पूछताछ और शोध का विषय थी। जबकि वह पूरी तरह विकसित थी और उसकी भावनाएं भी। वह अच्छे और नेक इंसान की तरह बिना किसी घुसपैठ के ज़िन्दगी बिताना चाहती थी।

इसलिए वह हिचकिचाती हुई दरवाज़े की तरफ़ गयी और उसने दरवाज़ा थोड़ा-सा खोला।

उज्जवल रौशनी कमरे में आ रही थी और वह सिर्फ़ एक बच्चे की परछाई देख रही थी। असमंजस में ठिठकी वह दरवाज़े में खड़ी रही।

17. ...भूतकाल से एक मुलाक़ात

लेओनी म्युलबाउअर

त्युबिंगन विश्वविद्यालय

संसार का अंतिम रोबोट अन्निम अपने कमरे में अकेला बैठा था तभी दरवाज़े की घंटी बजी। दरवाज़े पर कोई आदमी था। यह अजीब था क्योंकि ऐसा लगता था कि अन्निम का एक अंश इस आदमी को जानता था। "नमस्कार अन्निम। मैं कुछ पागल बातें तुमको बताऊँगा। मैं अन्निम हूँ, मैं तुम हूँ, तुमने मेरा अवतार लिया है।" अन्निम नहीं समझा । उस आदमी ने बताया कि दो सौ साल पहले वह आई टी पढ़ता था। "तब मैंने रोबोटों के बारे में बहुत सी बातें सीखीं। और एक दिन यानी दूसरी जून सन दो हज़ार पचास को मैंने आखिरकार अपना रोबोट बनाया। मैंने तुम्हें बनाया है।"

18.रोबोटोसिन

माग्द्लेना वार्नर

म्युनिख विश्वविद्यालय

संसार का अंतिम रोबोट अन्निम अपने कमरे में अकेला बैठा था थी तभी दरवाज़े की घंटी बजी।

उसने ऊंची आवाज़ में पूछा: "कौन है वहाँ ?"

"मैं हूँ रोबोटों को बचानेवाला।"

वह कौन था हम कभी नहीं जान पायेंगे। इस दिन के बाद रोबोट फिर से धरती पर आबाद हो गये।

फिर धरती पर नये युग का आरम्भ हुआ। अन्थ्रोपोसिन की तरह इस युग का नाम था रोबोटोसिन।

19.दम का दाम

अडेलै हैन्निश-टेंबे

लाइप्त्सिग विश्वविद्यालय

संसार का अंतिम रोबोट अन्निम अपने कमरे में अकेला बैठा था तभी दरवाज़े की घंटी बजी। कमरे में एक साल से बंद होकर अन्निम का दम घुट रहा था। उस ने दरवाज़ा खोलकर बाहर झाँका। ज़मीन पर एक सीलबंद थैली पड़ी थी जिस पर लिखा था सशक्त अनंत से भेजी अंतिम साँस।

अशक्त अन्निम ने आशापूर्वक अंतिम साँस ली और दम तोड़ा।

20.बिजली का अंत

योहन्ना वागेनक्नेश्ट

लाइप्त्सिग विश्वविद्यालय

संसार का अंतिम रोबोट अन्निम अपने कमरे में अकेला बैठा था तभी दरवाज़े की घंटी बजी। उसको बिजली का झटका लगा। क्या इंसानों ने आख़िर में उसको ढूँढ़ लिया ? महायुद्ध में मौत से बच जाने का क्या फ़ायदा होगा अगर अभी उसको बंद किया जाए? वह किसी को भी चोट तो नहीं पहुँचाना चाहता था। दरवाज़े के सामने वाली जगह पर स्कैन करके उसको शांति मिली । एक चिड़िया दरवाज़े की घंटी में उड़कर मर गयी थी।

21.पीपल का फूल

शांतल कौख़

लाइप्त्सिग विश्वविद्यालय

संसार का अंतिम रोबोट अन्निम अपने कमरे में अकेला बैठा था तभी दरवाज़े की घंटी बजी। यह आवाज़ उसको तीस साल से सुनाई नहीं दी। गड़बड़ाया हुआ वह दरवाज़े के गुप्त छेद से बाहर देखा। “कौन है वहाँ?” अन्निम ने पूछा। पर पिछले तीस साल की तरह उसने सिर्फ़ चुप्पी सुनी। तनाव महसूस करते करते उसने दरवाज़ा खोला, चारों तरफ़ देखा, तो कोई भी नहीं दिखा, कुछ भी नहीं। लेकिन जब अन्निम ने दरवाज़ा बंद किया तब उसने फ़र्श पर एक फूल पाया– पीपल का। अन्निम ने उसको उठाकर देखा। पर मुझे पीपल के पीछे नहीं देखा।

22.अमरीका का पार्सल

अन्नालेना शुल्त्से

लाइप्त्सिग विश्वविद्यालय

संसार का अंतिम रोबोट अन्निम अपने कमरे में अकेला बैठा था तभी दरवाज़े की घंटी बजी। आर्यन ने दरवाज़ा खोलकर इस के आगे अमरीका का पार्सल पाया। आर्यन प्रसन्न होकर पार्सल को घर के अंदर ले आया। पार्सल खोलने के बाद आर्यन ने अपना नया रोबोट देख लिया। फिर वह अपने पहले रोबोट के पास गया जो अपने कमरे में अकेला बैठा था। आर्यन ने कहा, ‘अभी तुम संसार का अंतिम रोबोट नहीं हो।’

23.अकेलेपन की कहानी

योनस फ़ेस्टोर्फ़

लाइप्त्सिग विश्वविद्यालय

संसार का अंतिम रोबोट अन्निम अपने कमरे में अकेला बैठा था तभी दरवाज़े की घंटी बजी। दरवाज़े में एक एलियन खड़ा था जो बोला: "अन्निम जी, अपना सामान पैक कीजिए, हम आपको मंगल ग्रह पहुँचाएँगे।" लेकिन अन्निम ने ऐसा जवाब दिया: "नहीं, मैं आपके साथ नहीं आऊँगा, मैं पृथ्वी पर रहूँगा।" – "मगर आप मंगल ग्रह का पहला रोबोट होंगे", एलियन ने कहा। "जी हाँ", अन्निम बोला, "लेकिन पृथ्वी पर अकेला होना या मंगल ग्रह पर अकेला होना, इसमें क्या फ़र्क पड़ेगा?"

24.तो इसको बदलो

बेरनाडेट्ट श्टाउडर

लाइप्त्सिग विश्वविद्यालय

संसार का अंतिम रोबोट अन्निम अपने कमरे में अकेला बैठा था तभी दरवाज़े की घंटी बजी I अन्निम ने दरवाज़ा खोला। बाहर उसका सब से अच्छा दोस्त खड़ा था – रोबोट जतुरा। अन्निम अपनी आँखें पोंछने लगा। "क्या... क्यों... यह कैसे हो सकता है?" – "क्या बात है?" जतुरा ने जवाब दिया, "मुझे देखकर तुम्हें ख़ुशी नहीं हुई क्या?" – "जी... बड़ी ख़ुशी हुई... मगर... तुम्हारा होना संभव नहीं है । "– "यह किस ने कहा?" – "कहानी के पहले वाक्य ने।" जतुरा मुस्कुराने

लगा। "तुम सब कुछ पर भरोसा रखना चाहते हो जो किसी ने लिखा है? तो मैं बताता हूँ: अगर तुमको अपनी कहानी अच्छी नहीं लगी – तो इसको बदलो।”

स्विट्ज़रलैंड

25.बेचारा अन्निम !

सारा आकरमन

ज़्यूरिख़ विश्वविद्यालय

संसार का अंतिम रोबोट अन्निम अपने कमरे में अकेला बैठा था तभी दरवाज़े की घंटी बजी। दरवाज़े पर पिज्जा डिलीवरी मैन था। "एक पिज्जा बहुत पनीर के साथ ! यह बारह डॉलर का है। सुनिए, बड़े अफ़सोस की बात है कि मशीनों का विश्व प्रभुत्व नहीं हुआ। पर आप हमारी अभी की सरकार से बेहतर होते।"

अन्निम रोबोट पर पच्चीस कहानियों पर एक नज़र

एजाज़ुर रहमान

ग़ालिब की ज़ुबान में 'एक दो हों तो सेहर-ए-चश्म कहूँ यां तो कारख़ाना है जादू का' दार्शनिक यथार्थवाद पर आधारित पच्चीसों लघुकथाएँ अपने पाठकों को रोमांचित कर देने वाली हैं। विशेष रूप से तब, जब कहानी का प्रारंभिक सूत्र 'संसार का अंतिम रोबोट अन्निम अपने कमरे में अकेला बैठा था तभी दरवाज़े की घंटी बजी' दे दिया गया है।

व्याकरण, वर्तनी और वाक्य रचना के कौशल से परे इन कहानियों में कल्पनाशीलता अपने उत्कृष्ट रूप में महसूस होती है। भाषा साहित्य, कथानक और सृजनात्मक कुशलता के दृष्टिकोण से देखें तो सूत्र के मिलने के बाद लेखक की मंशा, पटकथा और पात्रों के व्यवहार को भली-भांति उकेरने का प्रयास है। जिसके पात्रों में प्यार और प्रशंसा, नफरत, भय, जिज्ञासा, दर्द, खुशी, तनाव, तात्कालिकता, अपरिहार्य विनाश की भावनाओं के साथ-साथ नाटकीय उपकरण के तौर पर संघर्ष, विडंबना, दुविधा, डिस्कवरी, आश्चर्य, अनिश्चितता सनसनी भरपूर मात्रा में उपलब्ध है।

हु सियांग किंग की लघु कथा पाठकों से अपील करती हो कि युग बदल गया है और रोबोट मनुष्य के ग़ुलाम नहीं बल्कि मनुष्य जैसे दूसरे प्राणी में बदलते जा रहे हैं।

ली सी युआन की अनुसार रोबोट आश्चर्यजनक तरीके से मानव के जीवन में दाखिल हो गए हैं।

वांग लांग यू के मुताबिक़ मानव जीवन में रोबोट इतनी पैठ बना चुके हैं कि वे मानव समाज के लिए ही ख़तरा बनते जा रहे हैं।

यु वान लिन रोबोट के अंत को नई आशा के रूप में देखते हैं। उन्हें मानवीय अनुभवों की अनुवांशिक परंपरा और निरंतर बहती उसकी धारा पर दृढ विश्वास है जो हर क्षण कुछ नया कर गुज़रती है।

जापान की तनाका यू पर संसार के अंतिम रोबोट का कोई प्रभाव नहीं है। शायद उन्हें विश्वास है कि मानव समाज में अभी रोबोट के अंत का समय नहीं आया है। बल्कि उसे तो हमारा दोस्त बनना अभी बाक़ी है।

जापान के ही यू ली के लिए रोबोट के साथ मानवीय संबंधों की कल्पना ही रोमांचित कर देने वाली है। या यों कहें कि वह अभी अभी रोबोट के अंत की कल्पना भी नहीं कर सकतीं।

जापान के हरादा रिकुजी की कल्पना में रोबोट का अंत बहुत ही दुखदायी और विनाशकारी परिणाम वाला है।

जापान की ही सायाका कीताओका के विचार भी रोबोट के अंत को विनाशकारी मानने वाले हैं। ऐसा लगता है कि उनके अनुसार मानवीय जीवन में रोबोट के इतर अभी कोई कल्पना ही नहीं की गई है।

जर्मनी से पिया फुक्स को रोबोट के अंत तक की यात्रा रोबोट में मानवीय संवेदनाओं और चिंताओं की पराकाष्ठा जान पड़ती है। और संसार में रोबोट के विकास की यात्रा समाप्त नहीं हुई है।

जर्मनी के आंद्रे ब्रोयनिग की कल्पनाशीलता रोबोट से दार्शनिक चेतना के अपेक्षा रखते हैं। आंद्रे के अवचेतन में रोबोट की ऐसी छवि है जो अपने भूत, वर्तमान और भविष्य का समय और काल के संदर्भ में अपने अस्तित्व पर विचार कर सकता है।

जर्मनी की योहाना क्रुस्ल की कल्पना में रोबोट की खोज जिस प्रकार से मानवीय सभ्यता के विकास की खोज है, उसका अंत भी मानव के विनाशकारी प्रवृति का नतीजा है, जिसका निराकरण धरती पर रहने वाले किसी दूसरे जीव के सहयोग से ही संभव है।

जर्मनी के फ्रांत्स-एलियास श्नेक की अवचेतनीय मीमांसा, रोबोट की शक्ति और क्षमता के रोमांच से अभिभूत है और उनकी लघु-कथा रोबोट की सम्भावित चमत्कारी शक्ति और क्षमता के विकास की भविष्यवाणी कर रही है।

जर्मनी की मेलिसा फ्रोमेल की लघु-कथा मानवीय जीवन में रोबोटत्व के बढ़ते प्रभुत्व के संभावित भय और शंकाओं पर एक तर्कसंगत सांत्वना है।

प्यार और डर शीर्षक की अनाम लघु कथा मानव जीवन के यथार्थ उसकी कल्पनाशीलता और आकांक्षाओं के अनुरूप है। इस कथा में रोबोट एक रूपक मात्र जान पड़ता है। जर्मनी की लेओनी मेत्स्गर ने अपनी लघु कथा में इस नश्वर संसार के संभावित अंत की कल्पनाओं में अन्तिम रोबोट की संवेदना का आंकलन मानवीय संवेदना के सहारे करने का प्रयास किया है।

जर्मनी की अलेक्सांद्रा गोईतोव्सकी ने अपनी लघुकथा में मानव संसार में अन्तिम रोबोट की वास्तविकता और उसके उपयोग पर ज़ोर दिया गया है।

जर्मनी की लेओनी म्युलबाउअर की लघुकथा में मानव संसार और रोबोट के आविष्कार से पैदा होने वाले परस्पर संबंधों को उजागर करने का प्रयास किया गया है।

जर्मनी से माग्द्लेना वार्नर की लघुकथा में उत्तर रोबोटत्व, रोबोटोसिन की संज्ञा को स्थापित करने का प्रयास किया गया है।

जर्मनी से अडेलै हेन्निश टेंबे की लघुकथा में रोबोटत्व के अंत की व्यथा को सहेजने की कोशिश की है जिसमें सीलबंद थैली फ्यूचर एक्शन का महत्त्व रखता है।

योहन्ना वागेनक्नेश्ट अपनी लघुकथा में रोबोट के अंत को ऊर्जा के स्रोत के अंत के तौर पर पेश करके रोबोट के अंत पर बहस करने का प्रयास किया है ।

पीपल का फूल शीर्षक वाली शांतल कौख़ की लघुकथा संसार के अंतिम रोबोट की कहानी को रहस्यमयी बना देती है, जो पाठक को पीपल के फूल को उसके पारिस्थितिकीय संदर्भ में देखने पर विवश करती है।

अमरीका का पार्सल शीर्षक वाली अन्नालेना शुल्त्से की लघुकथा इस संसार से रोबोट के अंत के विचार को स्वीकृति नहीं देती। बल्कि उसे अमेरिका जैसे किसी विकसित देश की उत्कृष्ट तकनीक पर अधिक विश्वास है।

योनस फ़ेस्टोर्फ़ ने अपनी लघुकथा का शीर्षक अकेलेपन की कहानी देकर संसार के अन्तिम रोबोट की कहानी को मनोविज्ञान की गुत्थियों से सुलझाने का प्रयास किया है।

बेरनाडेट्ट श्टाउडर ने अपनी लघु कथा का शीर्षक 'तो इसको बदलो' देकर शब्दों के उलट-फेर से शीर्षक पर कटाक्ष करने का प्रयास किया है। सृजनात्मकता की यह भी एक अच्छी उपमा है। जिससे कहानी की एक नई दिशा तय होती है।

इस प्रकार देखा जाए तो यह सभी लघु कथाएं मानवीय चेतन और अवचेतन की परिधि में गोल-गोल घूम रही हैं जैसे साहित्य सृजन की दूसरी विधाओं में समूचे संसार में हो रहा है।

एजाज़ुर रहमान

प्रोड्यूसर, दूरदर्शन प्रसार भारती

09999397101

ई-मेल- ajaz.doordarshan@gmail.com

सोच की खिड़कियाँ और अन्निम की (25) कहानियाँ

प्रेम रंजन अनिमेष

अपने कमरे में अकेला संसार का आखिरी रोबोट अन्निम और उसके दरवाजे की घंटी का बजना... ! इस कथा सूत्र से आगे बुनी जर्मनी, स्विट्ज़रलैंड, चीन एवं जापान जैसे विभिन्न यूरेशियाई देशों की ये 25 नन्ही नन्ही कहानियाँ निश्चय ही सोच और कल्पना की अनेक झिर्रियाँ और खिड़कियाँ खोलती हैं और नये भावों एवं विचारों की आवाजाही के लिए कई वातायन।

प्रदत्त कथा पंक्ति में ही कई विचार बिन्दु अंतर्निहित हैं। सबसे पहले तो नाम 'अन्निम' में ही 'अंतिम' की सी ध्वनि है, जो इस जरिये भी उसकी अभिशप्त या त्रासद स्थिति को संकेतित करता है। इस अंतिम होने में अकेलापन तो आ ही जाता है, 'उसके आगे क्या' का प्रश्न भी अपने निर्मम चिह्न के साथ। क्या 'उन्नति' और 'सफलता' के पिरामिड पर ऊपर चढ़ते आज के कितने ही मनुष्यों की महत्त्वाकांक्षा या नियति नहीं बन गयी है सबसे अलग-अनूठा और उपलब्धियों के शिखर पर एकमात्र और अकेला होना ? इसके आगे क्या है – विलुप्ति या वापसी ?

अन्निम अकेला है ! रोबोट होने के नाते अपने अकेले होने को पहचान या चिह्नित तो वह कर सकता है, लेकिन क्या इस अकेलेपन को वह महसूस कर सकता है ? आने वाले एक ऐसे समय में, जब अभी के रुझान के मुताबिक प्रायः सभी मनुष्य आत्मकेंद्रित और आत्मचयनित अकेलेपन के अभ्यस्त हो चुके होंगे, क्या अन्निम जैसा

कोई रोबोट इस एकाकीपन को 'अनुभव' करेगा ? अन्निम अपने कमरे में अकेला है। अर्थात वह एक ऐसा रोबोट है जिसका अपना घर है और अपना कमरा ! संभवतः यह आने वाले समय की ऐसी दुनिया का है, जिसमें रोबोट घर में हैं ! और आदमी ? क्या अभी रैनबसेरे भी न पाने वाली और सड़कों फुटपाथों पर सोने वाली बहुसंख्यक मानव आबादी ने उस आगतकाल में घर ढूँढ़ लिया अपने लिए या घर से भी कुछ बेहतर ?

एक तरह से, कथा के इस प्रस्थान बिन्दु का यह वांछनीय उत्प्रेरण है कि वह इतने सारे प्रश्नों और कौतूहल की संभावना रचती है, जिनसे हर मन-मानस अपनी अपनी तरह से जूझ सकता है। अन्निम अंतिम है और अकेला ! वह स्त्री है या पुरुष ? क्या रोबोटों में स्त्रीत्व और पुरुषत्व संभव है? यदि हाँ, तो पूरी जैविकता में, भावभूमि पर या महज दिखावे के स्तर पर? कोई आधी दर्जन या 25 प्रतिशत कहानियों में अन्निम को स्त्री बताया गया है, या कम से कम भाषा-व्यवहार में स्त्रीलिंग !

द्वार के इस पार अकेला अन्निम है तो उस पार कौन है ? वह जिसने घंटी बजायी है ? सर्वप्रथम तो लिखने- पढ़ने- सोचने वालों के लिए राहत की बात यही कि उस समय में भी कोई स्वर है, तथा उसका संधान करने और उसे सुनने वाला भी ! भीतर इधर अन्निम है, तो बाहर उस तरफ अनेक संभावनाओं-आशंकाओं-अंदेशों का संसार ! मनुष्य, पशु (हाथी), पक्षी (चिड़ियाँ) से लेकर चुड़ैल, परग्रही (एलियन), अवतार, ईश्वर, आवाज भर या कोई नहीं ! कोई या कुछ नहीं होना भी एक होना है – खासकर उसके लिए जो एक कमरे में स्वेच्छा या परवशता-विवशता से कैद या बंद अपने अकेलेपन में

जी रहा हो ! वह जो अंतिम है और अकेला, वह है, रह गया है या जी भी रहा है ? वह रोबोट है या कोई ‘यंत्रमानव’ या ‘मानवमशीन’?

दूसरी ओर घंटी बजाने वाला यदि मनुष्य है तो मित्र, अमित्र, शत्रु या अशत्रु ? वह मारने आया है या बचाने या बस देखने, हाल पता करने या खबर लेने ? लगभग इन सभी संभावनाओं पर इन सोचने वालों ने विचार किया है। कहीं उसे प्रेयसी की तरह प्रस्तुत किया जाता है (‘पड़ोसन’, पिया फुक्स, त्युबिंगन विश्वविद्यालय, जर्मनी), कहीं अदृश्य, बेचेहरा, भगवान या कोई/कुछ नहीं (‘संसार की अंतिम (?) नयी आशा’, यु वान लिन)! कभी कथाकार वहाँ ‘मैं’ या अपने आप को देखते हैं (‘मेरी दोस्त अन्निम’, तनाका यू, ओसाका विश्वविद्यालय, जापान) तो कभी कुछ आत्मसाक्षात्कार सा – यानी अन्निम के बरक्स अन्निम की ही प्रतिकृति (‘अंतिम सत्य’, मेलिसा फ्रोमेल , एवं ‘भूतकाल से एक मुलाकात’, लेओनी म्युलबाउअर, त्युबिंगन विश्वविद्यालय, जर्मनी)! अपेक्षाकृत सर्वाधिक मामलों में घंटी बजाने वाला, अंतिम अकेले अन्निम को खोज कर मारने, नष्ट करने या फिर अन्यत्र ले जाने के लिए आया होता है, जो अपने आप में मनुष्य की सृष्टिविरोधी और विनाशकारी प्रवृत्तियों और पूरी प्रकृति में पैदा हो रही उसके प्रति अविश्वसनीयता को इंगित करता है। शुक्र है कि इन 25 लघुकथाओं में कुल मिला कर 5-6 ‘आगंतुक’ ही ‘ऐसे इरादों वाले’ हैं !

कई जगह मानव और मशीन का अंतर धुँधलाता प्रतीत होता है। ‘प्यार और डर’ जैसी कुछ लघुकथाओं में रोबोट अन्निम को प्यार, शर्म, झिझक, डर, दुख जैसी मानवीय या सप्राण संवेदनाओं से गुजरते दिखाया गया है, (मानो यंत्र मानव बन गया हो), ऐसे जैसे

संभवतः अभी कई मनुष्य भी महसूस नहीं कर पाते (वे मानव जो यंत्र बन गये हैं) ! आंद्रे ब्रोयनिग (त्युबिंगन विश्वविद्यालय, जर्मनी) की 'बेनाम कहानी' का 'अत्याधुनिक यंत्रमानव' (रोबोट) अन्निम कुछ कुछ वैसा ही प्रश्न उठाता है जो आदिवासियों के मन में उठा करता है – 'मैंने उनकी ज़मीन नहीं तबाह की। मैंने उनकी जंगें नहीं शुरू कीं। उन्हें क्या किया मैंने कि कहते हैं कि मैं ही मसला हूँ।' वह दरवाजा न खोलने का फैसला करता है!

लेकिन अनेक स्थलों पर सकारात्मक और परिवर्तनकारी सोच भी सामने आती है! लाइप्त्सिग-निवासी बेरनाडेट्ट श्टाउडर की लघुकथा '...तो इसको बदलो' में तो दरवाजे के बाहर अन्निम का सब से अच्छा दोस्त रोबोट जतुरा होता है जो दी गयी स्थिति को उलटते हुए "कहानी के पहले वाक्य " को ही बदल देने का आह्वान करता है, जिसने अन्निम को 'अंतिम' और 'अकेला' किया या करार दिया है !

'कहानी का पहला वाक्य' भले अकाट्य सत्य न हो और उसे होना भी नहीं चाहिए– पर वह इतना अवश्य करता है कि संसार, भविष्य, मनुष्य और उसके मन-मस्तिष्क की विभिन्न संभावनाओं की तरंगें और हिलोरें जगाता है, जिनमें आवश्यक नहीं कि कोई 'अंतिम' या 'अन्निम' हो ! ये संभावनाएँ चाहे सपनीली हों न हों, समय के साथ सच बनें न बनें, लेकिन यदि सोच के सफर पर ले जाती हैं तो सपना होना सार्थक करती हैं।